कहाँ क्या देखें

समर्पण

उन अज्ञात सैनिकों की स्मृति में जिन्हें उषाकाल ही में यह अनुभव हुआ कि आज उन्हें अपनी मातृभूमि की रक्षा के निमित्त शत्रु से मोर्चा लेना है। उन्हें क्या यह भी मालूम था कि वह प्रयत्न साध्य अपनी विजय को देखने या अनुभव करने से पहिले ही चल बसेंगे ? यह काश्मीर विषयक संग्रह प्रेम पुष्पाहार सादर समर्पित है।

—सम्पादक

काश्मीर वैभव

काश्मीर जैसे प्राकृतिक सुन्दरता से परिपूर्ण प्रदेश ने अपने इतिहास कालमें निश्चय ही ऊंचे विद्वानों को जन्म दिया होगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन दिव्य पर्वतों के मध्य जहाँ कि प्रतिदिन भीनी २ सुरभि युक्त समीर तथा निरन्तर सूर्य के प्रकाश से चमत्कृत मैदान हैं अवश्य ही एक समय शक्ति शाली एवं सौन्दर्य प्रिय मनुष्यजाति का प्रादुर्भाव हुआ होगा। जिस प्रकार सुन्दर ग्रीसने अपने रंगबिरंगे पर्वतों, अपने नृत्य करते हुए सागरों और अपने स्वच्छ निर्मल आकाश के सहयोग से शोभापूर्ण मनोहर ग्रीक जाति को जन्म दिया था। फिर भी तुलना में ग्रीस से काश्मीर ज्यादा सुन्दर है यद्यपि स्वच्छ निर्मल आकाश और चमकता हुआ सूर्य दोनों के एक दूसरे के समान हैं तथापि काश्मीर के विविध रङ्ग के पर्वत बर्फ से ढके हुए सूर्य के प्रकाश से स्फटिक मणिकी भांति ग्रीस के सौभाग्य में उतने नहीं है। यदि ग्रीस के पास समुद्र है तो काश्मीर के पास भी ग्रीस के समुद्रों से कहीं अधिक विशाल काय झीलें, और नदियां हैं। काश्मीर में बहुत अधिक प्रकार के प्राकृतिक दृश्य अद्भुत जंगल व मैदान, खुले हुए पहाड़ व घाटियां हैं जो कि संसार के किसी भी देश में काश्मीर के वातावरण और जल वायु के साथ नहीं मिलते। संसार के एक बहुत बड़े हिस्से में यात्रा करने वाले लोग प्रायः काश्मीर की तुलना स्वीटजरलैंड से किया करते हैं। इसमें कोई सन्देह भी नहीं कि झीलों और पर्वतों के सुन्दर संयोग से स्वीट-

जरलैण्ड का स्थान काश्मीर से किसी अंश में कम नहीं है परन्तु स्विटजरलैण्ड अत्यल्प सीमामें यह काश्मीर की अपेक्षा एक बहुत छोटे आकार का है। वहां काश्मीर के जैसे बहुत विशालकाय बर्फों से ढके हुए पर्वत देखने को नहीं मिल सकते वहां पर कोई भी ऐसा लम्बा चौड़ा मैदान पर्वतों के मध्य समुद्रतल से ६००० फुट की ऊंचाई पर नहीं मिल सकता।

स्विटजरलैण्ड की बड़ी से बड़ी तराई काश्मीर की छोटी से छोटी तराई के बराबर निकलेगी जबकि बर्फों के पहाड़ों से घिरी-हुई तराई एक सफेद चीनी के प्याले की तरह प्रतीत होती है। यदि प्याले को आधा चाय से भर कर देखा जाय तो ठीक उसके सफेद चमकते हुए किनारे काश्मीर घाटी के चारों तरफ फैले हुए बर्फीले पहाड़ों की उपमा बन सकते हैं। इसके अतिरिक्त काश्मीर की पृष्ठ भूमि में दीखने वाले संसार के सबसे ऊंचे पहाड़ भी स्विटजरलैण्ड के पास कहां है।

जिन लोगों ने सौभाग्य से ग्रीस अथवा स्विटजरलैण्ड तथा काश्मीर दोनों को देखा है उनके ऊपर काश्मीर की सुन्दरता का एक गहरा और स्थायी प्रभाव पड़ता है। केवल यदि शाल को ही ले लिया जाय जावे जिसके लिए काश्मीर संसार प्रसिद्ध है तो यह भली प्रकार प्रकट है कि वहां के निवासी कितने उन्नत अवस्था के कलाकार व शिल्पी हैं जो कि आकृति व सौन्दर्य युक्त रंगोंके उपासक हैं। बड़े लोगों के लिए जिस प्रकार केवल शाल जैसी उत्कृष्ट कलापूर्ण कृतियां ही सन्तोष नहीं देसकती काश्मीर के लोगों ने सभी दिशाओं में अपनी उन्नति के सीमा सूचक चिन्ह छोड़े हैं। सारी काश्मीर तराई में अनेकों स्थलों पर स्थापत्य कला के चमत्कार से पूर्ण भग्नाव शेष विद्यमान हैं जिनमें मिश्र देश की

मजबूती सादगी और पायेदारी स्पष्ट झलकती है। इसी को पुरा-तत्व विज्ञान वेत्ताओं ने काश्मीरी जनों की भवन बनाने की अद्भुत योग्यता को देख कर बड़ी प्रशंसा की है। प्राचीन भवनों के स्तम्भ और उनके ऊपर बने हुए महराब एवं बहुत ऊँचे मिनार उनकी विभिन्नता के सूचक हैं न केवल भवन ही बल्कि प्राचीन कालकी सड़कें नहरें और भिन्न अन्तर्वृत्तियों को दर्शाने वाले कला पूर्ण स्टैचू तक सारे काश्मीर में फैले पड़े हैं। जिनके द्वारा एक जीवित जाति अपना स्थायी प्रभाव छोड़ा करती है। यही नहीं काश्मीरी लोग अपने इतिहास और साहित्य की कृतियों के भी कलात्मक नमूने छोड़ गये हैं जो कि किसी भी उन्नत जाति के लिए उचित हो सकते हैं। काश्मीर भूमि में घुसते ही यात्री को अनेकों स्थानों पर इन भग्नावशेषों का दर्शन होगा जिसमें काश्मीर के रहने वालों की स्थापत्य कला की उत्कृष्टता का भली भांति परिचय हो सकता है। परन्तु केवल एक मार्त्तण्ड मन्दिर ही का उदाहरण पाठकों की सेवा में उपस्थित किया जाता है जिसको इतिहास में सिकन्दर मूर्ति भञ्जक ने बड़े कठिन प्रयत्न से अग्नि लगा कर नष्ट करा दिया था। इस मन्दिर के लिये काश्मीरी कला-कारों ने जो स्थान चुना था वह लोगों का कहना है कि संसार के सबसे प्रसिद्ध भवनों के अपने २ स्थानों से अधिक सुन्दर और अच्छे स्थान पर स्थित है। लेखक को भी उस स्थान के देखने का दो बार सौभाग्य मिला है कम से कम ताजमहल के स्थान से तो अधिक ही अच्छा है विदेशों के विषय में नहीं कहा जा सकता। इस मन्दिर के भग्नावशेषों के समीप खड़ा होकर मनुष्य अपने समक्ष मेज पर रखे हुए नक़शे की तरह सारी काश्मीर तराई को देख सकता है दोनों तरफ से बर्फीली पर्वत मालाएं उसे घेरे

हुए हैं। जिनके स्पष्ट दीखते हुए ढलानों ने काश्मीर को बनाया है। स्वयं मन्दिर की बनावट भी उसकी प्रशंसा के लिए पर्याप्त थी। इसी से काश्मीर निवासी कलाकारों के मस्तिष्क का अध्ययन किया जा सकता है। कोई प्राकृतिक सुन्दरता का पुजारी ही ऐसे उत्तम स्थान को मन्दिर बनाने को चुन सकता था। मन्दिर के निर्माण करने में विशेष रुचि रखने वाले काश्मीरी लोग अवश्य ही धार्मिक वृत्ति के लोग होंगे यह तो मन्दिरों के आधिक्य से ही स्पष्ट विदित है। क्योंकि जितने भी भग्नावशेष प्राप्त हैं वह महलों या अन्य किसी प्रकार के न होकर प्रायः मन्दिर और धार्मिक स्थान ही हैं अब यह निर्णय करना है कि काश्मीर के रहने वाले स्वयं काश्मीर भूमि की उपज हैं या बाहर से आये हुए विजेता गण अथवा विदेशी प्रभाव को ग्रहण करके अपने अनुकूल बनालेने की योग्यता रखने वाले भारत देश के रहने वाले! परन्तु यह एक सौभाग्य की बात है कि काश्मीर के रहने वाले ही एक विद्वान् ने अपने परिश्रम से लिखे हुए एक प्राचीन इतिहास को लोगों की सरलता के लिए छोड़ा है। जिससे कि हम यह निर्णय सहज ही में कर सकते हैं कि ज्यादा अंश काश्मीर की उन्नति का भारत और ग्रीस से सम्भव है वहां पहुँचा हो। यहां पर यह भी अनुमान करना इतना कठिन नहीं है कि यदि काश्मीरी लोग उन ऊंचे २ पर्वतों की श्रेणियों से संसार से अलग न किए होते तो शायद वे ग्रीस देशवासियों से भी कुछ अधिक प्राचीन काल में संसार के इतिहास पर अपना प्रभाव छोड़ जाते। परन्तु यह भी कम सुविधा और सौभाग्य की बात नहीं की काश्मीर भूमि की सुन्दरता संसार के लोगों की आकर्षण भूमि रही है जिसके फल स्वरूप सदैव ही बाहर के यात्रियों का वहां प्रभाव पड़ता रहा है।

सबसे प्रथम नियमित राज्य व्यवस्था प्रमाणित इतिहासकारों के कथनानुसार ईसापूर्व २४५ में अशोक महान का शासन था। इस समय अशोक का राज्य बंगाल से दक्षिण तक और पश्चिम में अफगानिस्तान तक था। काश्मीर में इस उत्साही बुद्ध धर्मानुयायी शासक के राजचिन्ह अनेकों स्थानों से पुरातत्व विभाग को प्राप्त हुए हैं। क्योंकि अशोक के काल में उत्तरी भारत के निवासी प्रधान रूप से बुद्ध धर्मावलम्बी थे। अशोक ने इसका संगठन राजधर्म मानकर किया था। इसी समय ग्रीक सेनापति सिकन्दर भी ३२७ ईसापूर्व भारत पर आक्रमण करके पञ्जाब में अपना क्षणिक शासन बनाकर फिर सिन्ध नदी के मुहाने के रास्ते वह वापस लौट गया था। इसी कारण पञ्जाब और काश्मीर में ग्रीक तथा बुद्ध सभ्यता एवं कला के अनेकों प्रभाव दीख पड़ते थे। अशोक ने उस समय के प्रचलित ब्राह्मण धर्म को काश्मीर से जड़मूल से नष्ट कर दिया था। इसी कारण काश्मीर में आज भी ब्राह्मण संस्कृति बुद्ध संस्कृति एवं मध्य पूर्व के देश ग्रीक और मिश्र की एक गहरी छाप हरएक वस्तु में देखने को मिल सकती है।

काश्मीर के इतिहास में अगला प्रधान शासक कनिष्क था यह कनिष्क भारत से उत्तर में स्थित सिक्याङ्ग (चीनी तुरकिस्तान) के किसी वंश का था। और यह उस समय काश्मीर पर राज करता रहा जबकि बुद्ध धर्म भारत तक ही सीमित न रहकर चीन जापान और एशिया के बहुत से देशों में फैलता जा रहा था। कनिष्क का राज काल ४० वर्ष ईसाबाद माना जाता है। प्रसिद्ध नागार्जुन नामका बोधि सत्व भी इसी

के काल में था और कनिष्क की राजधानी के भग्नावशेष आज कल काश्मीर के (Water Reservoir Harwan) के पास डल झील के किनारे आज भी देखे जा सकते हैं। काश्मीर में बुद्ध धर्म इसी कालमें अपने अन्तिम उत्कर्ष को पहुँचा। इसके बाद ही तुरन्त दोबारा ब्राह्मण धर्म का पुनरुद्धार हो गया था। यह सब कुछ धर्म की प्रतिक्रिया थी जिस प्रकार स्वयं बुद्ध धर्म में इसकी प्रतिक्रिया थी। इसके ५ शताब्दी बाद तक की विशेष घटनाओं में ५१५ ईसाबाद मिहिराकुल एक सफेद हूण जाति के शासक का काल था। यही मिहिरा कुल बुद्ध धर्म के नाश का विशेष कारण था। इसकी आकृति मात्र से लोग मृत्युको आया समझते थे। सुनते हैं कि .गिद्ध, कऊए और चीलें इस आशा में सदैव इसके साथ रहती थीं कि कहां हमारा भोजन इसके निर्दयी हाथों से प्राप्त होगा। इसका शासन काबुल से लेकर विन्ध्याचल के ऊपर के सारे भारत में था इसी मिहिरा कुल के शासन काल में प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्यूनसांग भारत की यात्रा को आया था। काश्मीर को इस यात्री ने दो वर्ष के एक लम्बे काल तक निवास करके देखा था।

अब तक काश्मीर के शासक प्रायः बाहर से ही आये थे। इसके पश्चात् काश्मीर के इतिहास में काश्मीर भूमि के ही पैदा हुए राजा ललितादित्य का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है इसी के समय काश्मीर उन्नति के उच्चशिखर पर पहुँच चुका था। क्योंकि आज तक काश्मीर किसी न किसी बड़े राज्य का अङ्ग ही बनकर रहा था। ललितादित्य ने काश्मीर राज्य का पृथक् अस्तित्व स्थापित किया। साथही जिस प्रकार बाहर के

विजेताओं ने काश्मीर आकर शासन किया अब काश्मीर के शासक अपने पड़ोसी प्रदेशों को विजय कर के शासन के कार्य में लग गये। ललितादित्य का शासनकाल ६६६ से ७३६ ईसा पश्चात् बताया जाता है। यहां पर इस बातका उल्लेख करना अप्रसंगिक न होगा कि इस समय इस्लाम धर्म के जन्म दाता मोहम्मद को मरे हुए केवल सौ ही वर्ष व्यतीत हुए थे अतः इस्लाम यद्यपि अपनी जन्म भूमि से पश्चिम की ओर कुछ फैला भी था तथापि भारत की तरफ उस समय उसका कोई किसी तरह का प्रभाव न था। ललितादित्य ने अपने ३० वर्ष के छोटे से शासन काल में पन्जाब का सारा पहाड़ी प्रदेश तिब्बत और उत्तर में बदखशान तक अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया था। अब उसने यह धारा बदल दी थी कि काश्मीर पर बाहर के शासक आकर शासन करें। अबतो काश्मीरी शासक अपनी सत्ता फैलाने लगे थे। इसके समय से पूर्व और आज तक काश्मीर ने उस उत्कर्ष को प्राप्त नहीं किया। मार्तण्ड का विशाल काय सुन्दर मन्दिर भी इस ललितादित्य ने ही अपने शासन काल में बनवाया था। ललितादित्य के बाद उसके वंशजों के हाथ में शासन गया जोकि छोटे मोटे निजी स्वार्थों को ध्यान में रख शासन को कमजोर करते चले गये। इस प्रकार लग भग १०० वर्ष की अव्यवस्थित राज्यव्यवस्था के पश्चात् ८५५ में अवन्तिवमर्न नाम के सुयोग्य शासक का समय आता है। यद्यपि इस शासक ने बाहर किसी देश को अपने राज्य का अंग बनाया हो ऐसा सुनने में नहीं आता तथापि अपने से पूर्व सौ सवासौ वर्षों से बिखरी हुई शासन व्यवस्था को संगठित करने का कार्य अवन्तिवर्मा ने बड़ी योग्यता से किया आर्थिक तथा राजनैतिक जो भी कठिनाइयां

७२४॥

पूर्व के शासन काल में आई थी उन सभी से इसने अपन सुप्रबन्ध एवं सुव्यवस्था के द्वारा उद्धार कर दिया था। अवन्तिवर्मा के शासनकाल के चिन्ह भी आज तक उसके नाम पर बसे हुए नगर तथा खण्डहरों से श्रीनगर से १६ मील पूर्व में पहलगांव रोड पर मिलते हैं अवन्तिबर्मा का शासनकाल ८८३ तक रहा उसके बाद के कई राजाओंने काश्मीरका बड़ी योग्यतासे शासन किया। यहां तक कि सीमाप्रान्त का हजारा पञ्जाब का कांगड़ा और गुजरात भी काश्मीर राज्य के अन्तर्गत चले गये थे। अब तक यह एक बड़ी रोचक विचार धारा रही कि काश्मीर से बाहर विजय की ही अभिरुचि बनी रही बाहर से काश्मीर विजय की नहीं।

परन्तु इसके बाद का इतिहास एक बड़े कौटुम्बिक संघर्ष की कहानी रहा है अर्थात् कभी राजा के भतीजे को राज्य मिलता देख उन्होंने एक दूसरेको मारने का प्रयत्न किया तो कभी स्वयं मन्त्रिगणों के मनमें कुटिलता के भाव जागृत हुए इस प्रकार ही बहुत समय तक शासन चलता रहा। जोकि बाद में १०१५ में महमूद गजनी के भारत पर आक्रमण करने के समय काश्मीर की अवस्था थी, वह वैसी ही समझनी चाहिए जैसी कि भारत की अंग्रेजों के आने से पूर्व। अब दोबारा काश्मीर के शासक बाहर से आने आरम्भ हो गये थे। परन्तु काश्मीर भूमि के सौभाग्य तथा पहाड़ी मार्गों की कठिनाईके कारण यह प्रयत्न सफल न हुए। काश्मीरके १५८६ में मुगल राज्य का अंग बनने से पूर्व ५०० वर्ष के इतिहास में जो मुख्य शासक शासन करता रहा उसका नाम हर्ष था। यह बाद के हिन्दूराजाओं में काश्मीर का सबसे अधिक प्रभावशाली राजा था। इसके काल में काश्मीरी कला कौशल व साहित्य को

बहुत उन्नति मिली थी। यह भी काश्मीर राज्य का बाहरी प्रभाव बढ़ाने में पर्याप्त सफल हुआ था। परन्तु राज्य में षड्यन्त्र कारियों ने हर्ष को सफल न होने दिया और परिणाम यह निकला कि अन्त में इसकी हत्या तक करा दी गई। हर्ष के उत्तराधिकारी वेकुल राजा का भी अन्त बहुतसे घरेलू संघर्ष के पश्चात् हर्ष जैसा ही हुआ। वेकुल के बाद के मुसलमान समय के आने से पूर्व के काश्मीर के शासक इसी प्रकार कौटुम्बिक झगड़ों के शिकार होते चले गये। ऊपर का सारा वर्णन उस समय विद्यमान कल्हण कवि की राजतरंगिणी में मिलता है अतः इसकी सच्चाईमें सन्देह की आवश्यकता नहीं रहती।

भारत पर सर्व प्रथम मुसलमान आक्रमण गजनी के मोहम्मद का १०१५ में हुआ था उसके बाद २०० वर्ष तक किसी तरह टूटी फूटी हालत में काश्मीर का शासन हिन्दू राजाओं के हाथ में रहा। १३३९ में शाहमीर राजा उदियान देव का मन्त्री था जिसने कि विश्वासघात करके अपने आश्रयदाता राजा की हत्या करके अपने को काश्मीर का शासक घोषित कर दिया था। इसके विवरण से मालूम होता है कि इसके शासन काल में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। मुसलमानों की भारत विजय का प्रभाव बढ़ता जाता था जिसने कि मुसलमानों को उत्साह पहुँचाया। इसके बाद एक, काश्मीरी जनता का प्रिय शासक १४२० से १४७० तक काश्मीर का शासन करता रहा। जिसको आज तक काश्मीरी लोग श्रद्धा के साथ याद करते हैं इसका नाम था जैनुल अबादीन। उसके बाद मुगल काल शुरू हो जाता है।

काश्मीर का इतिहास

काश्मीर का इतिहास क्रमशः काश्मीर की स्थिति से लेकर मुगल बादशाह अकबर के काल १५८८ तक भिन्न २ पुस्तकों के रूप में किन्तु एक दूसरे के आगे के वर्णनों से युक्त ४ रचयिताओं द्वारा लिखा गया है इन चारों विद्वानों ने उस समय की प्रचलित भाषा संस्कृत को ही अपने वर्णनीय विषय का माध्यम बनाया है। आरम्भ से काश्मीर भूमि की उत्पत्ति दिखाते हुए महाराज संग्राम देव के काल १००६ तक का वर्णन कल्हण कवि द्वारा लिखित राजतरंगिणी में मिलता है। इसके बाद ही भारत पर मुसलमानों के आक्रमण होने आरम्भ होगये थे जिसके परिणाम स्वरूप एक दो हिन्दू राजाओं को छोड़कर मुसलमान शासकों के ही आधीन काश्मीर को भी चला जाना पड़ा। राजतरंगिणी के आगे के इतिहास को जोनराज नामक विद्वान ने १४७० ईसा सन् जैनुलअबादीन शासक के काल तक पहुँचा दिया है। इसी प्रकार श्रीवर ने उसको १४८५ तक पूर्ण कर दिया है। चौथा वर्णन प्रज्ञभट्ट द्वारा लिखित राजावली पटक है जो कि १५८८ अकबर के समय तक का इतिहास पूर्ण कर देता है। काश्मीर की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए कल्हण अपनी राजतरंगिणी में लिखता है कि सर्व प्रथम काश्मीर भूमि एक बड़े भारी जलाशय (झील) के रूप में थी जोकि चारों तरफ से पर्वतों से घिरी हुई एक निवास के अयोग्य जगह थी। जिसको ब्रह्मा के पुत्र मरीची और उनके पुत्र महर्षि कश्यप ने निवास के योग्य बनाने के उद्देश्य से बारा-मूला (बाराह मूला के समीप पर्वतश्रृंखला को काटकर पानी

को बाहर निकालने का प्रबन्ध किया। सारी भूमि के जल निकलने से सूख जाने पर महर्षि कश्यप ने ब्राह्मणों को लाकर इस जगह पर बसाया। बहुत काल तक स्वतन्त्र रूप से यह ब्राह्मण विद्वान काश्मीर भूमि में निवास करते रहे। इसके पश्चात् अन्य भारत के प्रदेशों की तरह काश्मीर में सर्व प्रथम ब्राह्मणों में से कुछ राजाओं ने शासन भार अपने कन्धों पर लिया और उसके बाद कुछ क्षत्रिय राजाओं के आधीन काश्मीर चला गया। चीनी यात्री ह्यूनसांग ६ वीं शताब्दी के काश्मीर बर्णन में काबुल पंजाब, एव कन्धार (गान्धार) प्रदेश को भी काश्मीर के अन्तर्गत ही लिखता है। इन सब प्रदेशों का ही एकत्र नाम काश्मीर उसने लिखा है। राजतरंगिणी के अनुसार काश्मीर के रहने वाले क्षत्रिय नाग कहलाते थे जिसका अर्थ सर्प संस्कृत में और चश्मा अर्थात् प्राकृतिक पानी का स्रोत काश्मीरी भाषा में आज भी प्रयुक्त होता है। इसके अतिरिक्त काश्मीर के पड़ोस में रहने वाली क्षत्रिय जातियां गन्धार, खासी, और दारदी नाम से प्रसिद्ध थीं सम्भव है खासी क्षत्रियों ने ही इस भूमि को काश्मीर नाम दिया हो।

महा भारत में भी भारत के उत्तर पश्चिमी भागों में रहने वाली क्षत्रिय जातियों में इन्हीं उपर्युक्त जातियों का वर्णन मिलता है।

अशोक महान् के राजत्व काल ईसापूर्व २४५ में भारत से एक बुद्ध संघ भी काश्मीर और गन्धार में आया था। परन्तु बुद्ध धर्म की सफलता अशोक के जीवित रहने तक ही रह सकी और उसकी मृत्यु होते ही पुनः काश्मीर में ब्राह्मण धर्म फैल गया

था। इतना होते हुए भी एक बार फिर कुशान राजा हविष्क जुष्क, और कनिष्क के समय ईसा सन् के प्रारम्भ में बुद्ध धर्म का पुनरुद्धार होगया था। उसके बाद कई सौ वर्ष तक दोनों धर्म एक साथ काश्मीर में पनपते रहे। तथापि प्रमुत्व उस समय भी हिन्दू धर्म का ही रहता रहा। इसी हिन्दू व बुद्ध काल में ५ से १० शताब्दी तक विशेष रूप से हिन्दू मन्दिरों का निर्माण हुआ। जिसके खण्डहर आज भी सारे काश्मीर में देखने को मिलते हैं। इसी काल में चीनी यात्री भी भारत भ्रमण को निकले थे। दो चीनी यात्री टोपेन्ग और सुन्ग पुन के वर्णनों में तो काश्मीर को 'शीमी' देश के नाम से लिखा पाया जाता है। इनके बाद ही ६वीं शताब्दी में ह्यूनसांग प्रसिद्ध चीनी यात्री को काश्मीर के महाराजा को हाथी शिक्षण के निमित्त काश्मीर में दो वर्ष रहना पड़ा यह बात सुनी जाती है। ह्यूनसांग ने काश्मीर को पूर्णरूप से देखने का प्रयत्न किया था। वह बारामूला की तरफ से प्रविष्ट होकर पीरपञ्चाल की तरफ से बाहर निकला था।

उपर्युक्त वर्णन के अनुसार यद्यपि मुसलमान शासकों का भारत में १० शताब्दी के बाद से ही प्रवेश होने लगा था तथापि ईसासन् की (१२६४) तक हिन्दू राजा उदियान देव काश्मीर का शासन करते रहे। जिनको कि उनके मुसलमान मन्त्री अमीर शाह ने कत्ल करके अपना नाम सम्सुद्दीन रखकर उनका शासन अपने हाथों में लेलिया था। बस यहीं से काश्मीर में हिन्दू राजाओं का अन्त होजाता है। शम्सुद्दीन के शासन काल में ही, सिकन्दर (मूर्तिभञ्जक) का भारत पर आक्रमण हो गया था।

यही ईसा की १४ वीं शताब्दी तक हिन्दूओं को नाना प्रकार कष्ट देकर प्रबल विरोध करके उनके मन्दिरों को तुड़वाकर काश्मीर पर शासन करता रहा। इसी प्रसिद्ध सिकन्दर के शासन काल में तैमूर लंग ने भारत पर आक्रमण किया था। जिसके सामने सिकन्दर ने भी घुटने टेक दिये थे। साधारण रूप में परिवर्त्तनों के साथ साथ १५८८ में पूर्ण रूप से काश्मीर मुग़ल शासकों के हाथमें आगया था' आलमगीर के साल तक मुग़लोंके आधीन रह कर पुनः काश्मीर दुर्रानी शासक अहमद शाह दुर्रानी के द्वारा विजित होकर १६५६ में अफ़ग़ानों के अधिकार में चला गया था।

जब तक कि सिक्खों के प्रथम महाराजा रणजीत सिंह ने काश्मीर को अपने अधिकार में नहीं किया वह १८१८ तक अफ़-ग़ानों के अधिकार में ही रहा। १८१६ से १८४ तक काश्मीर में महाराजा रणजीत सिंह के आठ गवर्नर कभी हिन्दू और कभी सिख नियुक्त होते रहे किन्तु अन्त के दो मुसलमान थे जिनमें शेख इमामुद्दीन के समय पहिली सिक्ख लड़ाई अंग्रेजों से आरम्भ हो गई थी। जिसने सिखों के सन्धिद्वारा अंग्रेजों से नये सम्बन्ध निश्चित कर दिये थे। जम्मू के पहाड़ी प्रदेश का रहने वाला गुलाबसिंह एक डोगरा राजपूत जो कि एक साधारण परिवार का व्यक्ति था अपने सैनिक चातुर्य के कारण महाराजा रणजीत सिंह द्वारा जम्मू का जागीर दार बना दिया गया था। १८४६ की सिक्ख पराजय हो जाने पर लाहौर की सन्धि में जब अंग्रेजों ने १॥ करोड़ रुपया अपनी क्षतिपूर्ति के लिए सिख —महाराजा से मांगा तो कुंवर दीलिपसिंह तो बालक था लाहोर। दरबार के अधिकारियों ने इतनी बड़ी

धनराशि को एक दम दे सकने में अपनी असमर्थता प्रकट की ओर व्यास से लेकर सिन्ध नदी के बीच का सारा पहाड़ी प्रान्त और काश्मीर एवं हजारा का जिला १ करोड़ रुपये के बदले में अंग्रेजों को सौंप दिया गया। इस समय के कूटनीतिज्ञ वाइसराय लार्ड हार्डिंग ने भी यह उचित समझा कि जबतक हम लोग बालक दीलिप सिंह की तरफ से पञ्जाब में शान्ति पूर्वक शासन करेंगे क्यों न गुलाबसिंह जम्मू के जागीरदार को काश्मीर का इलाका शान्ति स्थापन के लिए दे दिया जावे। क्योंकि गुलाबसिंह ने अंग्रेजों की आपत्ति के समय मदद भी की थी और साथ ही काश्मीर जिस ऋण के बदले में प्राप्त हुआ था उसे भी गुलाब सिंह चुकाने की सामर्थ्य रखता था। अतः ७५ लाख रुपया लेकर एक पृथक् सन्धि द्वारा काश्मीर १८४६ में गुलाबसिंह को दे दिया गया। और गुलाबसिंह का पृथक् अस्तित्व भी अंग्रेजों ने मित्रता के नाते मान लिया। इसके पश्चात् भी गुलाबसिंह ने अपनी रण कुशलता से जम्मू काश्मीर के उत्तर पूर्व में स्थित लद्दाख प्रान्त को तिब्बत से जीत कर और स्कर्दू को वहां के मुसलमान शासक से जीत कर काश्मीर में मिला लिया था। इस प्रकार केवल १० ही वर्षों के प्रयत्न से गुलाबसिंह ने काश्मीर से भी ज्यादा भूमि पर अधिकार कर लिया था। महाराजा गुलाब सिंह की मृत्यु १८५७ ई० वी में हो गई और उनके पुत्र महाराजा रणबीर सिंह ने सिंहासन सम्भाल लिया। १८८५ तक शासन करने के बाद उनके अगले उत्तराधिकारी महाराजा प्रतापसिंह हुए जिनकी अवस्था उस समय ३५ वर्ष की थी। प्रतापसिंह के ही शासन काल में गिलगित उत्तर पश्चिमी सीमान्त काश्मीर के अधिकार में आया था। १९२५ में प्रताप सिंह लगातार ४० वर्ष

सफलता के साथ शासन करके अपना सिंहासन वर्त्तमान महाराजा हरिसिंह को सौंप गये थे। हरिसिंह की अवस्था शासन भार लेते समय ३० वर्ष की थी। आधुनिक शिक्षा एवं सभ्यता से परिपूर्ण महाराजा हरिसिंह ने लग भग सभी दिशाओं में पर्याप्त उन्नति की और उनके शासन के २५ वर्षों में सारी दुनियां की दृष्टि काश्मीर की ओर जाने लगी। परन्तु अंग्रेजी सरकार के संरक्षण प्राप्त इस महाराजा ने कभी भी अपने यहां की बहुमत जनता को सन्तुष्ट करने का प्रयत्न नहीं किया। इसी का परिणाम था कि १९३२ में एक प्रलयंकारी साम्प्रदायिक उत्पात खड़ा हुआ था। जिसमें हजारों हिन्दुओं की जीवन हानि और लाखों रुपये की सम्पत्ति की हानि हुई थी। भारत की राजनैतिक जागृतिका काश्मीर पर भी पर्याप्त प्रभाव पड़ा। वहां भी कुछ मन चले नौजवानों ने शेख अब्दुल्ला की संरक्षता में एक पार्टी कायम कर ली जिसका उद्देश्य शुरू में तो वहां के महाराजा द्वारा किये गये कार्यों का विरोध मात्र ही रहा था। परन्तु बादमें उनका स्वरूप ज्यों २ वह भारतीय नेताओं के सम्पर्क में आते गये एक प्रकार सार्वजनिक रूप धारण करता गया और गत दूसरे महायुद्ध के प्रारम्भ से एक राष्ट्रीय संस्था के रूप में काश्मीर जन समूह को जागृत करता रहा। इसी काल में सन् ४५ के आरम्भ में महाराजा हरिसिंह के प्रधान मन्त्री पंडित रामचन्द्र काक की आतंकवादी मनोवृत्ति के फल स्वरूप (काश्मीर छोड़ो) आन्दोलन शुरू किया गया था जिसको बाद में भारतीय नेताओं द्वारा भी समर्थन प्राप्त हुआ था।

वास्तव में काश्मीर छोड़ो के नारे के साथ यद्यपि हमारे नेताओं की सहानुभूति न थी परन्तु राज्य में, उत्तर दायी व्यवस्था की मांग में काश्मीरी आन्दोलनकारियों को पूरा २ सहयोग प्राप्त था। इसी लिए पंडित नेहरु व श्री आसफ अली उस समय श्री शेख अब्दुल्ला की गिरफतारी होने पर उनकी तरफ से अदालत में वकालत करने के लिए जाते हुए रास्ते में ही गिरफतार कर लिये गए थे। सन ४५-४६-४७ के पाकिस्तान बनने से पूर्व का समय काश्मीर की राजनीति में संघर्ष का समय रहा। शेख अब्दुल्ला लग भग दो वर्ष तक कारावास में रखे गये थे। ऐसे ही समय पाकिस्तान बन गया और काश्मीर को हड़पने के लिए दबाब डालना शुरु कर दिया गया। यहां तक कि यातायात के सारे मार्ग जोकि प्रायः काश्मीर से पाकिस्तान को को मिलाते थे बन्द कर दिये गये। काश्मीर में काम आने वाली आवश्यक सामग्री का आना जाना बन्द हो गया, व्यापार सारा बन्द कर दिया गया। यह सब था काश्मीरी जनता व वहां के शासन को तंग करना ताकि परेशान होकर वह पाकिस्तान की की शरण में चले जावें। यह सब चल ही रहा था कि महाराजा हरिसिंह ने अपना मन्त्रि मण्डल बदल दिया और शेख अब्दुल्ला का भी सहयोग लेकर काश्मीर भूमि की रक्षा का प्रबन्ध किया। इतने ही में २२ अक्टूबर सन् ४७ को पाकिस्तान के रास्ते से आक्रमणकारियों ने काश्मीर पर चढ़ाई करदी थी जिसके बाद का सारा हाल पाठकों को प्रतिदिन समाचार पत्रों के द्वारा अवगत होता ही रहा है मगर फिरभी एक बात यहां जाननी जरूरी है कि हम लोग भारतीय अपनी मातृ भूमि से भी इतने परिचित

नहीं जब कि विदेशी लोग हमारे देश के कोने कोने से परिचय रखते हैं।

कबाइली लोग किस मार्ग से काश्मीर में घुसे, यह सब उसी समय जाना जा सकता है कि आपको काश्मीर और उत्तर पश्चिमी भारत की भौगोलिक स्थिति का पूर्ण ज्ञान हो। यदि हम काश्मीर की भूमि का पाकिस्तान से किस २ स्थान पर सम्बन्ध है। यह पता करें, तो काश्मीर को दो तरफ से पूर्ण रूप से अर्थात पश्चिम में उत्तर से चित्राल, स्वात सीमाप्रांत के हजारे जिले ने और दक्षिण में रावलपिण्डी, झेलम, गुजरात, स्यालकोट ने घेर रखा है। केवल २०-२५ मील चौड़ा भाग भारत की सीमा से छूता है जिसमें सारे साल तक आवागवन रखा जा सके। दुर्गम और बहुत ऊंचे २ पर्वतों और बरफ से ढका हुआ भाग तो पर्याप्त रूप में भारत की सीमा से छूता है मगर शीत में तो क्या गरमी के मौसम में भी उसको पार करना बहुत कठिन काम है। यही कारण है कि सदैव से आने जाने के मार्गों का निर्माण इन्हीं काश्मीरी सीमा के पाकिस्तानी पांच जिलों से सुविधा की दृष्टि से बनाया गया था। इनमें रावलपिंडी जिले से भरी होकर कोहाला के स्थान पर झेलम नदी को एक बहुत कम चौड़े पुल द्वारा पार करने पर काश्मीर सीमा में प्रवेश हो जाते हैं। यही मार्ग पाकिस्तान बननेसे पूर्व विशेष रूप से सारे साल प्रयोग में लाया जाता था। इसीको झेलम वैली रोड के नाम से भी पुकारा जाता है। इसको बनाने में काश्मीर सरकार का २० लाख रुपया बहुत सस्ते जमाने में खर्च हुआ था। इसी मार्ग से आजसारी सैन्यसामग्री पाकिस्तान काश्मीर स्थित अपनी सेना को

भेजता है। इसके अतिरिक्त लगभग इतनी ही महत्व पूर्ण एक दूसरी सड़क है जो कि सीमाप्रान्त हज़ारा जिले के एबटाबाद नामक स्थान से होकर मानसेरा और गढ़ी हबीबुल्ला होती हुई रामपुर कोट के पास जाकर काश्मीर की सीमा में मिल जाती है। कबाइली लोगों का प्रवेश इसी मार्ग से काश्मीर में विशेष रूप से हुआ था। यह पूर्वोक्त दो मार्ग तो ऐसे सुन्दर और अच्छे ढङ्ग से बनाए गये हैं कि कितना भी भारी वजन लेकर मोटर गाड़ियां गुजर सकती हैं मगर इन दोनों के अलावा भी तीन चार मार्ग हैं जहां से पाकिस्तान काश्मीर में अपनी मोर्चेबन्दी करता रहा है और आज भी वह इन मार्गों से पूरा लाभ उठा रहा है। उदाहरण के लिए सर्व प्रथम यदि हम काश्मीर के उत्तर पश्चिम को लेवें तो चित्राल रियासत में चित्राल नदी के उद्गम स्थान से होकर गिलगित प्रदेश में प्रवेश करने के लिए गिलगित नदी के उद्गम स्थान से होकर एक सरल दर्रे से गिलगित में प्रवेश हो सकता है। चित्राल और उसके आस पास के रहने वालों ने इसी मार्ग से गिलगित में प्रवेश किया। इसी भांति चित्राल से दक्षिण में स्थित स्वात राज्य के रहने वाले कबाइलियों ने सिन्ध नदी के मार्ग द्वारा काश्मीर में प्रवेश किया। सिन्ध नदी गिलगित प्रदेश के भुन्जी इत्यादि पड़ावों के के पास से सीमाप्रान्त के स्वात राज्य में प्रवेश करती है। सुना जाता है कि अब तो इन दो वर्षों में पाकिस्तान ने एक जीप गाड़ी चलने योग्य सड़क भी बनाली है, जो कि इसी सिन्ध नदी के किनारे २ स्कर्दू तक चली गई है। इस दूसरे मार्ग के बाद काश्मीर के उत्तरी भाग में घुसने के लिए तीसरा मार्ग है किशन

गंगा नदी और कागान नदी यह बाद वाली नदी तो सीमाप्रांत के हजारा जिले में से गढ़ी के पास से होती हुई मुजफ्फराबाद से जरा आगे की तरफ झेलम में मिल जाती है। इस नदी के मार्ग से भी नांगा पर्वत के क्षेत्र में पहुँचने का सरल मार्ग है। परन्तु किशनगंगा तो सीधा ही गुरेज की घाटी में ले जाती है यहीं इसका उद्गम स्थान है। दूसरे किशनगंगा से पाकिस्तान का इलाका एकदम समीप पड़ता है। इसके बाद दोनों पक्की सड़कों का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। ७ वां उपयोगी मार्ग जो कि पाकिस्तानी हमलावरों ने प्रयोग में लिया वह है पुंछ के क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए। इस क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए पाकिस्तान की तरफ से तीन मार्ग, काश्मीर की तरफ से तीन मार्ग, और जम्मू की तरफ से एक मार्ग है। पाकिस्तान से कोहाला के पास से पुंछ की बाग तहसील में, कोहटा के रास्ते से लक्ष्मण पत्तन पुल पार करके पुंछ की पुलन्द्री (सध्नूति) तहसीलमें और झेलम के पास किश्ती अथवा झेलम शहर के मुख्य पुल को पार करके पुंछ की मेंढर तहसील में प्रवेश होता है। इन तीनों ही मार्गों को सुविधा और अवसर के अनुकूल पाकिस्तानियों ने खूब काम में लाया है। इसके साथ ही उड़ी तक पाकिस्तान का कब्जा हो जाने पर उसने उड़ी पुंछ मोटर सड़क का भी खूब उपयोग किया। काश्मीर से उड़ी वाले मार्ग के अतिरिक्त पैदल और घोड़े के लिए काम आने वाले दो मार्ग और भी हैं पुञ्छ के ठीक उत्तर में गुलमर्ग के पास से अथवा तोशा मैदान के पास से [illegible] काश्मीर की नागाम और बढ़गाम तहसीलों में प्रवेश होता है। यह दोनों मार्ग पाकिस्तानियों

के उतने उपयोग में नहीं आये जितना कि काश्मीर घाटी की रक्षा के लिए भारतीय सेना ने इनका उपयोग किया। जम्मू वाला प्रशस्त मार्ग तो वही है जहां पर भारतीय सेना ने अपने पराक्रम व कौशल से पाकिस्तानी सेना के झंगड़ के युद्ध क्षेत्र में छक्के छुड़ाए थे। तभी तो वह पुञ्छ नगर पर अपना कब्जा करने में सफल हो सके थे। इन उपर्युक्त मार्गों से जिस प्रकार आक्रमण कारी लोग काश्मीर के भिन्न २ प्रदेशों में प्रविष्ट हुए उसी तरह गुजरात और स्यालकोट के जिलों से भी यह लोग जम्मू राज्य के मीरपुर, भिम्बर, रियासी और देवा बटाला इत्यादि के युद्ध क्षेत्रों में घुसे थे। इनमें भिम्बर वाला मार्ग काश्मीर से भारत का सम्बन्ध जोड़ने वाला अतिप्राचीन मार्ग जान पड़ता है। यही मार्ग प्रसिद्ध मुगल बादशाह काश्मीर जाने के लिए उपयोग में लाते थे। लेखक भी स्वयं इस भाग से पैदल काश्मीर गया है। इस रास्ते में बहुत से प्राचीनकाल के खंडहर हैं जो कि इन पहाड़ी हिन्दू राज्यों के अतीत के गौरव की स्मृति दिलाते हैं। यही एक मार्ग था जो कि अविभाज्य भारत को काश्मीर से जोड़ने के लिए सब से कम अर्थात गुजरात का शहर केवल १२० मील श्रीनगर से पड़ता था।

काश्मीर की प्राकृतिक बनावट

हिमालय पर्वत के एक बहु बड़े भाग में स्थित काश्मीर राज्य कोई आदि काल से तो अपनी सीमा को बनाये हुये नहीं

था। इस समय से पूर्व के २००० वर्षों के इतिहास में कई बार इसकी सीमाएं अदली बदली गई हैं। जैसा कि अन्य स्थानों पर कहा गया है एक समय सीमाप्रान्त का हजारा जिला और पंजाब का कांगड़ा जिला भी इसी का भाग था। यह समय ललितादित्य का था। इसी प्रकार बाद में लद्दाख का और गिलगित का इलाका भी इसमें मिलाया गया। इस प्रकार समय समय पर राज्य की स्थिति बनती बिगड़ती रही है परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि चाहे थोड़ासा भाग मिला दिया गया और चाहे पृथक कर दिया गया काश्मीर राज्य लगभग हिमालय के उसी क्षेत्र में है जहां समतल भूमि के दर्शन बड़ी कठिनाई से और बहुत ही अल्पमात्रा में देखने को मिलते हैं। वास्तविक नाम काश्मीर एक बहुत ही छोटे से भाग का है जिसकी लम्बाई चौड़ाई क्रमश ८०-२५ मील है। परन्तु अब तो उसके ही प्रसिद्ध नाम से सारे प्रदेश का नाम काश्मीर है। और जम्मू व काश्मीर के नाम से विशेष रूप से प्रयोग में आता है। जम्मू प्रदेश भी उतने ऊंचे तो नहीं परन्तु सारा ही छोटे २ पहाड़ों से भरा पड़ा है। काश्मीर राज्य का कुल क्षेत्र फल ८४२६८ वर्ग मील है। जिसमें जम्मू (पुन्छ की जागीर के सहित) १२१६५ वर्ग मील के क्षेत्र फल में, काश्मीर ८५३२ वर्ग मील के क्षेत्र फल और सीमावर्त्ती प्रदेश लद्दाख और गिलगित व बाल्टिस्तान ६३५६० वर्ग मील के क्षेत्रफल में फैले हुए हैं। केवल जम्मू के दक्षिण पश्चिमी एक साधारण भाग को छोड़ कर शेष सारा देश पर्वतों से भरा पड़ा है जिसे हम तीन भागों में बांट सकते हैं। १ बहिर्मुखी पहाड़ी तथा मध्यवर्त्ती पहाड़ों की श्रेणियां जो कि जम्मू प्रदेश के उपरी लिखित समतल भाग की पृष्ठ भूमि का काम करती हैं। २ इस मध्यवर्त्ती पर्वत श्रेणी जिसका नाम पीर-

पञ्चाल भी है के पीछे स्थित काश्मीर घाटी है। २ इस घाटी के उत्तर और पूर्व की पृष्ठ भूमि में फिर एक महान् पर्वत श्रेणी है जिसको पार करके उत्तर में ; गिलगित उत्तर पूर्व हैं बाल्टिस्तान और ठीक पूर्व में लद्दाख स्थित है।

तीसरे विभाग की महान् पर्वत शृंखला एक प्रकार से सारे काश्मीर राज्य की रूपरेखा समझनी चाहिए जो पश्चिम से पर्व को होती हुई दक्षिण को घूम गई है। इसके अन्दर ही बहुत से मुख्य पर्वत शृंग विद्यमान हैं। जिनमें श्रीनगर से ठीक उत्तर पश्चिम में स्थित नागा पर्वत है, जिसकी ऊंचाई समुद्र तल से २६१८२ फुट है। और इसका पूर्वी भाग सदा बर्फ से ढका रहता है जिसको इंगलिश भाषा में ग्लेशियर के नाम से पुकारा जाता है। इसी नागां पर्वत से सम्बन्धित एक और १२ मील के अन्तर पर २०७४० फुट ऊंचाई का पर्वत शिखर विद्यमान है। इसी नागां पर्वत शिखर से ठीक दक्षिण पश्चिम और दक्षिण पूर्व को दो पर्वत श्रेणियां चली गई है जो कि काश्मीर घाटी की उत्तरी सीमा को बनाने के साथ २ काश्मीर में बहने वाली प्रत्येक नदी के जल का कोष भी हैं। इन दोनों में से पहली श्रेणी दक्षिण पूर्व की तरफ तक जाकर फिर ठीक दक्षिण को चली गई है जिसके एक तरफ कुन्हार या कागान नदी और दूसरी तरफ किसनगंगा नदी बहती है। यह पर्वत श्रेणी झेलम नदी किशनगंगा एवं थोड़े से मील आगे कागान के मिलने के स्थान पर समाप्त हो जाती है। इसी पर्वत श्रेणी के दो शिखर क्रमशः १६४८७ फुट १५५५४ समुद्रतल से ऊंचे हैं। दूसरी दक्षिण पूर्वकी तरफ को जाने वाली पर्वतश्रेणी के सम्मेलन के स्थान का ही नाम बुर्जिल

दर्रा है जोकि हमें अस्तूर नदी के किनारे २ अस्तूर की घाटी में ले जाता है इस तरफ की सारी नदियां सिन्ध नदी की सहायक नदियां हैं क्योंकि इन दोनों ही पर्वतश्रेणियों से काश्मीर की घाटी तीन तरफ से घिरी हुई है। इस दूसरी पर्वतश्रेणी का सबसे ऊंचा शिखर १७ हजार फुट समुद्र तल से ऊंचाई पर स्थित है। नांगा पर्वत से ५० मील दूर तक इस पर कोई स्थायी हिम कोष नहीं है परन्तु ज्यों ज्यों पूर्व को चलते जांय ग्लेशियरों (हिमकोषों) की संख्या बढ़ती जाती है। इसकी सबसे कम ऊंचाई १०८५० फुट है इसी स्थान को जोजिला का दर्रा कहते हैं जिसके द्वारा लद्दाख में पहुंचा जाता है। यह दूसरी पर्वतश्रेणी जहां ठीक उत्तर से दक्षिण को चलती है इसके अन्दर की तरफ की अर्थात पश्चिम की शाखाएं पानी झेलम नदी को और पूर्व की तरफ की वाडवान नदी को जोकि चिनाब की सहायक नदी है पानी देती हैं। इस पूर्वी सीमा की पर्वतश्रेणी में १४ हजार तक ऊंचाई के स्थान हैं परन्तु फिर भी ग्लेशियर कोई नहीं। सम्भव है सूर्य की प्रखर किरणों के प्रभाव से बर्फ अपना स्थायी रूप धारण न करने पाती हो। यह तो रही काश्मीर की पूर्वी और उत्तरी तथा कुछ पश्चिमी सीमा शेष दक्षिण और पश्चिमी सीमा का पीर पञ्चाल नाम वाली मध्यवर्ती पर्वतश्रेणी बनाती है। जिसकी सबसे अधिक ऊंचाई एक स्थान पर १५५२३ फुट तक समुद्र तल से ऊंची है। काश्मीर की नदी झेलम या संस्कृत में वितस्ता उत्तर से पश्चिम को ठीक काश्मीर की तराई के मध्य में बहती है। इसका बहाव बहुत थोड़ा और आकार भी बहुत सीमित है परन्तु श्रीनगर से २५ मील दूर नीचे की तरफ उतनी चौड़ी हो गई है कि वुलर नाम की झील इसी नदी के द्वारा बनी है जिसका विस्तार १२

मील और ५ मील अर्थात ६० वर्गमील का है यह झील चारों तरफ से ऊंचे पर्वतों से घिरी हुई है जोकि काश्मीर की उत्तरी और उत्तर पूर्वी सीमा को बनाते हैं। दक्षिण पश्चिम में सोपुर के पास झील को बना कर एक तरफ छोड़ कर झेलम नदी फिर धीरे २ दक्षिण पश्चिम की तरफ को ही बहकर बारामूला के पास पर्वतों के बीच चली जाती है। यहांसे नदीका बहाव तेजीके साथ ठीक पश्चिम में ७५ मील तक मुजफ्फराबाद के पास जाकर किशनगंगा और कागान नदियों से मिल जाता है। इसके बाद फिर नदी का बहाव ठीक दक्षिण की तरफ को हो जाता है जो कि काश्मीर राज्य तथा भारत जिसे आज पाकिस्तान कहना चाहिए की सीमा को पृथक करता है।

झेलम नदी की काश्मीर में मन्दगति का अनुमान इस से ठीक लग सकता है कि श्री नगर से ४० मील ऊपर अनन्त नाग (इस्लामाबाद) के पास खन्नाबल में नदी की समुद्र तल से ऊंचाई ५४०० फुट है जब कि श्रीनगर के पास ५२३५ फुट है अर्थात् ४ फुट प्रति मील के अनुपातसे इस भाग में नदीका बहाव है जबकि अगले २५ मीलों में बुलर झील तक और फिर १८ मील बारामूलातक झेलमका बहाव केवल ढाई फुट प्रति मील का रह गया है। इस्लामाबाद से बारामूला तक ८० मील में बड़ी सुन्दरता के साथ नावों का यातायात होता है जोकि झेलम के पहाड़ में प्रवेश होने पर फिर मैदान में झेलम शहर के कुछ ऊपर की तरफ, आने के पहले एक दम असम्भव है। झेलम नदी के उत्तर पूर्वी इस संकुचित समतल में एक चोड़ा पहाड़ी भाग है जिसके आगेकी ऊंची पर्वत माला और उसके बीच किसन

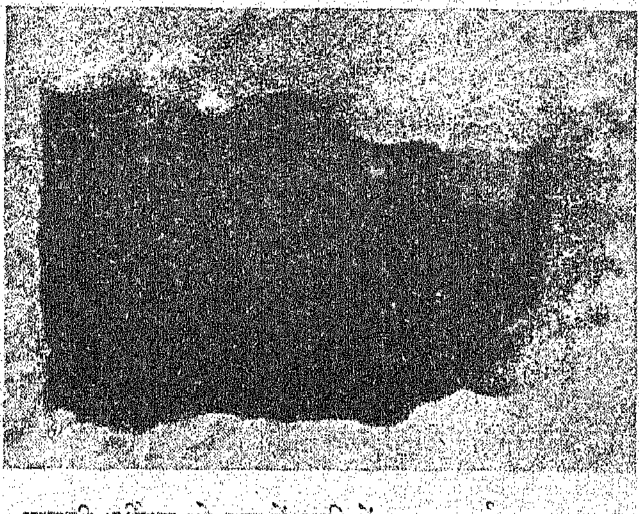
गंगा बहती है। इस पहाड़ी भाग के पूर्वी छोर पर जहां ये बड़ी पर्वत श्रृंखला से मिलता है सबसे अधिक ऊंचाई १६८३६ फुट है जिस में अनेकों हिम कोषों का भंडार भरा पड़ा है। इसी पर्वत श्रृंग का एक भाग सिन्ध नदी और दूसरा लीदर को पानी देता है जो कि बाद में इस्लामाबाद से कुछ ऊपर झेलम में मिल गया है। श्री-नगर की उत्तरी सीमापर स्थित पर्वतमाला का उत्तरी भाग किसन गंगा की ओर दक्षिणी भाग बागान नदी को पानी देता है जो कि सिन्ध नदीमें मिल जाती है। इस पर्वतमाला का सबसे ऊंचा श्रृंग १६६०३ फुट ऊंचा अनेकों हिम कोषों से आच्छादित है। इन नदियों और उनकी सहायक नदियों से काश्मीर एक जलमय प्रदेश मालूम पड़ता है। काश्मीर में कहीं जाने वाली चिनाब या सिन्ध जिसे अंग्रेजी में Indus कहा जाता है काश्मीर की राई में नहीं बहती उनमें से दूसरीतो लद्दाख व गिलगित के सीमान्त तथा दूसरी जम्मू में बहती है और दोनों का उद्गमस्थान भी तिब्बती प्रान्त है। इस ऊपर लिखी हुई सिन्ध नदी से काश्मीर की सिन्ध नदी एक पृथक नदी है जिसके नाम से उस घाटी का नाम भी सिन्ध घाटी या तराई कहलाता है।

काश्मीर का जलवायु व ऋतुऐं

समुचे भारत की तरह काश्मीर में ऋतुऐं नहीं होतीं। अर्थात यह जरुरी नहीं है कि आषाढ़ और सावन में वहां पर उसी प्रकार वर्षा होगी जैसी उत्तरी भारत में होती है क्योंकि काश्मीर की तराई दक्षिण पश्चिम की तरफ पीरपन्जाल नामकी पर्वत माला से घिरी हुई है यह पर्वत माला पूर्व से आने वाली

सभी घटाओं को रोक लेती है अतः वहां पर अनियमित रूप से ही वर्षा होती है विशेष वर्षा शिशिर ऋतु अर्थात मार्च अप्रैल में ही होती है। कभी यदि घटाएं जोर की आई तो वह पीरपञ्जाल को पार करके काश्मीर के बहुत ऊंचे २ स्थानों पर बहुत वर्षा का भी कारण बन जाती हैं और काश्मीर के उत्तर पूर्व में में स्थित ऊंची पर्वत माला से जा टकराती हैं। काश्मीर के चारों तरफ स्थित पर्वत शृङ्खला पर हिमपात भी अक्टूबर से शुरु होकर मार्च तक नियमित रूपसे होता रहता है। स्वास्थ्यलाभ की दृष्टि से काश्मीर में श्रीनगरको छोड़कर शेष काश्मीर की तरह सारे भारत में कोई उत्तम पर्वतीय स्थान नहीं मिल सकता यूरोप देश के रहने वाले लोगों को तो काश्मीर का जलवायु बहुत ही अनुकूल पड़ता है क्योंकि भिन्न २ प्रकार के वातावरण को अपने २ अनुकूल स्थानों को यह लोग अपने स्वभाव के अनुसार चुनकर निवास करते हैं। पूर्व काल में विदेशी लोगों के काश्मीर में घुसने पर बड़ी बाधाएं थीं प्रत्येक को कई महीने पूर्व प्रार्थना पत्र देकर पास बनवाना पड़ता था। किन्तु कुछ बरसों से यह प्रतिबन्ध हटा दिया गया था और यात्रियों की संख्या प्रति वर्ष हजारों में पहुँच जाती थी। लड़ाई के आरम्भ होने बाद फिर से यात्री लोग कम आने जाने लगे हैं। जिस प्रकार बीस वर्ष पूर्व आने जाने के मार्ग की कठिनाई से यात्रियों की संख्या कम थी। इसी प्रकार पाकिस्तान बनने के बाद भी यही अवस्था होगई थी। रावलपिण्डी तक रेल और फिर श्रीनगर तक तक मोटर द्वारा पहुँचने में बड़ी सुविधा होती थी। केवल ८ घन्टे में अधिक से अधिक १९६ मील की यात्रा मोटर से हो जाती थी। अब फिर

पठानकोट से जम्मू तक एक सुन्दर सड़क बनकर यात्रा में सुविधा हो गई है। परन्तु समय पूरा दो दिन कभी कभी २॥ दिन तक लग जाता है। रास्ता रावलपिण्डी जैसा सुन्दर नहीं है फिर भी प्राकृतिक दृश्यों से बहुत कुछ रास्ते की कठिनाई की क्षति पूर्ति होजाती है। श्रीनगर स्वयं भी ५॥ हजार फुट की ऊंचाई पर स्थित है परन्तु काश्मीर तराई के समतल मैदान होने के कारण जब जून के अन्त में वहां पर भी तापमान बढ़ जाता है तो लोग बहुत से ठण्डे स्थानों पर चले जाते हैं। बहुत ही ज्यादा धनी लोग और प्रायः यूरोपियन तो गुलमर्ग के सुन्दर पहाड़ पर जिसकी ऊंचाई ८८८० के लगभग है चले जाते हैं। परन्तु हिन्दुस्तानी यात्रियों के लिये विशेष उपयोगी स्थान पहलगाम ८८८० फुट माना जाता है। यहीं से वह लोग अमर नाथ की यात्रा भी



श्रावणी पूर्णिमा को हजारों यात्रियों का आकर्षण अमरनाथ

बड़ी सुविधा से कर सकते हैं। यह दोनों स्थान तो मोटर सड़क के मार्ग से श्रीनगर से जुड़े हुए हैं परन्तु कई और स्वास्थ्य वर्धक स्थान हैं जिन पर घोड़े और कुली की सहायता से पहुँचा जा सकता है। उन में मुख्यस्थान सोनमर्ग है श्रीनगर से ५२ मील की दूरी पर है और यह स्थान स्वास्थ्य के लिए सबसे अधिक उपयोगी है। शोपियान भी एक और उत्तम स्थान है। कुक्करनाग अच्छावल वेरीनाग बहुत से सुन्दर स्थान हैं परन्तु वहां पर आधुनिक काल की सुविधाएं नहीं हैं और साथ ही आबादी भी थोड़ी सी वहां के रहने वालों की ही है। बाजार वगैरह कोई नहीं अपने साथ सारी आवश्यक सामग्री लेकर जाना पड़ता है यह तो बहुत ही अच्छा हो यदि काश्मीर का यात्री अपने साथ किसीप्रकार के तम्बू या डेरे का प्रबन्ध रख सके उस से फिर कहीं पर उसको कष्ट उठाना नहीं पड़ेगा। मैदान में स्वास्थ्यप्रद स्थान पर वह बड़ी सुविधा के साथ अपना डेरा लगा सकता है क्योंकि सरकारी यात्रीगृह अथवा सार्वजनिक स्थानों की समय पर मिलने की कोई निश्चित बात नहीं रहती। दूसरे स्वास्थ्य के लिए जितना अधिक स्वच्छ स्थान हो उतनाही अच्छा है। काश्मीर की तराई में तो कोई भी ऐसा स्थान ढूंढने पर भी नहीं मिल सकता जो कि स्वास्थ्य की दृष्टि से अच्छा न हो। परन्तु जहां पर आज का मानव समूह जाता है, वहीं वह प्रकृति के स्वरूप को बिगाड़ने पर उतारू हो जाता है अपने रहन सहन के ढंग से उसको बनाने का प्रयत्न नहीं करता। यही कारण है कि लोग कभी २ काश्मीर को गन्दा सिर्फ श्रीनगर देख कर कह देते हैं।

काश्मीरियों का सामाजिक जीवन

—★—

काश्मीर का इतिहास इस बात का प्रबल प्रमाण है कि काश्मीर के निवास योग्य बनने के समय से ही इस भूमि में ब्राह्मण धर्म के अनुयायी केवल ब्राह्मण ही निवास करते थे। आज की समाज व्यवस्था को दृष्टि में रख कर यद्यपि पूर्वोक्त वक्तव्य की सच्चाई में आज कल के कश्मीर को देखने वाले व्यक्ति के मस्तिष्क में सन्देह अवश्य होगा। परन्तु प्राचीन काल की भारतीय सभ्यता में सामाजिक विषमता का वैसा प्रभाव न था जैसा कि आज देखने में आता है। अर्थात आजकल के बड़े २ नगरों की व्यवस्था का अभाव होने के कारण उस समय भिन्न २ पेशा करने वालों की इतनी आवश्यकता न पड़ती थी जितनी आज, और न ही प्राचीन काल का जीवन इतना संघर्ष और आवश्यकताओं से पूर्ण था। अतः केवल ब्राह्मणों का आदिम काश्मीर में रहना कोई आश्चर्य या सन्देह की बात नहीं रह जाती है। समय का कुचक्र चला भारत के सारे प्रदेशों के पतन के साथ २ काश्मीर को भी विदेशी आक्रान्ताओं ने अपने आधीन कर लिया। जिस प्रकार ब्राह्मण संस्कृति के सूर्यास्त के समय बौद्ध संस्कृति को सारे भारत और उसके पड़ोसी देशों ने अपना लिया था। उसी प्रकार अब दोबारा हिन्दू धर्मानुयायी ब्राह्मण लोगों का मुसलमानों के प्रभाव में आना स्वाभाविक ही था। क्योंकि राजा के मत में परिवर्तित हो जाने से स्वार्थसिद्धि

के अतिरिक्त संरक्षण भी प्राप्त होता था। इस कमजोरी के अलावा मुस्लिम शासकों की धर्मान्ध मनोवृत्ति ने भी सारे उत्तर-पश्चिम में रहने वाले लोगों को धर्म परिवर्त्तन करने के लिये विवश किया। परिणाम यह हुआ कि काश्मीर में इस सफलता से यह काम हुआ कि वहां मुसलमानों की संख्या यदि केवल काश्मीर को ही देखा जावे तो ६० प्रतिशत तक पहुँच गई। सार रूप में आज काश्मीर के अन्दर कहलाये जाने वाले सारे प्रदेशों को मिलाकर भी काश्मीर में ८० प्रतिशत से कम मुसलमान नहीं हैं। आज प्रबन्ध की सुव्यवस्था के लिये काश्मीर को चार विभागों में बांटा हुआ है। जिसमें जम्मू को छोड़ कर शेष उत्तर पश्चिमी सीमान्त गिलगित उत्तर पूर्वी सीमान्त लद्दाख और स्वयं काश्मीर भाषा के बोलने वाले इलाके में तो मुस्लिम जन-संख्या ६० से ६५ प्रतिशत तक पाई जाती है। अर्थात काश्मीर अथवा इन दो सीमान्त प्रदेशों में बसने वाले ५ फीसदी हिन्दू काश्मीर अथवा श्रीनगर के आसपास के ८० मील लम्बे और ४० मील चौड़े इलाके को छोड़कर वहां के आदिम निवासी नहीं अपितु या तो किसी सरकारी कार्य अथवा व्यापार के निमित्त बाहर से जाकर रहनेवाले हैं। काश्मीर स्वय के रहने वाले १०-१५ फीसदी हिन्दू जो कि ब्राह्मण जाति के हैं अवश्य काश्मीर के आदिम निवासी हैं। उसी प्रकार जम्मू प्रान्त में जो डोगरा राजपूत हैं जिनकी संख्या ३० प्रतिशत के लगभग है वास्तव में इस प्रान्त के मुसलमान होने से बचे हुए आदिम निवासी हिन्दू हैं।

उपर्युक्त घटना चक्र के आधार पर इतिहास के आदि-काल से काश्मीर में अनेक सभ्यताओं का उदय होता रहा है

परिणामतः आज के काश्मीरी की सभ्यता व संस्कृति ब्राह्मण बौद्ध, पुनः हिन्दू और इस्लामी परम्पराओं का सम्मिश्रण ही समझना चाहिए। यह बात पृथक २ रूप से ब्राह्मण, मुसलमान और बौद्ध तीनों ही को देखने से प्रकट हो जावेगी। सर्व प्रथम तो काश्मीर के लोग अपने धार्मिक जीवन में भिन्नता रखते हुए भी व्यावहारिक जीवन में जांति पांति के भेद भाव को और भारतवासियों की तरह नहीं मानते हैं। माने भी क्यों वहां पर जातियां हैं भी कहां? केवल हिन्दू या मुसलमान यही दो वर्ग वहां के निवासी हैं। केवल भोजन बनाने मात्र को छोड़कर शेष पानी भरना वर्त्तन मांजना कपड़ा धोना और सभी जीवन की आवश्यकताएं ब्राह्मणों को अपने मुसलमान भाइयों के सहयोग से ही पूरी करनी पड़ती हैं। यहां तक कि हिन्दू मुसलमान एक दूसरे के धर्म के आध्यात्मिक उपदेशकों और महात्माओं का समान रूप से आदर करते देखे जाते हैं। यह बात भी इस घटना से प्रमाणित हो सकती है कि बहुत से धार्मिक स्थान और मकबरे काश्मीर में विद्यमान हैं जिन्हें दोनों ही हिन्दू और मुसलमान पवित्र ही नहीं मानते अपितु पूजते तक हैं श्रीनगर से लगभग १०० सवा सौ मील पर कृष्ण गंगा के किनारे पर शारदा देवी का मन्दिर एक ऐसा ही मन्दिर है जिसे हिन्दू लोग, सरस्वती का मन्दिर और मुसलमान पुत्रदात्री देवी का मन्दिर मानकर पूजा करते हैं। इसी भांति झेलम नदी के तट पर श्रीनगर में शाहहमदान की खानगाह एक ऐसी ही मस्जिद है। जियारत पीर हाजी की बन्दर गाह पर हिन्दू और मुसलमान भक्त हजारों की संख्या में एकत्र होकर उत्सव मनाते हैं। यहा तक कि हिन्दू लोग इसको प्रवरसेन द्वितीय के समय में बनवाया हुआ मन्दिर

बतलाते हैं। इसी प्रकार बहुत से उत्सव मेले और त्यौहार काश्मीर के हिन्दू मुसलमान मिल जुल कर साथ मनाते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि ५० वर्षों के राजनैतिक भारत का काश्मीर पर भी बड़ा असरपड़ा है हिन्दू मुस्लिम वैमनस्य का विष बहुत से दुर्गम पर्वतों को पार करने में समर्थ हो गया है। जिसके फलस्वरूप इन २० वर्षों में तो बहुत ही विष वमन किया गया। दोनों हिन्दू और मुसलमान आपस में पृथक होते चले गये। तथापि नेशनल कान्फ्रेन्स के सूर्योदय से वह धर्मान्धता का अन्धेरा पर्याप्त रूप से दूर हो गया है। यहां तक कि नेशनल कान्फ्रेन्स के अधिकांश नेतागण कट्टर मुसलमान होते हुए भी हिन्दुओं के धार्मिक उत्सवों—एवं सामाजिक कृत्यों में सम्मिलित होकर प्रसन्न होते देखे गये हैं। और भी ज्यादा ऐसे अवसरों पर मुसलमानों के धर्मग्रन्थों तथा हिन्दू धर्म शास्त्रों के उपदेशों की शिक्षा दी जाती है। ईद, शबरात, दीवाली और होली वगैरह में दोनों ही धर्मावलम्बी समान रूप से सम्मिलित होते हैं।

धार्मिक जीवन में जन्म, विवाह और मृत्यु के समय किए जाने वाले तरह २ के अपने २ प्रकारों में भी यही उपर्युक्त बात लागू होती है। कुछ थोड़े ही से भेद को छोड़ कर सारी ही प्रक्रिया दोनों धर्मों में समान रूप से होती है। इसी प्रकार ऐसे अवसरों पर गाए जाने वाले प्रान्तीय तथा ग्रामीण गीत भी एक दूसरे के समान ही हैं। साम्प्रदायिकता का चश्मा आंखों से उतार कर अगर आप जरा गहराई से हिन्दू मुसलमानों की परम्पराओं का अध्ययन करें तो उनकी एकता और भी स्पष्ट रूप से विदित हो सकती है। लगभग सभी लोगों ने जो कि एक बार काश्मीर देख चुके हैं यह ध्यान दिया होगा कि हिन्दू

और मुसलमान स्त्रियां समान रूप से पर्दे की विरोधी हैं। केवल विवाह के समय दोनों धर्मों में वर वधू इसी समय परम्परा की रक्षा के लिये जरा सा घूंघट निकालती हैं। अन्यथा सारा जीवन दोनों तरफ पति पत्नि उन्मुक्त होकर जीवन व्यतीत करते हैं। सामाजिक जीवन में भी सभी को दोनों ही तरफ समान रूप से स्वतन्त्रता दी गई है। वेष भूषा भी कुछ थोड़े से बाहरी चिन्हों जैसे दाढ़ी या माथे पर तिलक के अलावा समान ही है हां स्त्रियां अवश्य हिन्दुओं में एक विशेष प्रकार का शिरस्त्राण धारण करने लगी हैं। जिससे उनकी भिन्नता प्रकट होती है। जरा गहरी दृष्टि से देखने से तो वेष की एकता में कोई सन्देह ही नहीं रह जाता क्योंकि वस्त्रों का ढीला ढाला जिस में अधिक ही वस्त्र का प्रयोग किया गया हो स्वाभाविक सा ही है। साधारण रूप से कारमीरी लोगों के वेष पर बौद्ध, तुर्की, एवं प्राचीन कालकी ब्राह्मण सभ्यता का प्रभाव साफ २ दिखलाई देता है। यद्यपि वर्त्तमान काल में सारे भारत के साथ कारमीरी जन-समाज पर भी आधुनिक पाश्चात्य सभ्यता का काफी प्रभाव पड़ चुका है और पुरुषों के पहनावे में तो पर्याप्त परिवर्त्तन के चिन्ह दिखलाई देरहे हैं। यहां तक कि हिन्दू और मुसलमानों के पहनावे में भेद तक करना कठिन हो गया है। अगस्त ४७ में महात्मा गांधीजी तक ने अपनी प्रार्थना सभा में आये हुए कारमीरी जनसमूह के विषय में श्रीनगर में यह उद्गार प्रकट किये थे कि मेरे लिए तो यहां पर हिन्दू मुसलमान को पहिचानना भी कठिन है क्योंकि एक से वेष धारण करने पर केवल बाहरी चिन्हों के द्वारा ही किसी प्रकार भेद सम्भव था अन्यथा नहीं।

प्रत्येक काश्मीरी की पर्याप्त समय से आपस में धार्मिक विभिन्नता के होते हुए भी उन सबमें आधार भूत एकता उसी प्रकार जीवित है जिस तरह शेष भारत में साम्प्रदायिक विभिन्नता रहते हुए भी सामाजिक और सांस्कृतिक ऐक्य रहता रहा है। काश्मीर के रहने वालों के लिए धर्म एक वैयक्तिक विषय रहा है जिसने उन्हें भूत कालीन सांस्कृतिक और ऐतिहासिक परम्पराओं से विमुख नहीं होने दिया है। निरन्तर परिश्रम और स्वावलम्बन पर आधार भूत काश्मीरियों का जीवन शान्ति-प्रिय एवं आनन्द पूर्वक बिताने की अभिलाषा से पूर्ण होने के कारण उनकी प्राकृतिक समानता भली प्रकार समझ में आजाती है।

काश्मीर की समस्या

जहां काश्मीर में हमने एक ओर वह जन-जागरण देखा, जिसके साये में बार-बार आघात सह कर, साम्राज्यवादी षडयन्त्रों और साम्प्रदायिक कठमुल्लाओंके भ्रान्ति-प्रचार के धूम्र-जालको दूर हटा कर जन-बल एक ठोसचट्टान की तरह आततायीके मुकाबले में दृढ़ता से अड़ा खड़ा है, वहां दूसरी ओर हमने वह काश्मीर भी देखा, जो अपने कुसंस्कारों, अन्ध परम्पराओं, संकीर्णताओं और अदूरदर्शिताके कठघरेमें बन्द, बाहरकी ताजी हवा और रोशनी से वंचित रो और सिसक रहा है—वेदना या दर्द से नहीं, अपने मिटते हुए वैभव और अनीति के प्रसादको ढहता देख कर। यह है सिखों और हिन्दुओं का काश्मीर। नेशनल कान-फरेन्स की स्वाभाविक प्रगति से जैसे वे मनही मन सुखी एवं

सन्तुष्ट नहीं । पर साथ ही वे यह भी समझ बूझ रहे हैं कि जिस डोगराशाही पर उन्हें सिर्फ इस लिये नाज था कि वह 'हिन्दू' है, वह आज अपनेही पापों एवं जुल्म ज्यादतियों के बोझ से बैठी जा रही है ।

इतिहासकी दृष्टि से सिखों और हिन्दुओं को काश्मीर पर गर्व होना स्वाभाविक ही है । काफी लम्बे अरसे तक दोनों ने यहां राज किया है । नील पुराण के अनुसार वर्त्तमान काश्मीर-तराई किसी समय झील थी, जो दक्ष-कन्या सतीके नाम पर 'सतीसर' कहलाती थी । इसीके बीच में हरमुख पर्वत था, जिस पर हर (शिव) तपस्या करते थे । इस झीलमें अनेक राक्षस विचरा करते थे, जो आसपास के आदमियों एवं ऋषियोंको मार डाला करते थे । जब ब्रह्माके पौत्र कश्यप ऋषि इधर आये, तो वे राक्षसों के अत्याचारों से बड़े क्षुब्ध हुए । उन्होंने आर्यावर्त्त के राजा चन्द्र-देव को यहां निमन्त्रित किया, जिसने अपने मित्र नीलनाग की सहायता से राक्षसों को पराजित किया (महाभारत से १००-१५० वर्ष पूर्व) और ब्रह्मावर्त्त (वर्त्तमान कुरुक्षेत्र) तथा आर्यावर्त्त (वर्त्तमान कन्नौज) से लोगों को बुला कर यहां बसाया । २००० ई० पू० तक यहां कोई स्थाई और दृढ़ शासन कायम नहीं हो सका । २५० ई० पू० में अशोक की सेनाओं ने इस पर विजय प्राप्त कर इसे अशोक के साम्राज्य में मिला लिया । तदुपरान्त यहाँ बौद्धमत का इस तेजी से प्रचार हुआ कि ब्राह्मण तक बौद्ध प्रचारक बन गये । कुछ समय बाद इस पर तातारों का और फिर कनिष्क का अधिकार हो गया । इसके बाद हूणों ने आक्रमण कर इसे खूब लूटा-सताया । ह्यूनसांग के कथनानुसार हूण-राजा मिहिरगुलने यहां बड़े जुल्म किये । इसके कई वर्ष बाद फिर यहां

काश्मीरी हिन्दुओं का राज हुआ। इनमें ललितादित्य (७१५-५२ ई०) और अवन्तिवर्मन (८१३-५५) ने काश्मीर की काफी उन्नति की और यहां अनेक प्रसिद्ध मन्दिर आदि बनवाये। १४ वीं शताब्दी तक यहां हिन्दुओं का राज रहा, जिसके बाद फिर पश्चिम से विदेशी जातियों के आक्रमण आरम्भ हुए।

सुना जाता है कि १३२२ ई० में जुल्फी कादिर खां ने काश्मीर पर हमला किया और भीषण लूट-मार के बाद ५० हजार ब्राह्मणों को कैदी बनाकर ले गया। इससे पूर्व मोहम्मद गजनवी ने भी एक असफल हमला किया था। १३४१ ई० में काश्मीर की महारानी कुटारानी ने, जिसका पति तातारी आक्रमण से भयभीत होकर तिब्बत भाग गया था, अपने मन्त्री शाह मीर द्वारा षड्यन्त्र रचकर राज्य पर अधिकार कर लिये जाने और उससे विवाह करने के कुचक्र को व्यर्थ करने के लिये आत्म-हत्या कर ली। इसके बाद काश्मीर में शाह मीर के उत्तराधि-कारी कई सुल्तानों का राज रहा। फिर कुछ समय तक चाकों (शियाओं) का राज रहा। जब तक कि अकबर की सेनाओं ने जीत कर काश्मीर को मुगल साम्राज्य में न मिला लिया। मुगल-शासन में काश्मीरमें शान्ति स्थापित हुई और इसकी काफी समृद्धि भी हुई। १७५० के लगभग में अफगानशाह अहमदशाह दुर्रानीने इस पर कब्जा कर लिया। १८१६ में रणजीतसिंह की सेनाने इस पर कब्जा किया। १८४६ में सिखोंको पराजित कर ईस्ट-इण्डिया कम्पनी की सेनाओं ने इसे ७५ लाख में जम्मू के डोगरा राजा गुलाब सिंह को बेच दिया। गुलाबसिंह की मृत्यु (१८५७ ई०) के बाद रणबीरसिंह ने और उसके बाद प्रतापसिंह (१८८५ ई०)राज्यमें कई सुधार किये। वर्त्तमान महाराज हरीसिंह (१६२५)

का शासन प्रतिगामी और परम्परानुवादी व्यवस्था के सिवा अन्य किसी दृष्टि से उल्लेखनीय नहीं।

उपर्युक्त विवरण से हमें दो बातों का सूत्र मिलता है। पहली तो यह कि कश्यप ऋषि ब्रह्मावर्त्त और आर्यावर्त्त से जिन ब्राह्मणों को काश्मीर ले गये थे, वे बौद्ध, अफगान, तातार, सिख, हिन्दू (डोगरा) आदि शासनों में भी पुरोहित के रूप में राज-काज से सम्बन्धित रहे। दूसरी यह कि सिख शासन के समय तथा उसके बाद में जो सिख सैनिक और नागरिक आदि काश्मीर गये, वे वहीं बस गये। इन दोनों जातियोंके लोगों ने न सिर्फ काश्मीर को अपना घरही बनाया, बल्कि पराजित और अधिकारच्युत होने पर भी उस पर अपना विशेष अधिकार समझते रहे। आज भी काश्मीर की ऊंची और प्रधान नौकरियां ब्राह्मणों के हाथों में हैं तथा पुलिस और सेना में सिख काफी हैं। इसके विपरीत तातार, अफगान, चाक, शिया आदि मुस्लिम जातियों ने—जिनके उत्तराधिकारी, गुमास्ते, सैनिक आदि आक्रमण की सफलताके बाद काश्मीर में ही बस गये—काश्मीर पर आक्रमण कर लूट-मार और अपहरण आदि किया, जिससे हिन्दुओं और सिखों में उनके प्रति दुर्भाव और अविश्वास पैदा होगया तो क्या आश्चर्य ? यह दुर्भाव और अविश्वास आज भी किसी हद तक मौजूद है यह केवल ब्राह्मण और सिख नागरिकों अथवा अधि-कारियों में ही हो, ऐसी बात नहीं है, काश्मीर के अनेक राजाओं के आचरणों में भी इसकी झलक दिखाई देती है। इस स्थितिमें यदि मुस्लिम-जनता में जिसकी आबादी ६७ से ९५ प्रतिशत तक है डोगरा-शासन और उसका वाहन बने हिन्दुओं और

सिखों के प्रति क्षोभ एवं असन्तोष हो, तो आश्चर्य की क्या बात है ?

तथा कथित कबाइलियों के आक्रमणों के दौरान में हुई लूट-मार, बलात्कार और अपहरण के जो विवरण हमारे सामने आये, उनसे यह स्पष्ट है है कि इनके शिकार सिख और हिन्दू ही ज्यादा हुए हैं। पर इसका कारण सर्वथा इतिहास में खोजना भी भूल होगी। हमें इसके दो कारण बताये गये, प्रथम तो यह कि आक्रमणकारी पूर्वी पंजाब, दिल्ली और जम्मूमें सिखों तथा हिन्दुओं द्वारा मुसलमानों पर हुए जुल्मों का बदला लेने आये थे। दूसरा यह कि पैसा और जेवर वगैरहा (और) स्त्रियां भी ! सिखों और हिन्दुओं के पास ही ज्यादा थीं। जो भी हो, इससे मुसलमानों के प्रति हिन्दुओं और सिखों के दुर्भाव एवं अविश्वास में वृद्धि ही हुई और कई नेक दिल मुसलमानों के स्थिति संभालने के प्रयत्न भी बेकार सिद्ध हुए। यह देखकर कि हम हिन्दुस्थान से आये हैं और हिन्दू हैं यद्यपि हमने इस तरह से न कभी सोचा और न किसी से कुछ कहा ही), कई हिन्दुओं ने हमसे कहा—'आपने यहां कुछ देखा सुना ? इन मुसलमानों का कोई भरोसा नहीं। ये फिर हमपर राज करनेके स्वप्न देख रहे हैं।' हमारे यह पूछने पर कि कैसे, हमसे कहा गया—'मुसलमान मुसलमान सब एक सलतनत में रहना चाहते हैं। ये सिर्फ पाकिस्तान में शामिल ही नहीं होना चाहते बल्कि इनका ख्याल है कि बहुसंख्यक होने के कारण काश्मीर इन्हें मिलना चाहिये और उस पर इन्हीं का शासन होना चाहिये। हम लोगों की अब यहां खैर नहीं।' हमारे मुंह से यही निकला—'अगर वाकई आपकी यहां खैर नहीं और भाग जाना ही आपका एक मात्र

कर्त्तव्य है तब तो भारत-सरकार शायद बेवकूफ है कि काश्मीर को बचाने के लिये ४ लाख रुपये रोज खर्च कर रही है।'

हमें ताज्जुब इस बातपर हुआ कि जब सिख और हिन्दू राज्यकीबड़ी बड़ी नौकरियां हथियाये बैठे हैं और जिन्होंने बहु-संख्यक मुसलमानों को उनके न्याय अधिकार दिये जानेके बदले में उनपर होनेवाली जुल्म ज्यादतियों का इसलिये समर्थन किया है कि वे विधर्मियोंके साथ हुए हैं, वे ही आज मुसलमानों की शिकायतें करते हैं। काश्मीर के महाराजाने वहां की गरीबीको दूर करने या जनताको नागरिक अधिकार देना तो दूर रहा, उल्टे उसपर नये नये कर लगाये और उन्हें फौजें भेजकर वसूल करवाया। न मालूम कितने तरह की बेगारें आज भी बाकायदा ली जाती हैं। कई जगह (उदाहरणार्थ पुन्छके एक गांवमें) तो कहते हैं कि किसी एक व्यक्ति द्वारा कर देने की असमर्थता प्रकट की जाने पर डोगरा—फौज ने समूचा गांव ही फूंक दिया था। ऐसे गांव के मुसलमानों ने यदि कबाइलियों का साथ दिया या उनके साथ मिलकर हिन्दुओं और सिखों को लूटा, तो इसमें किसका दोष है? आखिर मुसलमान भी इन्सान हैं और उन्होंने भी एक अर्से तक काश्मीर पर राज किया है। अगर वे डोगरा-शाही की जुल्म ज्यादतियों से नजात पाने का सोचें, तो उसमें अस्वाभाविक क्या है?

भारत में जैसी राजनीति मुस्लिम लीग की रही है, वैसी ही काश्मीर में अधिकांश हिन्दुओं और सिखों की भी रही है। जिस प्रकार भारत में स्वाधीनता के लिये लड़ने वालों में अधि-कांश कांग्रेसी हिन्दू ही थे और लीगी उनका विरोध करने के

पुरस्कार स्वरूप सरकार से कुछ राजनीतिक टुकड़े पा जाते थे उसी प्रकार काश्मीर में भी नागरिक अधिकारों एवं जिम्मेदार हुकूमत की मांग अधिकांश मुसलमानों ने ही की (क्योंकि डोगरा-शाही के अभिशाप का अधिकांश में उन्हीं को शिकार होना पड़ा था) और हिन्दू तथा सिख (जो अपनी आबादी के अनुपात से कहीं अधिक नौकरियां हथियाये बैठे थे) बराबर राज्य के साथ ही रहे। उन्हें स्वस्थ राजनीति के अभाव में अपने अधिकारों, सुख, शान्ति और नौकरियों के लिये किसी संगठित जन-मोर्चे की बजाय महाराजा की कृपा पर ही अधिक भरोसा था। इससे कई मुसलमानों ने यह शिकायत की कि यहां के हिन्दू और सिख इसी तरजीह के कारण कभी किसी राजनीतिक तहरीक में काफी संख्या में शरीक नहीं हुए। इससे मुसलमानों का उनके प्रति रोष होना स्वाभाविक ही है। पर जहां जहां कबाइलियों का अधिकार हुआ और महाराजा का हाथ हिन्दुओं एवं सिखों की रक्षा नहीं कर सका, वहां वे स्थानीय मुसलमानों की दया पर ही छूट गये। कुछ को इस स्थिति में अपने जान-माल से हाथ धोना पड़ा और कुछ की स्थानीय आबादी ने अपने प्राणों को जोखिम में डाल कर भी रक्षा की। ऐसे अनेक हिन्दू और सिख, जो कुछ तो मजबूरन और कुछ बाद में स्वेच्छा से मुसलमान हो गये हैं, अब वापस अपने धर्म में आने को तैयार नहीं। उन्हें भय है कि गैरमुस्लिम होकर वे अधिक दिन मुस्लिम-गांवों में सुरक्षापूर्वक नहीं रह सकेंगे।

काश्मीर गांवों की लूट का वर्णन, जो बहुत कुछ पत्रों में आ चुका है, यहाँ असामयिक ही नहीं अरुचिकरसा भी प्रतीत

होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जब कबाइलियों ने मुजफ्फराबाद पर आक्रमण किया, तो उनका मुख्य उद्देश्य हिन्दुओं और सिखों को ही लूटना-मारना था। इसीलिये उनका नारा था 'सरदार का सर और हिन्दू का जर!' हमारे सामने ऐसे दुखद उदाहरण आये, जहां (विशेप तौर पर मुजफ्फराबाद और बारामूला में) कई स्थानीय मुसलमानों ने लीगी गुर्गों के बहकावे में आकर कबाइलियों का साथ दिया। अनेक स्थानों में लूट में भी वे शामिल थे। लीग के हिमायती जिस डोगरा शाही से मुसलमानों को उद्धार करने का दम भरते हैं, उसी डोगराशाही के टुकड़ों पर पलने वाले अनेक लीगी अधिकारियों ने गैरमुस्लिम जनता को लूटने-मारने की पाकिस्तानी योजना की रूप रेखा बनाने में मदद की है और हमला होने पर न सिर्फ स्वयं ही, बल्कि अपने अमले के साथ कबाइलियों के साथ शिरकत भी की है। रेवेन्यू, जंगलात और पुलिस विभागों के अनेक उच्च पदाधिकारियों को इन जुरमों में गिरफ्तार किया गया है। अब तक उन पर कैसा मुकद्मा चलाया जायगा या उन्हें क्या सजा दी जायगी इस सम्बन्ध में हमारे सुनने में कुछ नहीं आया।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि ऐसे मुसलमानों की संख्या अधिक नहीं है, पर इनके जुरमों का गुरुत्व काफी बड़ा है। जिन ऊंचे और जिम्मेदार पदों पर ये थे, उनके अधिकारों का सर्वथा दुरुपयोग कर और जिस राज्य के टुकड़े पर ये पलते रहे थे, उसके प्रति नमकहरामी कर इन्होंने काश्मीर के लोगों में हिन्दू मुस्लिम विद्वेष का वह जहर भरा है, जिसके दुष्परिणाम की अभी केवल कल्पना ही की जा सकती है। इन्हीं के जहरीले प्रचार का

फल नेशनल-कान्फ्रेंस को आज भोगना पड़ रहा है। जिन स्थानों को भारतीय सेना ने कबालियों को भगा कर वापस अपने अधिकार में ले लिया है, वहां लीग के अनेक प्रचारक हिन्दुओं के वापस बसाये जाने में तरह-तरह की बाधाएं खड़ी कर रहे हैं। एक तो वह लूट-मार के कारण अपने घर-गांव छोड़कर भागे हुए हिन्दू और सिख स्वयं अपने पुराने स्थानों में जाकर फिर आबाद होने को उत्सुक एवं राजी नहीं, फिर कतिपय मुसलमानों के रुख से तो वे और भी अनिच्छा दिखाने लगे हैं। कई जगह स्थानीय मुसलमानों ने अपने हिन्दू और सिख पड़ोसियों का जो माल लूटा है, वे उसे वापस करने को तैयार नहीं। यदि नेशनल कान्फ्रेंस, जो आजकल काश्मीर का अन्तरिम शासन संभाले हुये है, उन्हें लूट का माल लौटाने के लिये मजबूर या राजी करती है, तो लीग की तरफ से कहा जाता है कि महाराजा के हिन्दू नौकर मुसलमानों पर असाधारण जुल्म ज्यादतियां कर रहे हैं जिससे मुसलमानों को काश्मीर छोड़ने पर मजबूर होना पड़ रहा है। पर सचाई यह है कि इन बदमाश और लुटेरे मुसलमानों के साथ भी नेशनल कान्फ्रेंस बड़ी नरमी और समझदारी से पेश आरही है। हमने जब उसके कुछ मंत्रियों से इस रुख के पुनर्वास की व्यवस्था में बाधक होने की बात कही, तो वे बोले निःसन्देह इससे कार्य उस गति से तो नहीं हो पा रहा था जिससे कि होना चाहिये। पर हम मुसलमानों के साथ इसलिये भी जान बूझ कर सख्ती नहीं कर रहे कि कल यदि जनमत-संग्रह हो, तो उन्हें अपने सहधर्मियों को बरगलाने का यह नया बहाना न मिले! इससे एक ओर जहां हिन्दू और सिख नेशनल कांफ्रेंस की नीति से जरा असन्तुष्ट हैं वहां मुसलमानों पर कोई खास असर

पड़ा नहीं देखा गया। उनकी राजनीति के पीछे एक शरारत भरी स्वार्थ- नीति है जिसका सचाई, ईमानदारी और भलमंसाहत से कोई वास्ता नहीं। नेशनल कान्फ्रेंस को जिसे एक ओर महाराजा की संकीर्णता के कारण अभी पूरे शासनाधिकार भी प्राप्त नहीं हैं और दूसरी ओर जनमत संग्रह में मुसलमानों के विद्रोह के डर से उनके साथ जायज सख्ती भी नहीं की जा रही, जिससे हिन्दुओं एवं सिखों में असन्तोष ही नहीं, कान्फ्रेंस के मुस्लिम-पक्षीय होने तक की बात कही जा रही है। इस समय जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है उनकी बाहर के लोग ठीक ठीक कल्पना भी नहीं कर सकते। आज उसके सामने दो विकल्प हैं। मुसलमानों पर सख्ती कर हिन्दुओं और सिखों को लूटा हुआ माल वापस दिलाना या काश्मीर को पाकिस्तान में जाने से बचाना। पर इसका मतलब यह नहीं कि हिन्दुओं और सिखों का लूटा हुआ माल मुसलमानों से वापस दिलाने की कान्फ्रेंस ने कोई चेष्टा ही न की हो। यह माल कबाइलियों द्वारा लूटे गये माल का एक बहुत छोटा सा अंश ही था लोगों को समझा बुझाकर इसे वापिस दिलाने के लिये कान्फ्रेंस ने प्रयत्न किया है और इसमें वह सफल भी हुई है। इसी प्रयत्न के फलस्वरूप अब कई स्थानों पर मुसलमान स्वयं आगे आकर लूट का माल लौटा रहे हैं।

काश्मीर से लौटने के बाद एक प्रश्न जो अकसर हम से पूछा गया और आज भी पूछा जाता है, वह यह है कि काश्मीर में यदि जनमत संग्रह हो, तो वह भारत के साथ रहेगा या पाकिस्तान के साथ? जो कुछ हमने काश्मीर में देखा-सुना और लोगों से पूछ पाछ की उसके आधार पर हमें तो अधिकांश लोग

नेशनल कान्फ्रेंस और शेख अब्दुल्ला के पक्ष में ही नजर आये। जैसा कि हम पहले कह आये हैं अर्थनीतिक दृष्टि से काश्मीर की अस्तित्व-रक्षा के लिये हिन्दुस्तान के साथ उसका सम्बन्ध रहना जरूरी सा हो जाता है। यह मसला साम्प्रदायिक कदापि नहीं है। पर एक खतरा नजर दिखाई देता है। वह यह कि लीग के गुप्त और प्रकट रूप से होने वाले जिस प्रचार कार्य का हमें काश्मीर में परिचय मिला और जिसका उत्तर-पश्चिम सीमा-प्रान्त में प्रयोग किये जाने की बात हमने सुनी है, उससे हमारी यह आशंका है कि असत्य और अर्द्धसत्य द्वारा लीग वाले काश्मीर के भोले भाले लोगों को धोखा शायद दे सकें। उदाहरण के तौर पर यदि उत्तर पश्चिम सीमान्त की तरह काश्मीर में भी वे मतदाता के हाथ पर कुरान रखकर उससे कहें कि यह कुरान और नबी को रजील करने वाले काफिरों के साथ रहना चाहते हैं या अपने हम मजहब पाकिस्तानियों के साथ, तो ताज्जुब नहीं कि अज्ञ और धर्मभीरु ग्रामीण मुसलमान इस प्रोपेगंडा की शरारत के शिकार हो जाये साथ ही हमें यह भी विश्वास है कि नेशनल कान्फ्रेंस इस शरारत से वहां के मुसलमानों को बचाने की चेष्टा अवश्य करेगी। इसके लिये कान्फ्रेंस के हाथ मजबूत किये जाने चाहिये। और वह तभी सम्भव है जब कि शासन की पूरी जिम्मेदारी और पूरे अधिकार कान्फ्रेंस को सौंप दिये जायं। आज तो महाराजा और भारत सरकार का मतभेद तथा आशकाएं इसमें बाधक सिद्ध हो रही हैं। पता नहीं इनसे वे कब मुक्त होंगे।

काश्मीर का मन्त्रि मण्डल

आज संसार का कौनसा ऐसा शिक्षित मानव होगा जिसने भारत की स्वर्गभूमि काश्मीर का नाम न सुना हो। भारतीय जन समाज के लिए तो काश्मीर का स्थान वैसा ही है। जैसा कि मनुष्य शरीर में गले से ऊपर के भाग का हो सकता है। काश्मीर के मनोहर उपवन वाटिकाऐं रमणीय उद्यान, प्राकृतिक विशालकाय सुन्दर और निर्मल स्रोत एवं झरने, बड़ी २ झीलें, कौनसा ऐसा सहृदय प्राणी होगा जिसे वह आकृष्ट न करें? भारतीयों के लिए ही नहीं सभ्य संसार का प्रत्येक व्यक्ति भारत में आकर भी यदि काश्मीर न देख सका तो यह उसका दुर्भाग्य ही समझना चाहिए। आज यदि कोई व्यक्ति संसार के किसी दूर कोने में जाता है तो सर्व प्रथम उससे यही पूछा जावेगा कि क्या तुमने महात्मा गान्धी को देखा था? और क्या कभी तुम काश्मीर गये हो? यह दूसरा प्रश्न होगा।

काश्मीर यद्यपि भारत की ५२६ देशी रियासतों में से एक रियासत है जो कि भारत भूमि के मस्तक पर पूर्व से पश्चिम तक ८४४७१ वर्ग मील के क्षेत्रफल का विस्तार लिए हुए अन्य सभी रियासतों से भूमि की दृष्टि से बड़ी है। इसका शासक हिन्दू होते हुए भी यहां पर जनता का बहुमत इस्लाम धर्म का अनुयायी है! और कुल जन संख्या का तीन चौथाई भाग मुसलमान होते

हुए भी वहां का मुसलमान अन्य स्थानों के रहने वाले मुसलमानों की भांति धर्मान्ध नहीं हैं। १९४१ की जन गणना के अनुसार कुल जन संख्या ४०,२१,६७६ थी जिसमें से ३१,०१,२४७ मुसलमान ८,०९,१६३ हिन्दू, ६५,९०३ सिख ४०, ६९६, बौद्ध और ४,६०५ अन्य धर्मावलम्बी थे। प्राचीन काल से काश्मीर का शासन हिन्दू धर्मावलम्बी राजाओं के हाथ रहा था यह तो इतिहास से ही पाठकों को विदित हो चुका है। अशोक के समय यहां पर बौद्ध धर्म का प्रचार किया गया था और १५८८ में मुगल सम्राट अकबर ने काश्मीर को पूर्ण रूप से अपने पूर्व कालीन मुसलमान शासकोंसे छीनकर अपने साम्राज्य का अङ्ग बना लिया था! औरङ्गजेब की मृत्यु के समय १७०७ से कुछ काल बाद तक १७५६ तक मुगलवंश के आधीन रहकर काश्मीर फिर अहमदशाह दुर्रानी एक अफगान शासक के हाथ में चला गया था। जिसको १८१८ में सिक्ख महाराजा रणजीत सिंह ने जीत कर अपने राज्य का अङ्ग बना लिया था! अधिक समय तक सिख राज्य भी न रहसका और १८४६ में सिखों की पराजय होजाने पर लाहोर की सन्धि में १ करोड़ रुपये के बदले में काश्मीर और पंजाब का सिंध तक का इलाका अंग्रेजों के हाथ में चला गया। जिसको तत्कालीन जम्मू के जागीरदार और महाराजा रणजीत-सिंह के एक योग्य सेनापति एवं अंग्रेजों के कृपापात्र महाराजा गुलाबसिंह ने ७५ लाख रुपये नकद देकर काश्मीर के इलाके को अपने अधिकार में कर लिया था यही गुलाबसिंह हैं जिनके वंशज काश्मीर पर अभी तक राज्य करते रहे हैं। महाराजा हरीसिंह चौथे राजा हैं और उनके पुत्र वर्त्तमान वैधानिक शासक कुंवर कर्णसिंह पांचवें शासक समझे जा सकते हैं!

१५ अगस्त १९४७ से पूर्व सभी रियासतों की भांति काश्मीर को भी अंग्रेजी सत्ता का संरक्षण प्राप्त था अतः कोई भी साम्प्रदायिक या राजनैतिक उपद्रव या तो होता ही नहीं था अथवा अंग्रेजों की शक्ति से दबा दिया जाता था। अंग्रेजी सरकार के स्वार्थों में किसी प्रकार की हानि यदि न हो तो उन्हें उपद्रव से कोई खास मतलब भी नहीं रहता था। पिछले १५ वर्षों से भारत की राजनैतिक जागृति का काश्मीर पर भी अच्छा प्रभाव पड़ा और कुछ नौजवानों ने संगठित होकर आज की इस नेशनल कान्फ्रेन्स को जन्म दिया। जो कि बालक अवस्था से इस प्रोढ़ावस्था को श्रीअब्दुल्ला के नेतृत्व में प्राप्त हो चुकी थी। राजनैतिक आन्दोलन २-३ वर्षों से काफी जोर पकड़ चुका था इतने में ही कूटनीतिज्ञ अंग्रेजों ने भारत का विभाजन करने में ही अपनी स्वार्थ सिद्धि समझ पाकिस्तान और हिन्दुस्तान में भारतभूमि को बाँट दिया। क्योंकि देशी रियासतें अंग्रेजों की दासता में शेष भारत की तरह न थीं इसीलिए अपने आपसी समझौतों द्वारा अंग्रेजी सत्ता के भारत में से जाते ही ये रियासतें भी स्वतन्त्र होगईं। अब जैसा वह चाहें पाकिस्तान के साथ अपना सम्बन्ध रखें चाहें हिन्दुस्तान के अथवा स्वतन्त्र रूप में रह सकती थीं। इन दोनों देशों की भौगोलिक स्थिति को देखते हुए बहुत सी रियासतों ने दोनों में से किसी एक का आश्रय ग्रहण कर लिया था। हिन्दुस्तान के विशालकाय होने के कारण अधिक रियासतों ने हिन्दुस्तान के साथ सन्धि करली परन्तु मुसलमानी कुछ रियासतों ने हिन्दुस्तान में होते हुए भी पाकिस्तान से मिलना चाहा जिसका वहाँ की रहने वाली जनता द्वारा विरोध किये

जाने पर अन्त में भारत से ही उनको भी मिलना पड़ा हैदराबाद में जो संघर्ष चला वह भी सबको मालूम ही है और यह सर्वथा वहां के शासकवर्ग की पाकिस्तानी मनोवृत्ति के कारण था, जनता का बहुमत भारत के पक्ष में था अतः भारत सरकार ने सैनिक कार्यवाही से उस उपद्रव को पुष्पावस्था में ही समाप्त कर दिया। रहा काश्मीर वहां के अदूरदर्शी मन्त्रीमण्डल एवं स्वयं महाराजा की नीति कुशलता न होने के फलस्वरूप पड़ौसी पाकिस्तान के निवासी और महाराजा के विरुद्ध रहने वाले जन समूह ने षड्यन्त्र रचकर काश्मीर पर हल्ला बोल दिया। यदि पहिले से ही काश्मीर की जनता की सहानुभूति प्राप्त नेताओं के सहयोग से वहां के शासक, जनमत को अपने पक्ष में करते तो न उन्हें कबालियों का शिकार बनना पड़ता और न हिन्दुस्तान की सहायता की भीख मांगनी पड़ती। हिन्दुस्तान की सहायता यद्यपि किसी बुरी नियत से नहीं दी गई तो भी लोगों को यह अनुमान करने के लिए अवसर प्राप्त होगया है कि यदि भारत सरकार अपना कुछ स्वार्थ न देखती तो जनमत गणना के आधार पर ह काश्मीर का स्थायी रूप से भारत में मिलने की शर्त को क्यों रखती? और क्यों अतुल धन-राशि खर्च करती? क्योंकि जनमत भारत के ही पक्ष में होगा इसका निश्चय होना तो कठिन ही नहीं इस हालत में असम्भव ही है जबकि अभी तक यही निश्चय नहीं हुआ कि ऐसी हालत में जनमत लिया भी जायगा या नहीं। तब फिर इतने अधिक मंहगे सौदे को करना जिसमें हमें यह भी सन्देह हो कि पैसे भी हमारी जेब से निकल जायेंगे और सौदा भी हाथ नहीं आवेगा हमारी समझ

में तो नहीं आया । शायद यह भी राजनीतिज्ञता की कोई चाल ही हो । काश्मीर के रहने वाले हिन्दुओं का दृष्टिकोण सदैव ही वहां पर होने वाली राजनैतिक जागृति के विरोध में रहा है अतः मुसलमानों की दिली हमदर्दी तो न वहां के शासक को और नहीं वहां रहनेवाली हिन्दू जनता को प्राप्त होसकती है । यह ठीक है कि आड़े वक्त में जिस प्रकार शेख अबदुल्ला के नेतृत्व में काश्मीरी मुसलमान जनता ने हिन्दू रक्षा का व्रत लिया था उसे उन्हों ने बहुत अंश तक निभाया और ऐसा निभाया कि जिसका उदाहरण और कहीं मिलना तो कठिन है परन्तु सरहद के खान बन्धुओं में ज्यादा गौरव के साथ मिल सकता है । किसी विशेष परिस्थति के वश में यदि कोई काम न किया जावे वोह उतना प्रशंसनीय नहीं हो सकता जितना कि किसी बुरे कार्य क अपने दिमाग में भी न लाना हो सकता है। फलस्वरूप काश्मीर के मुस्लिम व हिन्दू दोनों ही का मिलकर बहुमत हिन्दुस्तान के पक्ष में होने के कारण उन्होंने पाकिस्तान में मिलना स्वीकार न किया । पाकिस्तान के पक्ष में रहने वाली काश्मीरी जनता जो कि पहली की अपेक्षा नगण्य थी अपनी उद्देश्य पूर्ति को न देखकर धर्म की आढ़ लेकर अपने समान धर्मावलम्बियों से सहायता मांगकर एक शत्रु सेना का रूप धारण करने लगी । और पाकिस्तान अपनी आकांक्षाओं की इस प्रकार पूर्त्ति देखकर उन इकट्ठे हुए धर्मान्ध समानधर्मियों का सभी प्रकार से सहायक होगया । इस प्रकार के आक्रमण में इन धर्मान्ध मुसलमानों ने जो अत्याचार किये वह पंजाब और नौआखली के ही समकक्ष रखे जा सकते हैं पाकिस्तानी षड़यन्त्र को दृष्टि में रखकर

ही आपत्तिकाल में महाराजा काश्मीर ने हिन्दुस्तान से सन्धि करली और काश्मीरी प्रजा की रक्षा के लिए सहायता मांगी। अबतो काश्मीर की सभी प्रकार की व्यवस्था में भाग लेने का काश्मीर के शासक के स्थान पर भारत सरकार का कर्त्तव्य और उत्तर दायित्व होगया।

नेहरू मन्त्रिमण्डल की सलाह से महाराजा हरिसिंह ने काश्मीरी बहुमत के प्रतिनिधी शेखसाहब को बुला कर वहां पर एक मन्त्रिमण्डल बनाने का प्रस्ताव रखा और स्वयं शेख साहब को उस मन्त्रिमण्डल का प्रधान मन्त्री बना दिया। अन्य मन्त्रि-गण भी जनता की सहानुभूति प्राप्त व्यक्ति हैं जिनका संक्षेप से परिचय निम्न लिखित है।

१—प्रधान मन्त्री शेखअब्दुल्ला का जन्म श्रीनगर के समीप सौर नामक गांव में १६०५ में हुआ था। माता पिता की बाल्य काल में ही मृत्यु हो जाने के कारण घरेलू व्यवस्था ठीक न रहते हुए भी परिश्रम से स्थानीय स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करके ऊंची कक्षाओं में अध्ययन के योग्य बनते ही आप अलीगढ़ के मुस्लिम विश्वविद्यालय में आकर प्रविष्ट हो गये थे। जहां से उन्हें १६३० में एम० एस० सी० की परीक्षा में उत्तीर्ण होते ही श्रीनगर के सरकारी स्कूल में अध्यापक का स्थान मिल गया था। सन् १६३१ में सरकार विरोधी आन्दोलन में आपको गिरफ्तार करलिया गया था। और बाद में रियासत में बगावत फैलाने के अपराध में ६ वर्ष की कठोर कारागार यातना सहनी पड़ी। जब से पण्डित नेहरू का प्रभाव राजनैतिक क्षेत्र में बढ़ा, स्वाभाविक ही था कि कि शेख अब्दुल्ला पर भी उनका प्रभाव पड़ता। सर्व प्रथमतो

नेहरू जी की काश्मीर में रुचि और दूसरे उनकी पक्षपात रहित मनोवृत्तिने शेख अब्दुल्ला को नेहरू जी का भक्त बना दिया। जिसके कारण देशीराज्य परिषद् का कई बार अध्यक्ष पद पर सफलता के साथ काम करना दोनों की मित्रता में और भी अधिक सहायक होगया। शेखअब्दुल्ला हिन्दी के प्रेमी हैं जब कभी अध्यक्ष पदके नाते उन्होंने देशीराज्यपरिषद् में हस्ताक्षर किये वह एक अच्छे हिन्दी जानने वाले से कम अच्छी हिन्दी में नहीं होते थे। आपके ही नेतृत्व में आज जनप्रिय सरकार काम चला रही है।

२—उप प्रधान मन्त्री- गुलाम मोहम्मद बख्शी आपका जन्म १६०७ में काश्मीर भूमि में हुआ। सन् १६३१ में ही आपने भी जनअन्दोलन में भाग लेना आरम्भ किया था। आप शेख साहब के दायेंहाथ कहे जाते हैं। आप भिन्न २ अपराधों में ४ बार गिरफ्तार किये गये, आपही शेखसाहब की अनुपस्थिति में उनका कार्य सम्भाला करते हैं आज आपके पास उप प्रधान एवं गृहमन्त्री पद का भार है।

३—मिर्जा मोहम्मद अफजल बेग का जन्म १६०६ में श्रीनगर जिले की अनन्तनाग (इस्लामाबाद) तहसील में हुआ था सन् १६३२ में बी० ए० पास करके अलीगढ़ विश्वविद्यालय में आपने कानून की शिक्षा प्राप्त की, आप यद्यपि पुराने राजनैतिक कार्यकर्त्ता नहीं हैं तो भी बाद में आपने काश्मीरी जनता और विशेश रूप से वहां के किसानों की उन्नतिका बीड़ा उठाया था। आज आपको माल मन्त्रीका पद दिया गया है।

४—सरदार बुद्धसिंह जी भी एक योग्य प्रबन्धक तथा शेख-साहब के बहुत से सिख मित्रों में से एक हैं। आपकी आयु इस समय ७० वर्ष से भी अधिक हो चुकी है। आपको स्वास्थ व पुनर्निवास विभाग सौंपा गया है। पहले भी आप महाराजा की सरकार के माल मंत्री पद का काम बड़ी सफलता से कर चुके हैं।

५—गुलाम मोहमद साहिब भी एक जनप्रिय व्यक्ति हैं इन्हें १६४० में राज्य की धारा सभा में नेशनल कान्फ्रेन्स की तरफ से उपनेता (Deputy sepeker) चुना गया था। (काश्मीर छोड़ो) आन्दोलन के समर्थक के रूपमें आपने बहुत ज्यादा भाग लिया था। आज कल आप विकास मन्त्री (Development) विभाग को सम्भाले हुए हैं।

६—श्यामलाल सराफ एक व्यावसायिक अनुभव प्राप्त योग्य व्यक्ति ब्राह्मण जातिके हैं। शेखसाहब के काश्मीरी ब्राह्मणों में से एक मित्र हैं और शेख साहब के सहपाठी रह चुके हैं। "काश्मीर" छोड़ो अन्दोलन में आपने भी प्रमुख भाग लिया था। आज कल आप खाद्य-मन्त्री पद पर कार्य कर रहे हैं।

७—श्री गिरधारीलाल डोगरा जम्मू प्रान्त के रहने वाले डोगरा जाति के हैं। जम्मू प्रान्त में साम्प्रादायिक विष का न फैलने देना आपका ही कठिन परिश्रम था। १६४१ में आप जम्मू प्रान्त से काश्मीर नेशनल कान्फ्रेन्स की कार्य कारिणी के सदस्य बनाये गये थे। अर्थशास्त्र सम्बन्धी ज्ञान आपका बड़ा गहरा है और इसी विभाग अर्थात् अर्थ मंत्री पद को आप बड़ी सफलता से चला रहे हैं!

संयुक्त राष्ट्र संघ और काश्मीर

—:★:—

काश्मीर को आक्रमणकारियों के विरुद्ध संघर्ष करते हुए आज पूरा ढाई वर्ष हो चुका है और भी न जाने कितना समय बीत जायगा किन्तु अब तक भी कोई ऐसे लक्षण नहीं दीखते कि विश्व शान्ति के लिए दावा रखने वाली संयुक्त राष्ट्र संघ संस्था के ठेकेदार लोग कोई ऐसा संकेत देते जिससे यह जाना जा सकता कि उनमें काश्मीर की गुत्थी को सुलझाने की योग्यता और इच्छा ईमानदारी से लोग जान सकते। इसके बिल्कुल उल्टा ही परिणाम यह निकला है कि ज्यों २ हमारे देश के कर्णधारों ने मानवता के आधार पर कोई कार्य करने का प्रयत्न किया उसको कमजोरी समझकर उसका दुरुपयोग ही किया गया 'मर्ज बढ़ता ही गया ज्यों ज्यों दवा की' वाली कहावत शत प्रतिशत काश्मीर के विषय में तो तथ्य ही प्रमाणित होगई। काश्मीर की समस्या दिन ब दिन अधिक ही उलझती जारही है और आज संयुक्त राष्ट्र संघ के समक्ष जाकर तो और भी अधिक जटिल बनगई है यह इसी बात से प्रमाणित है कि जो कमीशन पश्चिम के महान् शक्तिशाली राष्ट्रों का प्रतिनिधी बनकर भारत में काश्मीर की समस्या को सुलझाने आया था वह भी असफल होकर लौट गया। यह केवल खेदका ही विषय नहीं अपितु

लज्जा.पद भी है कि इन लोगों में यदि कुछ करने की क्षमता नहीं तो ऐसा बड़ा ढोंग क्यों रच रक्खा है ।

भारत से लौट कर जाते हुए काश्मीर कमीशन के सदस्यों ने जो वक्तव्य दिया वह एक प्रकार का, उनके सवा वर्ष भारत में रहकर काश्मीर समस्या को सुलझाने के प्रयत्नों का कार्य विवरण ही था। परन्तु उसका साफ साफ मतलब यह था कि पाकिस्तान और भारत के आपस के असहयोग के कारण ही लोग सफल नहीं हो सके। और यह सच्चाई से देखने पर एक प्रकार का अभियोग लगाया गया था कि उसके काश्मीर गुत्थी को सुलझाने वाले प्रस्तावों को कभी भारत और कभी पाकिस्तान ने अस्वीकार करके उसके कार्य को कठिन बना दिया है। कितना सुन्दर होता कि अगर यह कमीशन जिस प्रकार चिकित्सक बनकर भारत आया था वास्तव में रोग उत्पन्न होने के कारणों पर ध्यान देता न कि ऊपर से ही बाह्य लक्षणों के चक्कर में फंसकर अपना समय नष्ट करके रोगी को दोषी ठहराने लगता। पंडित नेहरू ने कई बार काश्मीर कमीशन के प्रश्नों का उत्तर देते हुए उनके प्रयत्न की सराहना भी की है परन्तु साथ ही में उन्होंने यह भी कहा कि कमीशन समझौता कराने की भरसक चेष्टा कराते हुए भी पथभ्रष्ट होगया है दो वर्षों में एक बार भी वास्तविक प्रश्न पर कमिशन ने न तो अपने को केन्द्रित ही किया और न उसके ऊपर कभी स्पष्ट रूप में अपने विचार ही प्रकट किये। प्रश्न स्पष्ट था कि काश्मीर की जनता और उसके प्रतिनिधियों द्वारा आपत्काल में रक्षा के निमित्त भारत काश्मीर में अपनी सेना सहित सहायता करने गया है फिर पूछा जाय कि

काश्मीर में पाकिस्तान क्या करने गया और क्यों अभी तक उसने अपनी सेना काश्मीर में रख छोड़ी है ? अगर किसी शान्ति के ठेकेदार में शक्ति है तो वह पाकिस्तान से इस प्रश्न का उत्तर मांगे और काश्मीर से अपनी सेना को हटाने का तुरन्त आदेश देवे। एक स्पष्ट बात को इधर उधर की बातें मिलाकर कमिशन ने अस्पष्ट बना दिया है। यातो वास्तव रोग कमीशन की समझ में नही आया अथवा जान बूझकर रोग को बढ़ने की नियत से मर्ज कही था और इलाज कहीं किया गया इन दो बातों को छोड़कर ऐसे बुद्धिमान डाक्टर से और क्या आशा की जा सकती थी। साथ ही अपनी दुर्नीति की आड़ में असफलता का दोष रोगी को देने से तो वाद की बात ही सम्भव जान पड़ती है इस प्रकार सफल होने की कल्पना भी नहीं की जा सकती है।

काश्मीर कमीशन का अन्तिम प्रस्ताव यही था कि भारत और पाकिस्तान दोनों ही काश्मीर के झगड़े के निबटारे के लिए एक पञ्च की नियुक्ति को स्वीकार करलें यही बात अमेरिका के राष्ट्रपति ट्रूमैन और ब्रिटिश प्रधान मन्त्री एटली द्वारा भी समर्थन की गई थी। परन्तु जिस भारत सरकार ने वहां के वैधानिक सर्वे सर्वा महाराजा हरिसिंह या बहुमत जनता के प्रतिनिधि शेख अब्दुल्ला द्वारा प्रस्तावित काश्मीर को भारत में केवल उन्ही की इच्छा से मिला लेने को भी जनमत की ही शर्तपर वैसा करने का वचन दिया है वह इस प्रकार के अनर्गल प्रस्ताव को कैसे स्वीकार कर सकता है कि कोई एक व्यक्ति चाहे वह कितना भी प्रतिष्ठित बुद्धिमान और निष्पक्ष व्यक्ति क्यों न हो ४० लाख जनता की इच्छाओं के जाने बिना अपने निर्णय से उनके भाग्य का

फैसला करने का अधिकारी हो सकता है ? अतः भारत और काश्मीर दोनों के लिए इस प्रस्ताव को स्वीकार करना सम्भव नहीं था। पिछले वर्ष काश्मीर नेशनल कान्फ्रेन्स के वार्षिक अधिवेशन में भाषण देते हुए काश्मीर के प्रधानमन्त्री ने इस प्रस्ताव को अनुचित और अप्रासंगिक बताकर अमान्य प्रमाणित किया था। उन्होंने अपने वक्तव्य को बढ़ाते हुए कहा : 'कि हम इस पंच फैसले के प्रस्ताव को इसलिए भी स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि भावी संघर्ष की सम्भावना अन्य प्रस्तावों की अपेक्षा इस प्रस्ताव में अधिक प्रतीत होती है। काश्मीर के निवासी अपनी मातृभूमि में यूरोप की म्यूनिख की इतिहास घटना की पुनरावृत्ति नहीं करना चाहते उनका तो यह पवित्र विश्वास है कि यह पंचफ़ैसले का ढोंग आक्रमणकारी को सन्तुष्ट करने का ही साधन मात्र है। चेकोस्लावाकिया की दुर्दशा इस बात की द्योतक है कि अपराधी के प्रति सहिष्णुता बरतने से समस्या का कभी समाधान नहीं होता, जहां तक भारत सरकार का कर्त्तव्य है वह तो उसने अपने पत्र व्यवहार में स्पष्ट कर दिया था कि पंच फैसला यद्यपि झगड़े को निबटाने का एक शान्ति पूर्ण साधन होते हुए भी काश्मीर भूमि में पाकिस्तानी फौजों की उपस्थिति पंच फैसले का विषय नहीं बन सकती अपितु बिना किसी रुकावट के एक दम उसे वहां से हटा देने की कार्यवाही होनी चाहिए थी। जो बात झगड़े की नींव है और साफ समझ में आ सकती है उसको टालकर पंच फैसले का विषय बनाना कहां की बुद्धिमत्ता है। इसी से उनकी नीयत पर शक होना स्वाभाविक हो जाता है। यह तो कल्पना के बाहर और नितान्त असम्भव बात है कि काश्मीर भूमि में शत्रु सेना

के रहते हुए भी शान्ति स्थापित हो सकती है। और नहीं काश्मीर की सुरक्षा इस प्रकार सम्भव है। यह सारी बातें जिन्होंने कि काश्मीर भूमि में घुसी हुई शत्रु सेना को भंग करके विघटन होने से रोक रखा है क्या इस बात की सूचक नहीं कि पश्चिमी देशों के हृदय में छिपे हुए हलाहल विष से सिंचित ही यह पंच फैसला रूपी प्रस्ताव उपस्थित किया गया है।

काश्मीर संघर्ष अब तो एक सैद्धान्तिक संघर्ष बन चुका है। जिस पर काश्मीर-भारत का पाकिस्तान के साथ समझौता होना उसी प्रकार कठिन है जैसे कि पाकिस्तान बनने से पहिले भारत-पाकिस्तान बनाने वालों में नहीं हो पाया था और परिणाम में पाकिस्तान बना और असंख्य मानव संहार किया गया। पाकिस्तान मजहब के आधार पर दो राष्ट्रों के सिद्धान्त में विश्वास रखता है। धार्मिक और साम्प्रदायिक विष का वैमनस्य फैलाना उसके प्रधान उद्देश्यों में से एक है और वही उसकी स्थापना का आधार है जब कि भारत इस प्रकार की नीतिका कट्टर विरोधी है। यही एक विशेष गुण था जिसने काश्मीर की जनता को भारत से सम्बन्ध जोड़ने के लिए आकर्षित किया। जब तक यह उपरोक्त कार्य प्रणाली चलती रहती है भारत और पाकिस्तान में समझौता होना असंभव ही है।

दूसरे शब्दों में भारत की पाकिस्तान के साथ मैत्री की कल्पना करना एक स्वप्न ही समझना चाहिए। इसी कारण काश्मीर राष्ट्रिय कान्फ्रेन्स के अधिवेशन में विषय समिति ने कार्य समिति के पञ्च फैसले को स्वीकार न करने के निर्णय में संशोधन करके भारत से, काश्मीर का मामला संयुक्तराष्ट्र से वापस लेने

की प्रार्थना की गई है और साथ ही शत्रु सेना से अधिकृत काश्मीर प्रदेशको शीघ्र से मुक्त कराने का भी प्रस्ताव किया गया है। आज संसार के सारे राष्ट्रों के समक्ष यह निर्विवाद रूप से प्रकट हो चुका है कि संयुक्त राष्ट्रसंघ भी अपने पूर्व की लीगआफ नेशन्स की तरह एक असमर्थ और स्वार्थी व्यक्तियों के समूह की भांति एक विश्वशान्ति का ढोंग मात्र है। विचार शील व्यक्तियों को यह भी मालूम हो गया है कि संयुक्त राष्ट्रसंघ का बहुमत अपने निजी स्वार्थों की सीमा से ऊपर उठने के लिए तय्यार नहीं है। अबतो काश्मीर और भारत स्वयं ही कोई रचनात्मक समाधान सोचकर काश्मीर के भाग्य का निर्णय करना होगा। किसी तीसरी संस्था से न्याय की प्रार्थना करना और उससे निष्पक्ष न्याय की आशा करना व्यर्थ सिद्ध हो चुका है!

हमारे प्राचीन राजनीतिज्ञ महर्षि चाणक्य का यह सिद्धांत था—

"कः कालः कानि मित्राणि को देशः को व्ययागमौ।
कश्चाहं काचमें शक्ति रिति चिन्त्य मुहुर्मुहु ॥ कौटिल्य

अर्थात् किस काल में क्या करना चाहिए मित्र कौन है देश कौन है आय व्यय क्या है किसका मैं हूँ और कौन मेरा है, मुझ में क्या शक्ति है यह उपर्युक्त बातें क्षण क्षण में बार बार राजा को विचारनी चाहिए। जिस प्रकार काश्मीर का मामला संयुक्त राष्ट्रसंघ को सौंपने से खटाई में पड़ गया वह ऐसा न होता यदि चाणक्य का यह ऊपर लिखा सूत्र हमने विचार कर लिया होता। यद्यपि हमारी सरकार की सामयिक तत्परता एवं सामरिक निपुणता तथा काश्मीर की जनता एवं वहां के नेता और

शासक की बुद्धिमत्ता से जम्मू व काश्मीर पाकिस्तानी रक्त रंजित हाथों में न जाकर भी अपना एक महत्त्व पूर्ण भाग खो चुका है। जिसका कि शत्रु सेना से मुक्त कराने का प्रयत्न सारे राष्ट्र को तत्परता से करना चाहिए। और ज्यों ज्यों हम इसको सुलझाने का या सुलझवाने का प्रयत्न करते हैं त्यों त्यों वह उलझता ही जाता है जिसके कारण दिन रात हमारी रक्षा का विभाग नित्य नये व्ययों के भार से दबता जारहा है। हमारी सरकार आज रक्षा विभाग के ऊपर १६० करोड़ रुपये वार्षिक व्यय कर रही है। जब कि भारत विभाजन से पूर्व केवल १ अरब रुपया सारे भारत की सेना पर व्यय होता था और उस के लिए भी हमारे नेता गण विरोध किया करते थे। सैनिक विभाग के व्यय का बोझ जब हमारे कोष पर अधिक पड़ रहा है तो स्वाभाविक ही है कि नित्य नये टैक्स लगाकर जनता से उस कोष की निकासी के स्रोतको पूरा किया जावे। स्रोतकी निकासी रहे आत्र नहो तो काम कैसे चले। यही कारण है कि जनता में टैक्सों के आधिक्य से त्राहि २ मच रही है। अब विचारणीय विषय यह है कि अगर इसी प्रकार काश्मीर पर भारत का व्यय होता रहा तो सैनिक विभाग के व्ययका बोझ हमारे राज्य-कोष पर बहुत बढ़ कर खजाने की निकासी का स्थायी स्रोत बन जायगा है। विचारणीय बात यह है कि स्रोत कहां फूटा है ? अबतक लगभग एक अरब रुपया काश्मीर पर व्यय हो चुका है तथा अभी पर्याप्त व्यय होने के पूर्ण लक्षण हैं, क्योंकि सैनिक व्यय के साथ साथ काश्मीर की जनता के लिए खाद्यादि पदार्थों के मुहैया करने, सड़कें बनवाने इत्यादि में बहुत कुछ खर्च करना पड़ा है और

पड़ता जायगा। इस अधिक व्यय होने का कारण 'काश्मीर कमीशन' के फैसले की ढिलाई रही है जिसकी वजह से आक्रमण नीति धारण नहीं की जा रही है। किसी युद्ध को केवल रक्षात्मक दृष्टि से चला कर सफलता प्राप्ति में बड़ी कठिनाइयां होती हैं, क्योंकि श्रम अधिक लगने से व्यय अधिक पड़ता है। स्थानीय व्यापार नष्ट होने से आमदनी के स्रोत में बाधा पड़ती है जिससे घिरे हुए निवासियों की सहन शक्ति कम हो जाती है और वे ऊब उठते हैं। येन केन प्रकारेण सन्धिके इच्छुक हो जाते हैं। इन कठिनाइयों से सम्भव है, काश्मीरी मुसलमान प्रजा जो संख्या में अत्यधिक हैं, अधिकांश पाकिस्तान के पक्ष में वोट दे दे। इन्हीं आसारों का अनुभव करके पाकिस्तान के प्रधान-मन्त्रि मतगणना के लिए बराबर जोर दे रहे हैं।

चाणक्य का यह वाक्य कि—

'अनुलोमेन बलिनं प्रतिलोमेन दुर्जनम्।
आत्म तुल्यं बलंशत्रु विनयेन बलेन वा॥'

अर्थात् बली वैरी के अनुकूल व्यवहार करने में, यदि दुष्ट हो तो प्रतिकूल से वश करे, बल में समान शत्रु को विनय एवं बल ही से जीते। राजनीति में कोई निश्चय अपरिवर्तनीय नहीं है। आवश्यकता पर रक्षात्मक या आक्रमण-नीति में से कोई भी धारण की जा सकती है। केवल अवसर देखा जाता है। भारत सरकार की डेढ़ सालकी रक्षात्मक नीतिके अवलम्बन के पश्चात अब पाकिस्तान पर आक्रमण-नीति के अपनाने की आवश्यकता है। विचारणीय विषय यह है कि आक्रमण का कौनसा मार्ग पकड़ा जाय। भारत सरकार काश्मीर समीपस्थ पाकिस्तानी

स्थानों पर आक्रमण कर दें या जम्मूकाश्मीर राज्य की रक्षक रहते हुए पाकिस्तानी नीति धारण करके आजाद जम्मू सेनाकी आड़ पकड़े। उसके स्वयं आक्रमण-नीति धारण करने से भारत के नागरिकों की हानि है, क्योंकि पाकिस्तान भी वैसा ही जवाब देगा। दूसरी नीति अधिक उपयोगी प्रतीत होती है। यानी आक्रांत जम्मू प्रांतीय राज्य स्वतन्त्ररूप से आक्रामक सेना संघटित करके पाकिस्तान का तुर्कीबतुर्की जवाब दे, जिसका अवसर आगया है। इस समय कबीली पठानिस्तान की धुन में फंसे हैं। अब्दुल गफ्फारखां साहब प्रभृति के जेल भेजने के कारण वे पाकिस्तान से रुष्ट भी हैं। अफगानिस्तान व पाकिस्तान का मन-मुटाव भी काफी है। इन दोनों स्थानों की जनता की सहानुभूति पाकिस्तान खो चुका है। यही आज़ाद काश्मीर की सेना से टक्कर लेने का सीधा रास्ता है।

काश्मीर के तीर्थ स्थान

सन्तों एवं दैवीय ज्ञान के अन्वेषकों ने सदा ही हिमालय के अद्भुत और मनोहारी सौंदर्य से प्रेरणा प्राप्त की है। पहाड़ों की निस्तब्धता और वैभव के बीच सांसारिक कामनाओं को भूल कर जिज्ञासुओं ने योग साधना की है। इसलिये काश्मीर में ऐसे अनेक पवित्र तीर्थ स्थान हैं जो अतीत के अध्यात्मिक चिन्तकों की याद दिलाते हैं।

अमरनाथ

हिमालय के विस्तृत बर्फीले प्रदेश में समुद्र स्तर से १२,७२९ फीट की ऊंचाई पर अमरनाथ की प्रसिद्ध गुफा भारत के तीन महत्व पूर्ण तीर्थ स्थानों में से एक है। इस गुफा का आकर्षण केन्द्र एक हिम लिंग है जो चन्द्रमा के साथ २ घटता बढ़ता रहता है। सावन (जुलाई अगस्त) के महीने में पूर्णमासी के दिन भारत के सब भागों से हजारों हिन्दू यात्री अमरनाथ का दर्शन करने के लिये यहां एकत्र होते हैं। अमरनाथ पहलगांव से ३२ मील दूर है और यहींसे पैदल यात्रा आरम्भ होती है। मार्ग में चन्दनवाड़ी, बावजन (शेसनाग) पंचतरणी के तीन पड़ाव डालकर चौथे दिन यात्री अमरनाथ पहुँच जाते हैं। वापसी की यात्रा दो दिन में ही पूरी हो जाती है। तीर्थ यात्रा के अवसर पर यात्रियों की सुविधा के लिए थोड़ी थोड़ी दूर पर अस्थाई दूकानों, तम्बुओं और छप्परों की व्यवस्था की जाती है।

खीर भवानी का मन्दिर

श्री नगर से १४ मील उत्तर की ओर तुलमुला देवी का मन्दिर है जिसमें खीर भवानी की मूर्ति स्थापित है। इस मन्दिर में एक झरना है जिसका रङ्ग कभी बैंजनी से हरा और कभी हरे से बैंजनी बदलता रहता हैं। जून के महीने में प्रति वर्ष यहां भी एक मेला लगता है।

कपाल मोचन

श्री नगर से लगभग २४ मील दूर शोपियां के समीप एक अन्य हिन्दू तीर्थ स्थान कपालमोचन है। यहां आस पास तीन

झरने हैं। मुख्य झरने में एक पुराना लिंग बना हुआ है। प्रचलित जनश्रुति के अनुसार ब्रह्मा का पांचवाँ हाथ काटने के बाद शिव जी ने इस स्थान की यात्रा की थी और यहां अपने पाप का प्रायश्चित्त किया था। अब तक जनता का यही विश्वास है कि इस स्थान पर मृत बच्चों का श्राद्ध करने से उन्हें मुक्ति मिल जाती है। अगस्त के महीने में यहां एक बड़ा मेला लगता है।

गङ्गा बल झील

श्री नगर से १६ मील उत्तर सिन्ध की घाटी में गंगाबल झील है और ऐसा समझा जाता है कि गंगा यहीं से निकली है। हरिद्वार की भांति इसका भी बड़ा माहात्म्य है। अगस्त के महीने में पूर्णमासी के आठवें दिन यहां भारी मेला लगता है।

ज्वालामुखी मन्दिर

श्रीनगर के १४ मील दूर एक छोटी पहाड़ी पर ज्वाला जी का प्रसिद्ध मन्दिर है जिसमें अग्नि की देवी की मूर्ति स्थापित है। जुलाई में प्रति वर्ष यहां भी मेला लगता है।

मार्तण्ड

श्रीनगर से ४२ मील दक्षिण श्रीनगर पहलगांव सड़क पर हिन्दुओं का एक और पवित्र स्थान मार्तण्ड है। यहां के मन्दिर में सूर्य देवता की मूर्ति स्थापित है। मल मास में हिन्दू लोग यहां श्राद्ध करने के लिये आते हैं।

अनंत नाग

श्रीनगर से ४० मील अनन्त नाग है ! यहां एक झरना भी है जिससे कुछ नीचे एक छोटा सा मन्दिर है। सितम्बर में अनन्त चौदस के दिन यहां एक मेला लगता।

वेरी नाग

पीर पंजाल प्रदेश की ओर बनिहाल दर्रे में बैरी नाग स्थित है। बैरीनाग झरने के नाम पर ही इस स्थान का नाम बैरीनाग पड़ा है। सर्व साधारण का विश्वास है कि काश्मीर की सबसे प्राचीन पुस्तक नीलमत पुराण यहीं लिखी गई थी।

शंकराचार्य

श्रीनगर शहर में शंकराचार्य का प्राचीन मन्दिर है जिसे काश्मीर के राजा गोपादित्य ने (४६८-२०८ ईसा से पूर्व में) बनाया था। उदारचेता मुसलमान बादशाह जेनुलआब्दीन ने इस मन्दिर की मरम्मत कराई थी।

मुस्लिम पूजा स्थान हजरत बाल

नसीम बाग के समीप, डल झील के किनारे मुसलमानों का एक सबसे पवित्र स्थान हजरतबाल है जिसमें पैगम्बर का पवित्र बाल रखा हुआ है। प्रत्येक शुक्रवार को और ईद के त्योहार पर यहां मुसलमान भक्तों की भारी भीड़ होती है।

मखदूमशाह का मकबरा

मुसलमानों के अत्यधिक प्रिय तीर्थ स्थानों में से एक मखदूमशाह का मकबरा है जो हरि पर्वत की तलहटी में बना हुआ है। बीमारी के समय हिन्दू और मुसलमान दोनों ही इसके दर्शन करते हैं।

शाह हमदान की मस्जिद

श्रीनगर में जेलहम नदी के दायें किनारे पर शाहहमदान की लड़की की शानदार मस्जिद है जिसे हिन्दू और मुसलमान दोनों पवित्र मानते हैं। इस मस्जिद में काली भवानी का एक झरना है जहां प्रति दिन सैंकड़ों हिन्दू धर्म कर्म के लिये आते हैं।

तरार शरीफ

श्री नगर से १६ मील दक्षिण पश्चिम में मुसलमानों का एक अन्य तीर्थ स्थान तरार गांव है। पतझड़ के महीनों में हिन्दू और मुसलमान भक्त कश्मीर के दूरस्थ भागों से चलकर यहां एकत्र होते हैं और प्रार्थना एवं उपासना करते हैं।

—:★:—

भारत में काश्मीरी

"बड़ी खुशी की बात है कि *हातो फिर वापस आगए" जिस से मिलते हैं, वही इस प्रसन्नता प्रकट करता हुआ दृष्टिगोचर होता है। वही चिरपरिचित दृश्य! हंसमुख काश्मीरी मजदूर की टोली! कोई बोझ उठाए चला जा रहा है, कोई आराकशी का काम कर रहा है—अनेक प्रकार के अपने अनुकूल कामों में काश्मीरी तत्परता से संलग्न हैं ये मजदूर! अभी कुछ ही दिन पहले तो ये अपने सपनों के अभिनव काश्मीर के निर्माण में अपने प्राणों की बाजी लगा रहे थे। भूखे रह कर वे लड़े प्रजातन्त्र और स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए, न दिन देखा न रात,

* हातो महनत कशों को कहते हैं।

चप्पा चप्पा जमीन के लिए लड़े और अनधिकारी लुटेरे आक्रान्ताओं को पीछे हटने के लिए बाधित किया—और इसमें कोई अतिशयोक्ति न होगी, यदि हम कहें कि शिमला की सड़कों पर काम करते ये काश्मीरियों में कई अज्ञात और निरभिमान वीर हैं जिन्होंने आपके और मेरे लिए भयङ्कर लड़ाई लड़ी।

वली मुहम्मद से मिलिए, आयु ३० बरस घुंघराले बाल और चौड़ा माथा। वह आपको रेलवे स्टेशन और गंज के बीच में कहीं अवश्य दिखाई दे जाएगा, जहां उसकी काश्मीरी मजदूरों की टोली कमर पर बोझ उठाए चली जा रही होगी। उसने टिठवाल के मोर्चे पर पाकिस्तानी आक्रान्ताओं से संघर्ष किया है। अब वह शिलला में है। उसकी आंखों की चमक कहती है कि उसे भारत का नागरिक बन कर आजादी की जिन्दगी बसर करने का पूरा अधिकार है। वह पूछता है कि—क्या गान्धीजी ने हमारे लिए अपने प्राणों की बली नहीं दी और क्या शेरे काश्मीर ने हमारे लिए अकथनीय त्याग नहीं किया ?

बोरी के बोझ से दबी हुई पीठ लिए यह कौन शिमला के बाजार में आता जाता दिखाई देता है ? पूछिए, उसका नाम अब्दुल्ला है। उसे पुंछ की लड़ाई का दृश्य भलीभांति स्मरण है। वह आपको विस्तार से बताएगा कि हिन्द सेना के बहादुर सैनिकों ने किस प्रकार लुटेरे आक्रान्ताओं को नाकों चने चबवाए। वह आपके सन्मुख उस सुदूर घाटी में स्थित अपने शस्यश्यामल भूखण्ड का वर्णन करेगा, जहां वह खून पसीना एक करके हल चलाता था। अपने वृद्ध माता पिता और भाई बहनों का वर्णन करते समय उसकी आंखें गीली हो आई थीं।

शिमला के सरकारी आलू के फार्म में जी तोड़कर मेहनत करते हुए मुहम्मद शरीफ को देखिए। वह शेरे काश्मीर के पक्के भक्त अनुयायियों में अन्यतम है। वह कुलगांव की पहाड़ी जिले का किसान है। इसने काश्मीर नेशनल कान्फ्रेन्स का हल अंकित लाल झण्डा ऊंचा किया और इसे सींकचों में बन्द कर दिया गया। इसका उल्लास से दमकता चेहरा इसकी दृढ़ शक्ति का परिचय दे रहा है।

विभाजन की दुःखद घटनाओं के पूर्व के समय में काश्मीरियों का शिमला में बहुत आवागमन था और कभी कभी उनकी जनसंख्या वहां ५००० तक पहुँच जाती थी। उसके दो कारण थे। एक तो शिमला का जलवायु उनके बहुत अनुकूल था, दूसरे शिमला में मजदूरी खूब मिलती थी। काश्मीरी मजदूर अपने कठिन श्रम, ईमानदारी और अच्छे स्वभाव से लोगों को खुश रखते थे और इसी लिए जब वे सर्दियों में अपने घरों को वापस लौटते थे तब उनकी जेबें रुपयों से भरी होती थी।

शिमला में जो काश्मीरी मजदूर वापस आ रहे हैं उन्हें खुशी से अपनाया जारहा है—उनके पहले मालिक भी उन्हें खुशी खुशी काम दे रहे हैं। यह इस बात का चिन्ह है कि पूर्वी पंजाब के निवासी अपने उन भाइयों व बहनों के प्रति कृतज्ञ हैं जिन्होंने काश्मीर में हिमालय की हिमाच्छादित शृंखलाओं में भारत की सीमा की रक्षा में अपना सर्वस्व लुटा दिया।

सांझा घर

शिमला की सब्जीमण्डी के भीड़ भड़क्के वाले इलाके में स्थित कुतुबुद्दीन की मस्जिद फिर से सजीव हो उठी है। इसमें

२०० काश्मीरी रह रहे हैं। वह उनके होटल मिलने का स्थान और प्रार्थना गृह है।

काश्मीर की घाटी के सुदूर प्रदेशों से एक ही तहसील व थाने के काश्मीरी १५-२० टोलियों में आते हैं। अपनी सारी जमा पूंजी और यात्रा के लिए राशन साथ लेकर वे जम्मू पहुँचते हैं। प्राय: वे पैदल आते हैं—जम्मू तक पहुँचने में उन्हें तीन चार दिन लग जाते हैं। वे रेलों या बसों से पूर्वी पञ्जाब के मैदानों को, अमृतसर, जालन्धर और लुधियाना के शहरों को पार करते हैं—जहां भी वे जाते हैं—यह देखकर उनका मन हल्का होता है कि सब जगह स्थिति साधारण है, और लोग उनका स्वागत करते हैं।

शिमला पहुँच कर वे अपने सांझे घर कुतुबुद्दीन की मस्जिद में चले जाते हैं। काम की उनके लिए कोई कमी नहीं है। यदि किसी को कोई जरूरत हो या कोई बीमार हो तो स्थानीय अधिकारी, काश्मीरी सभा तथा कांग्रेस कमेटियां उनके राशन और चिकित्सा की यथोचित व्यवस्था करती है।

मस्जिद के धुंए से भरे हाल में स्थान स्थान पर अंगीठियों में दहकते हुए अंगारों के चंचल प्रकाश में बैठे दिन भर के थके काश्मीरियों का अट्टहास गूंजने लगता है। वह अपनी सुन्दर स्वर्गोपम घाटी के गीत गाते हैं। और चावल, उबले चने और तन्दूर की गरमा-गरम रोटियों को सन्तोष के साथ खाते हैं। २०-२५ मजदूर मिल कर अपने में से एक रसोइया रख लेते हैं। वह उनका खाना बनाता है। उसे दल के एक आदमी की एक दिन की मजदूरी दे दी जाती है।

परन्तु कुतुबुद्दीन की मस्जिद में दिन प्रति दिन बहुत संख्या में आते हुए सब काश्मीरी मजदूर नहीं समा सकते हैं।

इसलिए ऐसी व्यवस्था की जा रही है कि स्थानीय काश्मीरी मस्जिद को उनके लिए खाली करवा लिया जाय। यह पूजास्थान उनका अपना है। इस से उनके निवाज की समस्या भी हल हो जायगी और उन्हें मिल कर नमाज पढ़ने का उचित स्थान भी मिल जायगा।

संघर्ष की कथा

काश्मीरी देश भक्ति के वातावरण में पलता है। बलिदान के विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करता है और शहीद के खून से उसका अभिषेक होता है। काश्मीरी का जवन संघर्ष का शानदार इतिहास है। चाहे वह लकड़ी और रेशम की नई नई कलामय चीजें बनाने में लगा हो चाहे सीधी चढ़ाई पर भारी बोझ उठाए जा रहा हो, काश्मीरी के चारों तरफ ऐसा वातावरण रहता है जो शैल की दुर्जेयता और गगन की विस्तीर्णता से पैदा होता है।

चाहे यह गुलाम मुहम्मद है जिसने उबलते चने की हंडिया में कड़छी फेरते हुए आप से आप कहा—'हम गरीब आदमी कष्ट सहने के लिए ही पैदा हुए हैं, हमने तो कष्ट ही सहना है...या यह नौजवान खुदाबख्श है जिसके नयनों में दृढ़ इच्छा और आत्म विश्वास प्रतिबिम्बित है और जो वृद्ध पुरुष के पास खड़ा उसे ध्यान से देख रहा है—'नहीं नहीं चाचा, शेख साहब का नया काश्मीर हम गरीब आदमियों के लिए है'—कुछ भी हो काश्मीरियों के बारे में आधारभूत सत्य यह है कि उन्हें यह दृढ़ विश्वास है कि हिन्द के धार्मिक भेद-भाव से रहित प्रजातन्त्र में शामिल हो कर ही उनका उद्धार सम्भव है—हिन्द का प्रजातन्त्र! जिसका निर्माण काश्मीर के ही एक सपूत पण्डित जवाहरलाल नेहरू के वरद नेतृत्व में हो रहा है।

हैदराबाद और काश्मीर

यद्यपि अब बदली हुई परिस्थिति में हैदराबाद और काश्मीर हमारे लिए उतनी चिन्ता के कारण नहीं रहे, जितने एक साल पहले थे' फिर भी हैदराबाद और काश्मीर की समस्याओं का पूरा समाधान अभी होना है। अतः यह उचित है कि इन दो प्रमुख रियासतों की समस्याओं को स्पष्टतया समझ लिया जाय।

भारतीय राजनीति का यह दुःखद पहलू रहा है कि यद्यपि कांग्रेस विशुद्ध राष्ट्रीयता की हामी और प्रचारक रही है, पर मुस्लिम लीग की कट्टर साम्प्रदायिकता के आगे एक प्रकार से उसे भी झुकना पड़ा और वह लीग के साथ प्रकारान्तर से सुलह करने पर वाध्य हुई। इतना ही नहीं, लीग की मनोवृत्ति का भी कांग्रेस के मन पर अज्ञात रूप से बड़ा असर पड़ा। हैदराबाद और काश्मीर की समस्याओं के प्रति कांग्रेस का रुख इसका एक उदाहरण है। कई बार, पहले हमारे नेताओं ने यह कहा कि हैदराबाद और काश्मीर की समस्यायें समान सी हैं, और इन्हें समान तरीकों से ही सुलझाना चाहिये। किन्तु वास्तव में बात ऐसी नहीं है। यदि हम तनिक गहराई से सोचें तो हमें पता चलेगा कि हैदराबाद और काश्मीर की समस्याऐं विभिन्न और स्वतन्त्र है।

समानता और भिन्नता

हैदराबाद और काश्मीर के बीच मुख्य समानता केवल एक ही है, जिसके कारण कई बार हमारे राजनीतिज्ञ पथ भ्रष्ट

हुए हैं। वह यह है कि हैदराबाद नरेश मुसलमान है और बहुसंख्यक प्रजा हिन्दू है, और काश्मीर का नरेश हिन्दू है, पर वहां बहुसंख्यक प्रजा मुसलमान है। यों जनसंख्या, क्षेत्रफल, अथवा राजस्व की दृष्टि से भी दोनों रियासतों में काफी अन्तर है। दोनों रियासतों की राजनीतिक समस्याएं और सामरिक अथवा अन्तर्राष्ट्रीय महत्व तो विशेषतया भिन्न है। हैदराबाद की जनसंख्या लगभग एक करोड़ सत्तर लाख है, राजस्व १७ करोड़ है और यह रियासत दक्षिणी पठार के ८२६६८ वर्ग मील में फैली हुई है। काश्मीर की आबादी ४० लाख है, राजस्व कुल ५ करोड़ और हिमालय की उत्तरी शाखा में स्थित इसका क्षेत्रफल ८४,७७० वर्ग मील है। जैसा कि मैंने पहले कहा दोनों में केवल यही समानता है कि एक सबसे बड़ी हिन्दू रियासत है, और दूसरी सबसे बड़ी मुस्लिम रियासत है, यदि हमारा अभिप्राय शासितों से न होकर शासकों से हो।

आइये अब इनकी परस्पर विभिन्नता की ओर। हैदराबाद भारत के मध्य में विद्यमान है, मानो वह भारत के शरीर का हृदय हो। हैदराबाद की सीमा किसी विदेशी देश में नहीं लगती। यह चारों ओर भारतीय प्रान्तों और रियासतों से घिरा हुआ है। इसकी सभ्यता, इसकी संस्कृति व ऐतिहासिक परम्परा दक्षिणी पठार की द्रविड सभ्यता के अभिन्न अङ्ग हैं।

काश्मीर का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व

दूसरी ओर, काश्मीर मध्य एशियायी प्रदेशों का एक महत्वपूर्ण भाग है। भारत पाकिस्तान, अफगानिस्तान, चीन, तिब्बत और रूस काश्मीर की सीमा के साथ लगते हैं। काश्मीर

के सीमान्त प्रदेश, गिलगित, लद्दाख और बाल्तिस्तान के लोग भारत के लोगों से अधिक मिलते जुलते नहीं हैं। काश्मीर वस्तुतः स्वयं भारत का सीमान्त प्रदेश है, जो किसी समय भी विदेशी प्रभावों और शक्तियों का अखाड़ा बन सकता है। सीमावर्ती होने के नाते काश्मीर और जूनागढ़ में अधिक समानता है, परन्तु दुर्भाग्य से इस प्रश्न पर गौर करने का हमारा पहलू कुछ गलत सा रहा है, जिसके कारण हम हैदराबाद और काश्मीर को एक ही श्रेणी में रखते आये हैं। भारतीय प्रधान मन्त्री पं० जवाहरलाल नेहरू को इसका श्रेय है कि उन्होंने काश्मीर का स्वतन्त्ररूप से महत्व समझा और तदनुसार कार्यवाही की ओर कदम उठाया। काश्मीर सीमावर्ती प्रदेश है और कभी भी वह अन्य देशों और भारत के बीच अखाड़ा बन सकता है। नेहरूजी के काश्मीर की ओर झुकाव का अर्थ प्रायः दूसरा लगाया जाता रहा है, और कई बार लोगों ने उनकी काश्मीर सम्बन्धी चिंता को 'अपने पूर्वजों की भूमि के प्रति मोह' बताकर मजाक भी किया है। किन्तु सच तो यह है कि 'अन्तर्राष्ट्रीय नेहरू' ही काश्मीर के अन्तर्राष्ट्रीय महत्व को पूरी तरह समझ सकते हैं।

काश्मीर का भारत के लिये सामरिक और व्यापारिक महत्व भी है। यदि काश्मीर भारत से अलग हो जाय, तो हमारी उत्तर-पश्चिमी सीमा सिकुड़ कर लाहौर और अमृतसर के बीच अटारी की चौकी तक आ जाती है, और हमारे लिये मध्य एशिया के व्यापारिक मार्ग भी अस्थायी तौर से बन्द हो जाते हैं।

यद्यपि इस समय रूस काश्मीर की ओर से उदासीन-सा है, फिर भावी ऐंग्लो-अमेरिका और रूस संघर्ष की संभावना

को देखते हुए यह आवश्यक है कि काश्मीर की रक्षा और वैदेशिक नीति का संचालन भारत जैसा शान्ति-प्रिय देश करे। गिलगित का विशेष अन्तर्राष्ट्रीय महत्व है। इसीलिये काश्मीर पर कबाइली आक्रमण से पहले गिलगित के अंग्रेज शासक ने उस प्रदेश को पाकिस्तान से मिल जाने दिया। अंग्रेज गिलगित को पाकिस्तान का अङ्ग देखना चाहेंगे, ताकि वह रूस के विरुद्ध अड्डे के तौर पर प्रयोग में लाया जा सके।

काश्मीर-धर्मान्धता की चुनौती

काश्मीर का राजनैतिक महत्व भी विशेष है। पाकिस्तान का पठान आन्दोलन और शेख अब्दुल्ला का भारतीय 'सैक्युलर स्टेट' के साथ सम्बन्ध—यही दो ऐसे आन्दोलन हैं जो उस इस्लामी आन्दोलन के विरोधी हैं, जो देश, जाति अथवा आर्थिक हितों के विरुद्ध धार्मिक पहलु पर अधिक जोर देता है, और जिसका नेतृत्व पाकिस्तान कर रहा है। मि० जिन्ना के द्वि-राष्ट्र सिद्धान्त का मुसलमानों की ओर से जोरदार विरोध काश्मीर ही कर रहा है। और भारत के धर्म निरपेक्ष राष्ट्र बनने में काश्मीर दो राष्ट्रों के सिद्धान्त को खुली चुनौती है।

काश्मीर राजनैतिक तौर से भी हैदराबाद से अधिक प्रगति शील और जागरूक है। इसका कारण शायद यह है कि हैदराबाद में निजामशाही का शिकंजा जनता के गले में अधिक कड़ा रहा है। काश्मीरियों ने अपना राजनैतिक और आर्थिक कार्य-क्रम बना लिया है, किन्तु हैदराबादियों को अभी इस तरफ निश्चित कदम बढ़ाना बाकी है।

हैदराबाद प्रतिगामी है

काश्मीर जन तन्त्र और समाजवाद की ओर बड़ी तेजी से बढ़ रहा है। काश्मीर के नेताओं ने जागीरदारियां खत्म कर

दी हैं और उन्होंने महाराजा को गद्दी से उतारने की खुल्लम खुल्ला मांग की है। परन्तु हैदराबाद के नेता स्वा० रामानन्द तीर्थ फिलहाल निजाम का अस्तित्व खत्म करने के पक्ष में इतनी दूर तक नहीं गये हैं। हैदराबाद के नेताओं का विचार निजाम के पर काटकर उसे पिंजरे का पंछी बनाकर रखने का जान पड़ता है। हैदराबाद के नेताओं ने अभी जागीरदारियों के खिलाफ दृढ़ और स्पष्ट नारा नहीं लगाया है। इस विषमता या भेद बतलाने से मेरा आशय यह नहीं है कि कौन रियासत अच्छी है या कौन बुरी या किसकी नीति ठीक है और किसकी गलत। मैं तो केवल यह बताना चाहता हूँ कि हैदराबाद और काश्मीर के राजनीतिक एवं आर्थिक ध्येयों के वर्तमान रूप में अन्तर है।

एक और बात है। जिस समय ब्रिटिश सत्ता यहां से अपना दामन सिकोड़ रही थी, यदि उस समय हमने देशी राज्यों के सम्बन्ध में राजा और नबाबों को छोड़कर सीधे जनता से राजनीतिक सम्बन्ध स्थापित किया होता और नरेशों को अस्थायी रूप से भी जनता का प्रतिनिधि मानकर भारत में सम्मलित होने के बारे में उनसे बातचीत न चलाई होती, तो हैदराबाद की समस्या शायद यह उग्ररूप धारण ही न करती। सरकार ने हैदराबाद और काश्मीर के शासकों से बात चीत चलाई। महाराजा काश्मीर और निजाम दोनों अकड़ गये। काश्मीर भी हमारे लिये इतना सिर दर्द न बनता, यदि महाराजा अपनी स्वतन्त्रता के स्वप्न न देखते होते, और शेख अब्दुल्ला और उसकी पार्टी को काश्मीर के सम्बन्ध में अपनी राय देने की

स्वतन्त्रता होती। निजाम ने भी वही तौर तरीका अख्त्यार किया। हां-रजाकारों की प्रेरणा और टेक ने उसका दिल दूना कर दिया। नेहरू जी ने स्वयं लंदन में एक भाषण में स्वीकार किया था कि रियासती समस्या भारत के लिए इतनी विकट और जटिल न बनती' यदि शुरू से हमने गलत रुख न अपनाया होता।

यह ठीक है कि हैदराबाद की जनता को अधिकार होना चाहिये कि वह भारत में सम्मलित होने का अपना मत प्रकट कर सके, परन्तु हैदराबाद की भौगोलिक तथा आर्थिक स्थिति उन्हें हिन्दुस्तान से मिलने के लिए ही बाध्य करेगी। अतः जनमत का हैदराबाद इतना बड़ा महत्व नहीं है जितना कि काश्मीर में है।

काश्मीर की भौगोलिक और अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति ऐसी है है कि उसके बारे में बहुत सोच-समझकर दूरदर्शिता से कदम उठाना चाहिये। काश्मीर हमारी राजनैतिक सूझ-बूझ और हमारी उदारता को एक चुनौती है। वहां कोरी फौजी कार्यवाही अथवा जीत देर तक काम न आयेगी। काश्मीर हमारे राजनीतिक ध्येय, विशेष कर भारत को एक धर्म निरपेक्ष राष्ट्र बनाने की कसौटी है। काश्मीर भारत की राजनीतिक प्रतिध्वनि भी बन सकती है। जैसा हम यहां मुसलमानों से व्यवहार करेंगे, कश्मीर में हिन्दुओं के साथ भी वैसे ही बर्ताव की हम आशा करें। कश्मीर को भारत के साथ रखने के हमारे प्रयत्न भारत में सांप्रदायिकता के दानव को नष्ट करने और हमारे राष्ट्र को पूर्णतया धर्म निरपेक्ष राष्ट्र बनाने में भी सहायक होंगे।

—★—

स्वर्ग-भूमि काश्मीर

संसार में ऐसे स्थान बहुत कम हैं, जो यात्रियों के लिए इतने आकर्षक हों, जितना काश्मीर। काश्मीर का स्वास्थ्यप्रद जलवायु, उद्यान और सरोवर, पुष्प और पक्षी, घाटियां और नयनाभिराम दृश्य सभी उसे विश्राम और मनोरञ्जन का आदर्श स्थान बनाने में सहायक हैं। काश्मीर की घाटी में इस्लामाबाद, चश्मा-एशाही, कुक्करनाग, वेरीनाग अच्छाबल और गन्धबल नामक स्थानों पर ऐसे अनेक झरने भी हैं, जिनके जल में रोगनाशक गुण हैं। काश्मीर के जंगलों और लद्दाख, गुरेज, अस्तूर और किश्तवाड़ आदि सीमावर्ती स्थानों में रीछ, जंगली बकरे, जंगली भेड़ और तेंदुए, पाये जाते हैं। गुलमर्ग में गोल्फ खेलने का सुन्दर मैदान है और तोसा मैदान, अमियां वाली गली और सोनमर्ग में गर्मियों और जाड़ों में बर्फ पर फिसलने के खेल खेले जासकते हैं।

काश्मीर में सैलानियों अर्थात् यात्रियों का आना जाना रियासत की आय का प्रधान साधन है और उसी पर वहां के अनेक व्यवसायों तथा कलाओं की उन्नति निर्भर है। यात्रियों के यातायात से रियासत को १९४४-४५ में ३ करोड़ रुपये की १९४५-४६ में ३ करोड़ ५० लाख रुपये की, १९४६-४७ में ३ करोड़ ७५ लाख रुपये की आय हुई थी।

पाकिस्तान की अरुचि

काश्मीर में केवल भारत के विभिन्न भागों से ही नहीं अपितु यूरोप, अमेरिका आदि देशों से भी यात्री आते हैं।

१६४४-४५ में काश्मीर की यात्रा के लिए कुल ३४,१४२ व्यक्ति आये जिनमें से १८,८६० विदेशी और १५,२५२ भारतीय थे। १६४५-४६ में कुल ३६,८४१ यात्री आये, जिनमें से १८,३३१ विदेशी और १८,५१० भारतीय थे। परन्तु १६४६-४७ में विदेशी यात्रियों की संख्या काफी कम हो गई। भारतीय यात्रियों में सबसे अधिक संख्या बम्बई, पश्चिमी बंगाल और पूर्वी पंजाब से आने वाले यात्रियों की रही। उपलब्ध आंकड़ों से पता चलता है कि भारत और विदेशों से ६० प्रतिशत यात्री आये, और पाकिस्तान से १० प्रतिशत।

१६४४-४५ में १६४५-४६ और १६४६-४७ में रियासत को भारतीय यात्रियों से क्रमशः २ करोड़, २ करोड़ बीस लाख और २ करोड़ रुपये की तथा पाकिस्तानी यात्रियों से क्रमशः २५ लाख, ३० लाख और २५ लाख रुपये की आय हुई।

आय के साधन

रियासत को यात्रियों से जो आमदनी होती है उसके मुख्य साधन हैं चुंगी, मार्गकर आयकर और लाइसेन्स शुल्क। इसके अतिरिक्त विशाल सामग्री, दस्तकारी की वस्तुओं और फलों की बिक्री से भी आमदनी होती है। काश्मीर कस्तूरी की केशर, बनफशा और शिलाजीत को भी यात्री बहुत पसन्द करते हैं। रेशम और रेशम से बनी चीजों को अमृतसर के व्यापारी ले जाते हैं और उन्हें देश के अन्य भागों में बेचते हैं। काश्मीर की ऊन बहुत बढ़िया होती है और उसके सुन्दर शाल बनाये जाते हैं। भारतीय मण्डियों में ऊनी कपड़ों और पश्मीने की बहुत मांग रहती है। क्या देशी और क्या विदेशी सभी यात्री, गुदमे कालीन और नमदे खरीदते हैं।

नक्काशी दार चीजें

पत्थर के काम की वस्तुओं और सागौन और अखरोट की लकड़ी की नक्काशीदार वस्तुओं को भी यात्री बहुत पसन्द करते हैं। बेंत का कार्य और टोकरियां बनाने का काम इस रियासत में बहुत प्राचीन काल से होता चला आ रहा है। काश्मीर के चांदी के बर्तनों की भारत में बहुत मांग है। रियासत में कुल ५० लाख रु० साल के चांदी के बर्तन बनते हैं, जिनमें से अधिकांश बम्बई और कलकत्ते में आकर बिकते हैं। काश्मीरी खालों और रोओं (फरों) की भी बहुत मांग है।

यातायात में सुधार

इसलिए यह कहने में किसी प्रकार का अतिरंजन नहीं कि काश्मीर की अर्थव्यवस्था अधिकतर उसके यात्रियों के यातायात पर ही निर्भर है। परन्तु पाकिस्तानी हमलावरों के हमले के कारण यह यातायात भंग हो गया और उन्होंने बारामूला के मठ को जलाकर तथा गुलमर्ग को लूट कर वहां की जनता पर जो अत्याचार किये, उनके कारण विदेशी यात्री भी न आ सके। परन्तु अब रियासत के अन्दर यातायात के साधन ठीक कर दिये गये हैं, और रियासत की सड़कों एवं वायुमार्गों का सम्बन्ध भारत के साथ कर दिया गया है जिससे यात्री अब फिर पूर्ववत् काश्मीर के प्रसिद्ध सुन्दर स्थानों को देख सकते हैं।

पठानकोट जम्मू सड़क ६५ मील लम्बी है। इसकी हालत बहुत ही अच्छी है और इस पर सब ऋतुओं में यातायात हो सकता है। यह सड़क रियासत को भारत से मिलाती है। इसके

अतिरिक्त, दिल्ली और श्रीनगर तथा अमृतसर और श्रीनगर के मध्य हवाई जहाज भी आते जाते हैं। काश्मीर की सरकार और भारत सरकार ने यात्रियों के यातायात को प्रोत्साहन देने के लिए आवश्यक उपाय कर लिये हैं। काश्मीर की सरकार ने यात्रियों की आवश्यकताओं और सुविधाओं की देख भाल के लिए एक यात्री विभाग खोला है, जिसकी शाखाएं रियासत भर में फैली हुई हैं। प्रवेशपत्र प्रणाली सरल कर दी गई है और अब प्रवेश पत्र प्राप्त करने में विलम्ब नहीं होता।

दो वर्ष से काश्मीर के दर्शन यात्रियों को दुर्लभ हो रहे थे, वही काश्मीर अब उन यात्रियों की प्रतीक्षा कर रहा है, जो अवकाश के दिनों में विश्राम और मनोरञ्जन चाहते हैं।

काश्मीर का साहित्य और साहित्यिक

इस तथ्य से सम्भवतः सारे लोग परिचित नहीं कि भू-स्वर्ग कहा जानेवाला काश्मीर अपने अनुपमेय प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए जहां विश्वविख्यात है, वहां भारत के साहित्यिक रंगमच पर भी उसका विशेष स्थान है। प्रकृति सुन्दरी की नैसर्गिक सुषमाओं से से परिपूर्ण भारत का यह पुण्यांचल कभी परिमार्जित (क्लासिकल संस्कृत साहित्य, का एक केन्द्र था। वह भारतीय इतिहास के आरम्भिक हिन्दू काल का समय था। उन दिनों, दीर्घकाल तक, काश्मीर, भारत में विद्वत्ता का एक केन्द्र रहा।

उस समय इस मनोहर घाटी में, प्रबल साहित्यिक तथा सामाजिक आन्दोलनों का उद्भव हुआ, जो न केवल भारत के अन्य प्रदेशों में ही फैले वरन् भारतीय सीमा-पंक्ति पार करते हुए तिब्बत तथा अन्य निकटवर्ती देशों तक में पहुँच गये। बौद्ध विचारधारा एवं दर्शन ज्ञान में जो रूपान्तर कुछ बाद में देखने को मिला उसे वस्तुतः कश्मीर में ही अधिक परिपुष्ट हुआ समझना चाहिए। तिब्बतीय बुद्ध धर्म में प्रचलित वर्त्तमान तांत्रिक प्रथाएं, वास्तव में, भारत की ही देन हैं, जो कश्मीर की घाटी से से होकर उस देश में प्रकट हुईं। शैव दर्शन को भी का.मीर में पर्याप्त प्रोत्साहन प्राप्त हुआ।

दुर्भाग्य की बात है कि इस पुरातन साहित्य का अधिकांश सुरक्षित नहीं रखा जा सका। इसलिए, सम्भवतः इस काल के साहित्यिक तथा सामाजिक आन्दोलनों का एक सुसंगत विवरण सग्रहीत कर सकने में हम असमर्थ हैं। किन्तु तो भी, यह तथ्य है कि काश्मीर, प्राचीन भारत की सांस्कृतिक विचारधारा की कक्षा में एक लम्बे समय तक रहा। कल्हण की 'राजतरंगिणी' जैसा ऐतिहासिक ग्रन्थ हमारी इस मान्यता को साधारण करने के लिए पर्याप्त है।

काश्मीरियों को, अपने अतीत द्वारा एक सुसम्पन्न साहित्य उत्तराधिकृत सम्पत्ति के रूप में प्राप्त हुआ है। उनकी इस साहित्यिक पूंजी में आरम्भिक हिन्दूकाल की संस्कृत, उसके बाद अफगान काल की फारसी और तत्पश्चात् सिखकाल की उर्दू भाषाओं का सम्पर्क समाविष्ट है। मुसलमानों और मुगलों के

समय में जो फारसी दरबारी भाषा बनी, वह सिख काल के आरम्भ के कुछ बाद तक जारी रही और बाद में, उर्दू ने उसका स्थान ग्रहण किया।

लोगों की बोलचाल की भाषा काश्मीरी शुरु-शुरु में 'शारदा' लिपि में लिखी जाती थी, जो अब प्रायः लुप्त हो चुकी है और काफी समय से उसका स्थान फारसी लिपि ने ग्रहण कर लिया है। वर्त्तमान प्रचलित भाषा उर्दू ही है, यद्यपि इधर कुछ दिनों से 'काश्मीरी' के प्रति लोगों में साहित्यिक रुचि उत्पन्न हुई है और इस प्राचीन भाषा को वैज्ञानिक आधार पर उन्नत करने की दिशा में प्रयत्न भी किये जा रहे हैं।

इस प्रादेशिक भाषा, 'काश्मीरी' के साहित्य का शिलान्यास, बहुत-कुछ, शाह जैन-उल अब्दीन (१४२०-१४७०) के काल में हुआ समझना चाहिए। उन्होंने न केवल राजनीतिक तथा धार्मिक क्षेत्रों में शान्ति एवं सद्भावना की स्थापना की, वरन् अनेक लेखकों, कवियों तथा अन्य साहित्यिकों को भी उनके शासन से प्रोत्साहन मिला यद्यपि दरबारी भाषा उनके काल में भी फारसी ही रही, किन्तु संस्कृत के अध्ययन की ओर उन्होंने समान रुचि प्रकट की। घटना इतिहास के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'राजतरङ्गिणी' को, उनके काल में, जोनराज तथा मुल्ला, अहमद नामक दो लेखकों ने क्रमशः संस्कृत तथा फारसी में पूरा किया। प्रसिद्ध हिन्दू विद्वान श्री भट्ट, इनके दरबार के उत्तम रत्न थे। रहस्यवादी विचारों, छन्दों तथा सूक्तियों का एक सुन्दर संग्रह भी इनके काल में तैयार कराया गया, जो ऋषिनामा के नाम से विख्यात हुआ। इसके रचयिता शेख नूरुद्दीन थे, जो नन्द ऋषि के नाम से प्रसिद्ध हैं इसके

अतिरिक्त सोम भट्ट का 'जैन चरित' और ऊधोभट्ट का जैन विलास' नामक दो अन्य दो ग्रन्थों की रचना भी शाह जैन-उल-आब्दीन के काल में ही हुई।

इसके बाद अकबर के शासन काल में विचार एवं साहित्य के क्षेत्र में ऐक्य स्थापित करने का दूसरी बार प्रयास हुआ। इनके काल में कल्हण की 'राजतरंगिणी' को पूरा करने का काम १५७५ में प्राज्ञ भट्ट ने संभाला। सरकारी भाषा फारसी के होते हुए भी, इन दिनों, परिमार्जित संस्कृत साहित्य का सम्मान था।

मुसलमानों, अफगानों तथा सिखों के शासन काल में कश्मीर के साहित्य का इतिहास, वस्तुतः, फारसी साहित्य का ही इतिहास है। किन्तु संस्कृत की प्राचीन साहित्यिक परम्परा, फिर भी पूर्णतः लुप्त नहीं हो पायी थी। लालशूरी अथवा प्रसिद्ध लल्ला देवी (१४ वीं शताब्दी) की कृतियों से इस बात का पता चलता है। वास्तव में इन्हें हम भूत की क्लासिकल संस्कृत की परम्पराओं और बाद की फारसी काव्यशैली के बीच की कड़ी मान सकते हैं। इनके व्यक्तित्व में संस्कृत तथा फारसी दोनों ही की विचारधाराओं एवं संस्कृतियों का समावेश हुआ है। इस काल की महत्वपूर्ण संस्कृत कृतियों में हम जगद्धर भट्ट की स्तुति कुसुमांजलि' (१३५०) शिति कंठ की 'बाल बोधिनी' (१४७५) बलल्लभदेव की 'पद्यावली' (१५५०) और शिवोपाध्याय के विज्ञान भैरव' की भी गणना कर सकते हैं।

इस काल के साहित्य की एक विशेषता यह है कि इन दिनों केवल मुसलमान ही नहीं बल्कि हिन्दू भी फारसी का अध्ययन करने लगे। इसका परिणाम यह हुआ कि फारसी के कवियों

जहां मोहम्मद ता हरगनी जैसे रत्न देखने को मिले, वही हमें मुन्शी भवानीदास काचरू जैसे फारसी के हिन्दू कवियों के भी दर्शन हुए। फारसी काव्य क्षेत्र में इन्होंने 'बहर ए-तवील' नामक एक नवीन शैलीको जन्म दिया इनके अतिरिक्त अन्य काश्मीरी पंडितों ने भी फारसी की आराधना की और अपनी प्रतिभा से उसके वाङमय को सम्पन्न बनाया। तावरसम तुर्की उर्फ बेताब (१८४०) का जङ्गनामा' राज कौल अजबेगी १८८७ की 'डायरी' और राज दर काक उफ फरुख की रचनाएं इस बात की पुष्टि करती हैं।

इस प्रकार काश्मीर के कवियों लेखकों ने फारसी को अपना तो लिया और उनकी रचनाओं में फारसी साहित्य एवं छन्द शास्त्र की छाप भी पड़ गई, किन्तु फिर भी, उनकी अभिव्यक्ति में लोगों को एक आधारभूत ऐक्य देखने को मिला चाहे वह काश्मीरी कवि अथवा लेखक हिन्दू रहा हो या मुसलमान, अतीत से चली आने वाली स्वदेशीय परम्पराओं की न तो वह अवहेलना कर सका और न अपने वातावरण के आग्रह से ही अपने को मुक्त कर पाया। अतएव, स्वभावतः इस काल के काव्य में, हमें उस प्रदेश में प्रचलित अनेक किस्से कहानियों तथा प्रेम कथाओं का उल्लेख मिलता है और देशीय वातावरण की भी छाप दृष्टिगत होती है।

आधुनिक काल

काश्मीरी साहित्य के आधुनिक काल पर महमूद गनी (१८५५), वली उल्ला मट्टू, पीर मकबूल शाह कलवारी और वहब पारे नामक कवियों का विशेष आधिपत्य देखने को मिलता है। महमूद गनी ने 'पंज गंज' की रचना कश्मीरी में की थी, वली

उल्ला व भट्टू ने हिमलकी कहानी लिखी, पीर मकबूल शाह ने 'गुल-रेज' की प्रेम-गाथा की रचना की, और वहाब पारे ने फिरदौसी का 'शाहनामा' कश्मीरी में प्रस्तुत किया। इस काल के प्रसिद्ध हिन्दू साहित्यिकों में परमानन्द, उनके चेले लक्ष्मण, प्रकाशराम तथा कृष्णदास के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

आधुनिक काल के इन कवियों ने अपनी रचनाओं में फारसी और संस्कृत के अनेक तत्सम तथा तद्भव शब्दों का प्रयोग किया है। काश्मीरी संस्कृति तथा साहित्य को प्रभावित करने वाली विभिन्न भाषाओं की छाप, इस प्रकार हमें इन कवियों की रचनाओं में देखने को मिलती हैं। सुविख्यात जीवित कवियों में एक महजूर हैं, जिनके गीत मुख्यतः राजनीतिक अथवा आर्थिक कथा वस्तु पर आधारित होते हैं और 'नेशनल कान्फ्रेन्स' द्वारा सन्चालित आन्दोलन के ही परिचायक हैं। अब्दुरसतार गुजरी एक अन्य प्रतिभाशाली कवि हैं, जो 'आसी' अर्थात् पापी' के नाम से अधिक प्रसिद्ध है और काश्मीर के 'सांस्कृतिक मोर्चे पर काम कर रहे हैं। इस कवि में, नवीन काश्मीर की आत्मा का समावेश बहुत कुछ पाते हैं इन्हें हम श्रमिकों के कवि अथवा जन कवि भी कह सकते हैं, जिन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा जन-समुदाय की सामूहिक अभिलाशाओं एवं उद्गारों को व्यक्त किया हैं और वर्ग हीन समाज, सामाजिक अथवा आर्थिक शोषण का अन्त तथा हिन्दू मुस्लिम एकता जैसे बातों के लिए अपनी आवाज उठाई है।

काश्मीरी लोक-गीत

काश्मीरियों का लोक प्रिय साहित्य परियों की कहानियों और लोक गीतों से पूर्ण है। इसके अन्तर्गत सुदूर अतीत की

सामान्य प्रथाओं, परम्पराओं एवं कथाओं की अतुल सम्पत्ति, हमें, सुरक्षित देखने को मिलती है। विशुद्ध काश्मीरी बोली में संग्रहीत परी-कहानियों के 'वज़ीर मल' तथा लालमल' नामक प्रसिद्ध संग्रह कश्मीर के गांवों में आज भी प्रचलित हैं। लोक गीतों में, ऋतु अथवा त्यौहार विशेष के प्रसङ्गानुसार, विविध वस्तुओं का निरूपण किया गया है। यदि किसी गीत में राजसी विचार वृक्ष की प्रशंसा का गई, तो दूसरे में मंथर गति गामिनी झेलम के प्रवाह की झलक अथवा केसरिया परिधान से परिवेष्टित समतल मैदानों की आभा व्यक्त की गई है और फिर किसी में ग्राम्य युवतियों के चरखे की कल ध्वनि कवि के हृदयोद्गारों के साथ पुनः निस्सरित हुई है।

इन गीतों के भाव एवं उनकी अभिव्यंजना की शैली को हमें उनके निर्माताओं के सामाजिक एवं भावात्मक अनुभावों का ही मूर्तिमान स्वरूप समझना चाहिये। इसलिये जब हम 'रूफ' का अध्ययन करते हैं अथवा त्यौहारों आदि के अवसर पर काश्मीर की ग्राम बालाओं के नृत्यगीत सुनते हैं, तो उनके द्वारा, सांस्कृतिक तथा जातीय एकता की तंत्रियां पुनर्ध्वनित हो उठती हैं। काश्मीरियों की भाषा एवं साहित्य से सम्बन्धित इस तथ्य के आधार पर यह कहना उचित ही है कि कश्मीर के हिन्दुओं तथा मुसलमानों ने एक सामान्य दृष्टिकोण और सामान्य मानसिक तथा आध्यात्मिक संस्कृति का विकास किया है।

काश्मीर के स्वास्थ्य प्रद स्थान

—★—

काश्मीर का जलवायु अनुपम है—एक ओर हिमपात होने पर कड़कड़ता जाड़ा और दूसरी ओर गर्मियों में श्रीनगर जैसे स्थानों में हल्की हल्की गर्मी। काश्मीर में ऐसे बहुत से स्वास्थ्यवर्धक स्थान हैं जहां यात्रियों के लिए विभिन्न प्रकार के आकर्षण हैं। वहां ऐसे भी बहुत स्थान हैं जहां साधारण यात्री नहीं पहुँच पाते। ऐसे अधिकांश स्थानों तक अभी मोटर चलने लायक सड़कें नहीं बनी हैं किन्तु आशा है कि काश्मीर घाटी की उन्नति के साथ साथ हिम तथा घने वनों से आच्छादित इन दूर दूर के ग्राम्य प्रदेशों में यात्री आसानी से पहुँच सकेंगे।

पहलगाम

लीदर घाटी के हृदय तथा लीदर और तानिन नदियों के संगम पर पहलगाम स्थित है। यह एक प्रसिद्ध स्वस्थ्यवर्धक स्थान है। श्रीनगर से पहलगाम ५८ मील दूर है और समुद्र तल से इसकी ऊंचाई ७००० फुट है। यहां का जल वायु अत्यन्त सुहावना है ग्रीष्म काल में, विशेष कर जून से सितम्बर तक, लोग यहां आकर तम्बुओं में रहते हैं खांसी तथा यक्ष्मा, अपच तथा आम शारीरिक दौर्बल्य के लिए यहां का जलवायु अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध हुआ है।

गुलमर्ग तथा टनमर्ग

गुलमर्ग, श्रीनगर से २८ मील पश्चिम की ओर तथा समुद्र तल से ८,७०० फुट की ऊंचाई पर स्थित है। पहले इसका नाम 'गौरी मार्ग' (शिव की पत्नी गौरी का मार्ग') था और १६ वीं शताब्दी में शाह यूसुफ शाह ने इसका नाम बदल कर 'गुलमर्ग' रख दिया था। यह 'पुष्प वाटिका' विशाल संख्या में यात्रियों को विशेष कर बाहर से आने वालों को, आकर्षित करती है। गुलमर्ग के एक ओर नागा पर्वत तथा दूसरी ओर सम्पूर्ण घाटी का अपूर्व दृश्य है। चारों ओर परिक्रमा करती हुई सात मील लम्बी सड़क अनुपम प्राकृतिक सौंदर्य की छटा बिखेरती है। गुलमर्ग की तल-हटी में टनमर्ग स्थित है यहां का जलवायु फेफड़ों के रोगों से ग्रस्त रोगियों के लिए अत्यन्त लाभप्रद है। यहां यक्ष्मा के रोगियों के लिए एक सेनिटोरियम (स्वास्थ्य केन्द्र) भी है।

सोनमर्ग

सोनमर्ग अथवा 'सुनहरी वाटिका' श्रीनगर से उत्तर पूर्व की ओर ५१ मील दूर है तथा समुद्र तल से ८,५७० फुट ऊंचा है। सिंध घाटी में यह सबसे अच्छा स्वास्थ्यवर्धक स्थान है तम्बू लगाकर रहने के लिए यह स्थान बहुत रमणीक है।

गांधरबल

गांधरबल, सिंध नाले के तट पर स्थित एक छोटासा ग्राम है। श्रीनगर से उत्तर की ओर यह १६ मील दूर है तथा यहां की ऊंचाई ५,२२० फुट है। प्रायः बहुत से यात्री अपने हाउसबोट (रहने की नावें) यहां लाकर रखते हैं। समीप ही विहुमन नाम का झरना है जिसका जल औषधीय गुणों के कारण प्रसिद्ध है।

बटोत

श्रीनगर के दक्षिण में १२५ मील की दूरी पर बटोत बन-हाल जम्मू रोड पर स्थित है। यहांका जलवायु अच्छा है। गर्मियों में विशेष कर पंजाब से यात्री लोग अपनी छुट्टियां बिताने यहां आते हैं इसके समीपही एक सैनाटोरियम (स्वास्थ्य केन्द्र) भी है।

मानसबल

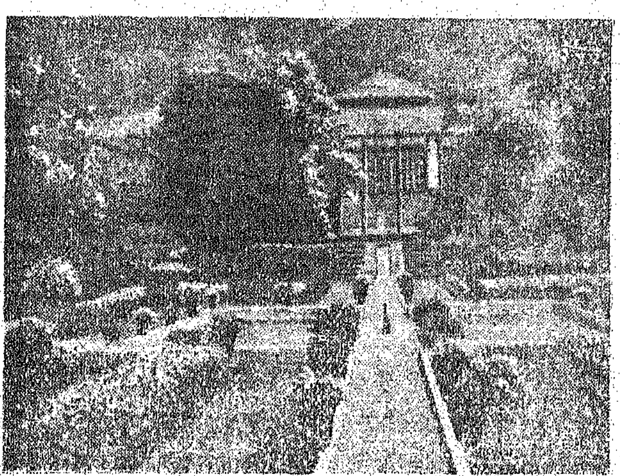
सुन्दर मानसबल झील के किनारे पर स्थित मानसबल छुट्टियां बिताने का एक प्रसिद्ध स्थान है। यह स्थान श्रीनगर से उत्तर की ओर २५ मील दूर है। मानसबल झील चारों ओर से पर्वतों से घिरी हुई है और जल से भरे प्याले सी दिखायी देती है। झील के शीत जल में पर्वतों का प्रतिबिम्ब पड़ता रहता है।

झीलें तथा झरने

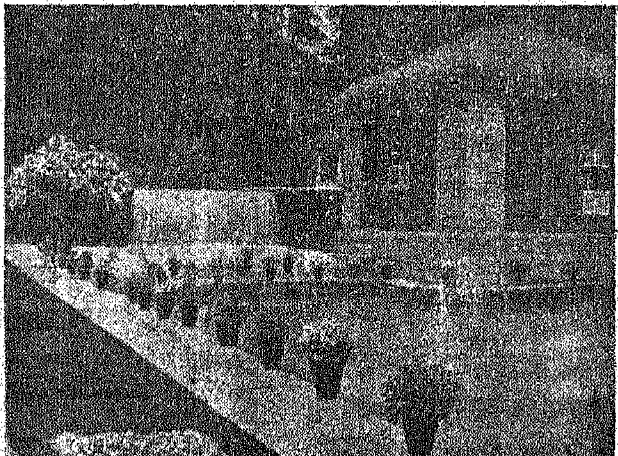
संसार की सुन्दरतम झीलों और झरनों में से कुछ काश्मीर में हैं यहां की वुलर डल तथा आंचर झीलें विश्व विख्यात हैं। वुलर झील एशिया भर की सबसे बड़ी प्राकृतिक झीलों में से एक मानी जती है। यहां के झरने अपने जल के औषधीय गुणों के कारण प्रख्यात हैं।

चश्मा-ए-शाही

चश्मा-ए-शाही श्रीनगर से लगभग ५ मील दूर है। इसका जल अत्यन्त ठण्डा होता है। इसमें खनिजों का मिश्रण है तथा बहुत पाचक है। सन् १६३२ में मुगल बादशाह शाहजहां ने इसके पास ही एक अत्यन्त सुन्दर उद्यान बनवा दिया था।



चश्मा-शाही



अच्छावल

कुक्कर नाग

कुक्कर नाग गंधक युक्त जल के झरनों के लिए प्रसिद्ध है। यह स्थान श्रीनगर से दक्षिण की ओर ४८ मील दूर है। झरनों का जल बड़ी तेजी से पर्वत में से निकलता है जो प्लूरिसी (फेंफड़ों की झिल्ली में पानी आना) तथा दमा के लिए बहुत लाभदायक है।

अच्छाबल

श्रीनगर से दक्षिण की ओर ३९ मील दूरी पर अच्छा बल झरने का जल विशेष कर मूत्राशय, गुर्दा तथा पेट के रोगों के लिए अत्यन्त लाभदायक है। जहांगीर बादशाह ने इस स्थान को बहुत पसन्द किया और यहां एक उद्यान बनवा दिया था।

—★—

अमर शहीद मकबूल

मुजफ्फराबाद उड़ी और बारामूला के इलाकों से पाकिस्तानी आक्रमण-कारियों से बचे हुए शरणार्थी धड़ाधड़ श्रीनगर आ रहे थे। मोटरों में, लारियों में, तांगों पर, बैलगाड़ियों पर और पैदल हजारों व्यक्ति अपनी सम्पत्ति और अधिकार छोड़ केवल अपनी जान बचाकर, भाग रहे थे। माता को पुत्र का, पति को पत्नि का, भाई को बहन का कोई ख्याल नहीं था। भय और निराशा से उनके शरीर की मूर्तियां कांप रही थीं। उनके कानों में बन्दूकों की आवाजें गूंज रहीं थीं उनकी आंखों के सामने हजारों नर-नारियों की तड़पती हुई लाशों का दृश्य था। कितने

ही ऐसे लोग थे जो अपनी जान न बचा सके और कबाइलियों के पंजे में आगये। उनकी तादाद हज़ारों की नहीं लाखों की थी। कबाइली मुजफ्फराबाद और उड़ी के इलाकों को रौंदते हुए बारामूला पहुँचे। बारामूला में उन्होंने डेरा डाल दिया। बारामूला के छोटे से सुन्दर और मनोहर कस्बे में हजारों कबाइली नजर आते थे। हिंसा और जुल्म की लगाम को उन्होंने खुला छोड़ दिया। हिंसा, लूटमार, औरतों और लड़कियों का अपमान आम बात थी।

लोग भय से मूर्तिवत् होरहे थे। किसी को आह करने की हिम्मत न थी। आहकी, तो गोली कलेजेके पार होगई। कबाइली हत्यारों के मुखपर केवल दो शब्द थे—'जर' (धन) और 'जन' (नारी) निर्धन काश्मीरियों के पास धन कहां, जो भी था ये लुटेरे लेगये। हजारों की तादाद में इन हत्यारों ने कस्बे के चारों ओर के गांवों में कोई गाय, भैंस, या बकरी नहीं छोड़ी। लोगों ने गर्मियों में सर्दियों के लिए खुराक इकट्ठी की थी, इन घातकों ने वह भी न छोड़ी। सारे कस्बे में आग लगादी और अशक्त लोगों को बेघर बना दिया। सर्दियों के दिन और लाखों लोग सड़कों पर पड़े थे। तन ढकने को कपड़ा नहीं। खाने को दाना नहीं। कितने ही बच्चे नर और नारी भूख और सरदी से हाय-हाय करते हुए मर गये।

मकबूल शेरवानी नैशनल कान्फ्रेंस का एक कार्यकर्ता था। जबसे कबाइली घातकों का बारामूला पर आक्रमण हुआ, वह लुप्त था। लोगों को उस पर पूरा विश्वास था, परन्तु उसका लुप्त होना एक अचम्भे की बात थी। वह बारामूला में होता तो

लोगों को और अपने साथियों को ढाड़स ही देता। वह कहां है किसी को इस बात का ज्ञान नहीं था। कबाइली सरदार और पाकिस्तानी दल के अफसर भी शेरवानी को खोज निकालने में असफल रहे। व उसके वृद्ध पिता और माता को सड़क पर घसीट लाये और उनको खूब पीटा, पर उन गरीबों को शेरवानी का पता हो तब तो बतायें? उसकी पत्नी और नन्हें से बच्चों को बेदरदी से पीटा गया परन्तु शेरवानी का कहीं पता न चला। और लोग शेरवानीके घरवालों की हालत देखकर अपने दुःख भूल गये, परन्तु उसके साथ कोई दया दिखाये तो उसकी खैर नहीं।

लोगों में तरह-तरह के सन्देह पैदा होगये। आखिर शेरवानी किधर गया? 'वह जान बचाकर श्रीनगर भागगया? अरे वह पाकिस्तान चला गया। असल में वह इन दुष्टों के साथ मिला हुआ है। उसने हमें धोखा दिया।' ये थीं वे बातें जो लोग आपस में करते थे। मगर फिर भी शेरवानी का पता नहीं चला।

जब कबाइली गुण्डे महूरा पहुँच गये और वहां के पवित्र चिन्हों को तोड़ फोड़ दिया, उसी वक्त शेरवानी अपने घोड़े पर सवार होकर वहां पहुँचा। वह इस कारण गया कि वहां से असली समाचार लाकर श्रीनगर में शेरे काश्मीर को सूचित करे। वह जब वहां पहुँचा तो उसने अपना भेष बदल लिया था। वैसे तो वह खद्दर पोश था और पूरा गाँधीभक्त था, पर उस समय वह पूरा पठान जान पड़ता। वह कबाइली हत्यारों और पाकिस्तानी गुण्डों से मिला। उनसे बात चीत करके और अपने को उनका

ही साथी बतलाकर उनसे मतलब की बातें निकाली। उसी रात को वह वहां से चल दिया और बारामूला से मोटर साइकल पर सवार होकर श्रीनगर पहुँचा और कबाइलियों के सारे षडयन्त्र का पता काश्मीर के नेता को दे दिया।

अभी काश्मीर कानून के अनुसार भारत के साथ नहीं मिला था। इस कारण भारत की सेना काश्मीर को बचाने के लिए नहीं आई थी। मकमूल शेरवानी रातों रात बारामूला फिर वापस आया और भेष बदलकर कबाइलियों के साथ रहने लगा कोई मकमूल को पहचान न सका, उसके अपने मित्र भी उसको पहचान न सके। पाकिस्तानियों के तमाम षड़यन्त्र का पता लगाकर वह श्रीनगर पहुँचाता रहा और श्रीनगर के लोग उसी के मुताबिक अमल करते रहे।

बारामूले का सारा कस्बा लुटेरों के हाथ में था। बारामूला ही नहीं, श्रीनगर से भी वे कुछ मील ही की दूरी पर थे। मकमूल ने अपना कार्य जारी रखा। कबाइली आक्रमणकारियों को मकमूल पर सन्देह होने लगा था परन्तु मकमूल अपनी जान हथेली पर रखकर श्रीनगर सारा समाचार पहुँचाता रहा। उधर से काश्मीर भारत के साथ मिल गया। सारे शहर में प्रसन्नता की लहर दौड़ी। सड़क से भारतीय सेना का आना बहुत कठिन था, इस कारण भारत के वायुयान सेना के दल लेकर श्रीनगर पहुँच रहे थे। पहले ही दिन सारी सेना नहीं आ सकती थी। तीन सौ के करीब सेना उस दिन पहुँची। श्रीनगर के चारों ओर कबाइली थे। जल्दी में भारतीय सेना को धावा बोलना संभव नहीं था। इस कारण सेना ने श्रीनगर की रक्षा के लिए कदम

नहीं उठाया। मकमूल ही एक व्यक्ति था जिसको इस बात का पता था कि कौन-कौन सी जगह कबाइलियों के मोरचे हैं और किस किस तरफ वे फैले हुए हैं। मकमूल अब खास बारामूला नहीं जा सकता था, परन्तु वह दूसरे इलाकों से जहां-जहां आक्रमणकारी पहुँचे थे, जाता रहा और वहां कबाइलियों के इरादों से भयभीत सेना को सूचित करता रहा।

भारतीय सेना ने दुश्मन पर धावा बोल दिया और उनको कई मील नीचे की तरफ धकेल दिया। कबाइलियों ने सुम्बल में, जो श्रीनगर से बीस मील की दूरी पर है, अपने मोरचे लगाये थे और वहां भारी तादाद में श्रीनगर पर धावा बोलने के लिए इकट्ठे हुए थे। मकमूल शेरवानी यह समाचार भारतीय सेना के पास पहले ही लाया था। भारतीय सेना के दस्ते सुम्बल की तरफ बढ़े। सुम्बल पहुँचकर वे वृक्षों के पीछे या इधर-उधर छिपे रहे। मकमूल कबाइलियों के पास गया। उनको भयभीत किया और कहा कि भारतीय सेना उनका पीछा करते हुए यहां पहुँच गई है और उसके साथ काफी फौजी सामान है। कबाइली घबरा गये। मकमूल ने उनको उसी रास्ते भागने को कहा जहां भारतीय सेना के मोरचे लगे थे। उनका वहां से भागना था कि उन्हें एक एक करके भारतीय सेना ने मार गिराया।

भाग्य की बात की जो बचे उन्होंने मकमूल को गिरफ्तार कर लिया और अपने साथ बारामूला ले गये। मकमूल के जीवन की अब खैर नहीं थी। मकमूल शेरवानी कोई साधारण कैदी नहीं था। कबाइलियों के शक सत्य निकले। मकमूल के अपराध बहुत थे और सब से बड़ा अपराध गद्दारी का था। पहले दिन

उन्होंने उसके साथ बहुत मारपीट की औ दूसरे दिन उसको फौजी अदालत में पेश किया गया जहां उसको मृत्यु का दण्ड सुनाया गया।

उस समय मकमूल ने अपनी वीरता का पूरा सबूत दिया। वह उठा और कबाइलियों को संबोधन करके बोला—'मेरा काम आज सफल हो गया कि मेरे खून से मेरे देश के पादों को सींचा जायेगा। मेरे जैसे लाखों मकमूल काश्मीर की पवित्र भूमि पर पैदा होंगे। ये कबाइली दरिन्दे अपने पापी इरादों में कभी सफल नहीं होंगे जब तक कि काश्मीर का एक-एक बच्चा जीवित है। क्या उनके इसलाम ने उनको यही शिक्षा दी है? अशक्त लोगों पर जुल्म करना, नारियों का अपमान करना, बच्चों, वृद्धों और युवकों का खून करना, क्या यही मुसलमानों का धर्म है?' उसने उनको सूचित किया कि काश्मीर में हिन्दू मुसलमान और सिख एक हैं, उनके अत्याचार काश्मीरियों को भाईचारे से अलग नहीं कर सकते। जिन्ना के दो कौमों के उसूल की धज्जियां काश्मीर की भूमि में ही उड़ेंगी। यह सुनकर कबाइली उसके खून के प्यासे हो गये और उसको जिन्दा खाने को उठे। मकमूल एक वीर की तरह खड़ा था और उसके मुख से यह बचन निकलते थे 'शेर काश्मीर का क्या इर्शाद? हिन्दू मुसलिम सिख इत्तिहाद।' कबाइलियों ने मकमूल को रस्सी से बांध सारे कसबे में घोषणा की कि सारे नर-नारी पाकिस्तान के गद्दार मकमूल की मृत्यु क ! दृश्य देखने के लिए आयें। यदि कोई न आयेगा तो उसको मौत की नींद सुला दिया जायगा। सारे लोग मकमूल के प्रेम और अपने बचाव के लिए आए।

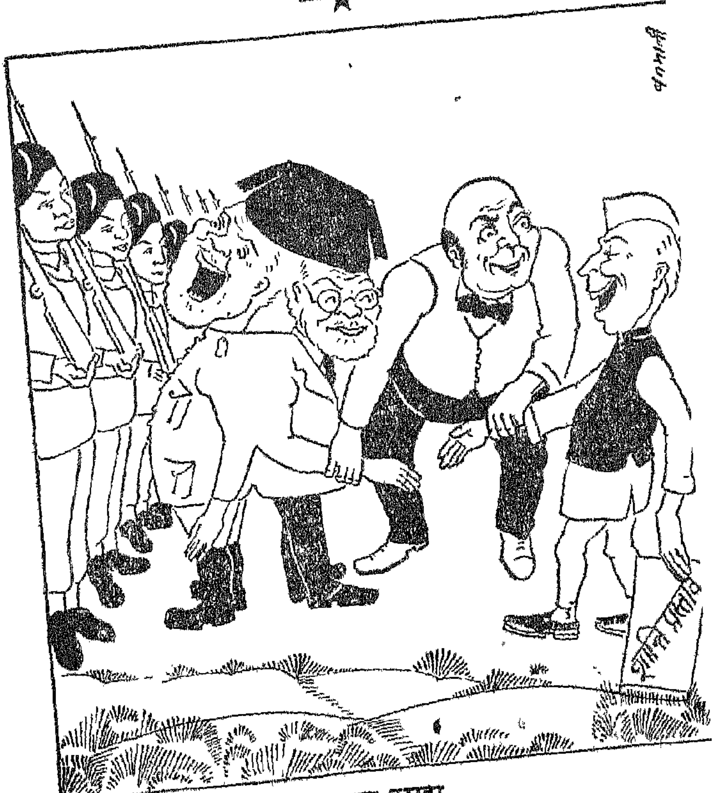
मकमूल शेरवानी को एक चौखट के साथ खड़ा कर दिया गया। उसकी दोनों बाहें खोली गयीं और चोखट के दो खम्बों के साथ कीलों से ठोंक दी गयीं। उसके मुख से हिन्दू-मुसलिम-सिख ऐक्य की जयध्वनि आती थी। इसके पश्चात उसके दोनों नेत्र चाकू से निकाले गये। उसकी माता और पत्नी को उसके पास बिठाया गया और उनको आज्ञा हुई कि उनकी आंखों से जो एक आंसू गिरा तो उनकी भी ऐसी ही अवस्था की जायगी। मकमूल की यह अवस्था देख कर उसकी माता और पत्नी से न रहा गया। वे दोनों बेहोश हो गईं। मकमूल के दोनों नेत्र निकाल कर उसको गोलियों का शिकार बनाया गया। छः गोलियां उसकी छाती के पार हो गईं।

मकमूल सारे जगत के सामने मर गया परन्तु अमर हो गया। गोलियों की आवाज से मकमूल की माता को होश आ गया। उसने अपने पुत्र की लाश को अपने सामने देखकर रोया-पीटा और उन दुष्टों और अत्याचारियों को कहा, 'यह न समझो कि तुम्हारे इस अत्याचार और पापीपने को परमात्मा नहीं देखता है। अवश्य ही यह तुम्हारी दीवार जो लोगों की आहों पर और तुम्हारे अत्याचारों पर खड़ी है शीघ्र ही गिर जायेगी। और वह बेचारी फिर बेहोश हो गई। सारे लोगों की आंखों में आप ही आप आंसू भर आये और रोने की आवाजें आईं। इन दुष्टों का क्रोध तेज हो गया और लोगों पर बेतहाशा गोलियां चलाई गयीं और मकमूल के साथ कई सौ और शहीद अमर हो गये।

मकमूल मर गया परन्तु मकमूल का नाम काश्मीर के बच्चे बच्चे के मुख पर है। मकमूल अमर हो गया और उसका नाम

जीवित रहेगा। आजकली काश्मर घाटी के हर नर नारी के मुख पर मकमूल का दिया हुआ यह बचन है 'हिन्दू मुसलमिन सिख इत्तेहाद जिन्दाबाद !' एक मकमूल मर गया। लेकिन काश्मीर देश में लाखों मकमूल पैदा हो गये जो अपनी देश रक्षा, अपनी स्वतंत्रता की रक्षा, अपनी और अपने देश की आन और शान के लिए मरने के लिए तैयार हैं।

—★—



सच्चा इरादा

काश्मीरी लोग स्वयं निर्णय करें

काश्मीर का इतिहास के प्रत्येक युग में भारत से गूढ़ सम्बन्ध रहा है, भारत के निर्माण में वे बराबर भागी रहे हैं और जब भारत में मुसलमानों का शासन रहा, काश्मीरियों के प्रकृति प्रेम ने भारतीय सुन्दरता प्रदान की। मुगल सम्राट काश्मीर के अनन्य प्रेमी थे, और उन्होंने भारतीय सभ्यता को काश्मीर के कला-कौशल से सम्पन्न किया। विद्या और कलाकौशल में काश्मीर का महत्वपूर्ण स्थान है। और सरकारी सेवाओं में भी काश्मीरियों ने भी ख्याति प्राप्त की। मुगल कालीन और इसके बाद की सभ्यता को भारतीयों का ही नहीं, काश्मीरियों का भी कारनामा समझना चाहिये। यदि कोई काश्मीर को भारत से पृथक करना चाहे या काश्मीरियों से उनकी सांस्कृतिक पैतृक सम्पत्ति छीनना चाहे, तो काश्मीरियों को दृढ़ संकल्प करना चाहिये कि वे भारत में मुसलमानों की सभ्यता की रक्षा करेंगे, और अपनी प्रतिभा द्वारा उसे और भी उन्नत करके काश्मीर को इसका एक प्रमुख केन्द्र बनायेंगे विपरीत निर्णय करने का अर्थ यह होगा कि कश्मीरी इसके लिये सहमत हो गये हैं कि भारत से मुसलमानों की सभ्यता उठ जाय, और भारत मुसलमानों का कार्य क्षेत्र होने की बजाय उनके धर्म और संस्कृति का श्मशान बन जाय। मैं कहता हूँ, भारत में सम्मिलित होने से, काश्मीर किसी रूप में भी इस्लामी दुनियां से अलग नहीं हो जायगा।

भारत सरकार समस्त एशियाई देशों में मैत्री और एकता उत्पन्न करने का यत्न कर रही है, और इन्डोनेशिया जैसे देशों की भरसक सहायता कर रही है। समस्त इस्लामी देश इन प्रयत्नों में उसका समर्थन कर रहे हैं और प्रकारान्तर से उन पक्षपात पूर्ण एवं अनुदार आरोपों का खंडन कर रहे हैं जो पाकिस्तान के अस्तित्व को उचित सिद्ध करने के लिए भारत पर लगाये गये हैं। पाकिस्तान में सम्मिलित होकर काश्मीरी इस्लामी जगत से अपना स्नेह इतना नहीं प्रकट करेंगे जितना कि वे यह साबित करेंगे कि अपनी परम्पराओं के विरुद्ध वे अब मुसलमानों और गैर मुसलमानों के बीच राजनीतिक और सामाजिक सहयोग को गलत और असंभव समझने लगे हैं और वे उन मुसलमानों में शुमार होना चाहते हैं जिन्होंने अपनी अलग हुकूमत कायम करने के लिए भारतीय मुसलमानों और इस्लामी सभ्यता को खतरे में डालना मंजूर कर लिया था।

भारत में धनी, निर्धन, जमींदार और किसान, पूंजीपति तथा मजदूर सभी हैं। लेकिन इसके साथ ही आर्थिक और सामाजिक न्याय की ओर बड़ा ध्यान दिया जा रहा है। किसानों को उनकी भूमि, परिश्रम और उत्पादन के मालिक बनाने की योजनाएं कई प्रान्तों में बन चुकी हैं और वे शीघ्र ही कानून बन जायंगी। पूंजीपतियों को यह समझा दिया गया है कि सरकार यह स्वीकार नहीं कर सकती कि जितनी किसी के पास पूंजी हो उतना ही उसका अधिकार भी हो। प्रत्येक नागरिक की शिक्षा का दायित्व सरकार ने मान लिया है और आशा है कि अज्ञानता का अन्धकार शीघ्र दूर किया जा सकेगा। महात्मा

गांधी, सरकार और हमारे प्रगतिशील नेताओं पर यह जिम्मेदारी डाल गये हैं कि जनसाधारण के कल्याण का हर प्रकार से ख्याल रखा जाये और विशेष कर कृषकों के कल्याण की योजनाएं बनाई जायें।

शेख अब्दुल्ला और पंडित जवाहर लाल नेहरू की मैत्री आदर्श है और यह सम्बन्ध इस बात की गारन्टी है कि काश्मीर के स्वत्वों की किसी रूप में भी उपेक्षा न की जायगी। शेख अब्दुल्ला को भारत के राजनीतिक जीवन में एक विशेष स्थान प्राप्त है और काश्मीर को उन्नत करने की जो योजनाएं वे बना रहे हैं या भविष्य में बनायेंगे। हो सकता है, वे भारत के लिये आदर्श हों। काश्मीर अपना हित देखें, साथ ही अपने उन मुसलमान भाइयों का भी लाभ देखें—जो भारत में हैं काश्मीरियों के लिये यह सुअवसर है कि वे भारत में सम्मिलित होकर इस्लामी प्रजातन्त्रीय सिद्धान्तों का अनुसरण करते हुए संसार का पथ-प्रदर्शन करें।

आज काश्मीर शब्द से जिस विशेष प्रदेश को हम समझते हैं वह एक भिन्न २ भाषाओं रीति-रिवाजों और दूर तक फैले हुए एक देशी राज्य का द्योतक है जोकि आजतक विद्यमान महाराजा हरीसिंह को अपने पूर्वजों से विरासत में मिला था यद्यपि वास्तविकता तो इसीमें थी कि जहां और जितने इलाके में काश्मीरी भाषा भाषी लोग निवास करते हों उसे ही काश्मीर नाम से पुकारा जावे परन्तु कुछ तो प्राचीन इतिहास की विशेषता और दूसरे उससे सम्बन्धित अन्य प्रदेश बाद में विजय करके मिलाये जाने के कारण सुविधा की दृष्टि से सब काश्मीर के ही अङ्ग बन जाने से काश्मीर की प्रधानता रही जबकि काश्मीर

स्वयं भी उस सारे प्रदेश का एक अङ्ग मात्र है। इस प्रकार आज काश्मीर व जम्मू अथवा केवल काश्मीर समय समय पर एकत्र हुए बहुत से प्रदेशों का समूह ही जानना उपयुक्त है। १५ अगस्त सन् ४७ से पाकिस्तान का क्रियात्मक रूप सामने आते ही काश्मीर एक गहन समस्या बन गया है। जिन सिद्धान्तों के आधार पर भारत का विभाजन हुआ यदि उन्हींको हम काश्मीर पर भी लागू करें तो काश्मीर को पाकिस्तान का अङ्ग बनना ठीक जान पड़ता है। यदि जनमत या बहुमत को कसौटी न माने तो शासक की इच्छा को न्याय संगत मानते हुए काश्मीर महाराजा हरिसिंह की इच्छा द्वारा भी भारत का अङ्ग बन सकता है। परन्तु यह बाद का विकल्प जूनागढ़ के उदाहरण से कट जाता है न तो वहां की प्रजा और नहीं उसके पड़ोस की सरकार अर्थात् भारत यह चाहता था कि जूनागढ़ पकिस्तान का अङ्ग बने अतः वहां के नवाब की इच्छा न होते हुए भी आज जूनागढ़ भारत का अङ्ग है। इस प्रकार जनमत की कसौटी ही माननीय ठहरती है। इसी जनमत संग्रह के लिए पाकिस्तान भी जोर लगा रहा है यहां तक कि साथी राष्ट्रों के प्रति निधी लग-भग १॥ साल तक भारत और पाकिस्तान की राजधानी में पड़े हुए यह प्रयत्न करते रहे कि किस प्रकार मतदानका ढंग रखा जावे। क्योंकि जनता के बहुमत निर्णय के आधार पर ही काश्मीर का इधर या उधर होना सम्भव है। आश्चर्य तो पाकिस्तानके एक ओर अवैधानिक ढङ्ग बरत कर काश्मीर को हस्तगत करने की सोचने और आज मानवता की दुहाई देते हुए मत संग्रह की अभिलाषा रखने में है। क्योंकि उसे मालूम है कि साथी राष्ट्रों का अप्रत्यक्ष सहयोग उसे प्राप्त है कारण यदि ऐसा न होता तो क्या एक बार भी अन्तर्राष्ट्रीय

दृष्टि से एक भयङ्कर अपराध करने पर भी साथी राष्ट्र पाकिस्तान को दोषी ठहरा कर उसे काश्मीर भूमि से अपनी सेना निकालने का हुक्म न देते ? पाकिस्तान भली भांति जानता है कि मेरे इस अनुचित कार्य के भी समर्थक आज इस कुटिलता से भरी दुनियां में मौजूद हैं अन्यथा इस प्रकार अचानक एक गैर जिम्मेवार जनसमूह को काश्मीर पर चढ़ाई करने के लिये सहायता तो क्या अपने प्रदेश में से गुजरने तक न देता। एशिया के देशों में पश्चिमी साम्राज्य का प्रभाव एक दम नष्ट हो जाना इन रक्त पिपासुओं को कैसे सह्य हो सकता था। उन्हें तो एक दूसरे राष्ट्र को उलझा कर कमजोर बनाने में ही अपनी पिपासा शान्त करनी थी वह जानते हैं कि हमारी आवश्यकता तो तभी अनुभव होगी जब कि एशिया वासी राष्ट्र शान्ति का जीवन न बिता सकें। भारत सरकार भी मतदान द्वारा अन्तिम निर्णय की पक्षपाती है किन्तु सारे काश्मीर को एक शासक के अन्तर्गत एकही सरकार होनेके तथ्य की उपेक्षा न करके महाराजा काश्मीर व वहां की बहुमत जनता के प्रतिनिधी शेखअब्दुल्ला की इच्छाओं से ही काश्मीर को भारत का अङ्ग बनाए हुए है अतः वहां पर किसी प्रति क्रियावादी जनसमूह की एक बनावटी कठपुतली सरकार के समर्थन की घोर विरोधी है। यह किसी अवस्था में भी भारत सरकार सहन नहीं कर सकती कि उपद्रवी लोगों के काश्मीर के एक तिहाई भागपर अधिकार रहते हुए जनता शान्ति से निष्पक्ष मत दे सकती है। दूसरी तरफ पाकिस्तान का यह दावा है कि आज की हुकूमत काश्मीर की जनता की हुकूमत नहीं है वह तो आजाद काश्मीर की सरकार और उनके नेता सरदार इब्राहीमखान को जनता की वास्तविक

हुकूमत मानता है। महाराजा हरीसिंह और शेख अब्दुल्ला पाकिस्तान की राय में एक झूठे मूठे काल्पनिक व्यक्ति ही समझे जाते हैं आश्चर्य तो इस बात का है कि सयुक्तराष्ट्र संघ के प्रतिनिधी स्पष्ट न सही अस्पष्ट रूप में पाकिस्तान के इस मिथ्या एवं कपट पूर्ण दुराग्रह के समर्थक हैं। फलस्वरूप पाकिस्तान जब हरिसिंह और अब्दुल्ला की सरकार का विरोध करता है तो कम से कम वह उसे सरकार तो मानता ही है अतः काश्मीर को दो शासनों के अन्तर्गत समझता है जब कि भारत केवल एक को ही शासक मानता है। इस प्रकार के उलझे हुए विषय को वर्त्तमान परिस्थिति में साथी राष्ट्र क्या करेंगे यह स्पष्ट न होते हुए भी इतना तो प्रकट ही है कि गतवर्ष के युद्ध विराम से पाकिस्तानियों के हाथ मजबूत हो जावेंगे।

पूरे चौदह महीने और सात दिन के बाद १ जनवरी ४९ की अर्ध रात्रि के समय विरामसन्धि के समझौता प्रस्ताव के द्वारा युद्ध बन्द कर दिया गया था उसके बाद भी आज पूरे १४ महीने बीतकर १५ वें में समावेश होरहा है यह नहीं कहा जा सकता कि आखिर भावी निर्णय किस प्रकार कौन करेगा ? काश्मीर का जनमत भारत और पाकिस्तान दोनों में से किसके पक्ष में अपनी सम्मति प्रकट करेगा यह बात युद्ध कालकी अपेक्षा इस समय अधिक विचारणीय तथा जिज्ञासा उत्पन्न करने वाली है काश्मीर की समस्या यद्यपि भारत और पाकिस्तान के मध्य बहुत से विवादात्मक विषयों में से एक है परन्तु पाकिस्तानी उत्तरदायी, प्रवक्ताओं के द्वारा इस समस्या को बहुत महत्वपूर्ण बताया गया है और साथ ही उनका यह भी दावा है कि यदि यह काश्मी-

समस्या उनके पक्ष में न सुलझ सकी तो अन्य समस्याओं का भी सुलझना कठिन ही नहीं असम्भव तक बतलाया गया है पाकिस्तानी नेताओं की राय में तो भारत और पाकिस्तान के सम्बन्धों में सुधार होना भी इसी समस्या के ऊपर आश्रित है। स्वयं भारत के नेता भी अपने और पाकिस्तान के मधुर सम्बन्धों में इसी काश्मीर समस्या को बड़ी भारी रुकावट समझ रहे हैं। परन्तु समस्या को सुलझाने का प्रकार दोनों देशों का भिन्न है फिर समस्या सुलझे तो क्योंकर ? पाकिस्तान में स्थित काश्मीर से सुन्दर तथा आधुनिक यातायात के मार्ग और इसी कारण दोनों स्थानों के व्यापार की सुविधा एवं मुस्लिम बहुल प्रदेश होने के नाते काश्मीर पाकिस्तान का ही अङ्ग होना ठीक है यह पाकिस्तान का मत है। चाहे यह उपर्युक्त युक्तियां उचित हैं अथवा अनुचित इसका निश्चय करने से पूर्व यह देखना है कि पाकिस्तान ने यह बातें वैधानिक ढंग से संसार के सामने न रखकर लाठी और धाँधले बाजी के बल से मनवानी चाही और यही एक सबसे बड़ी उसके पक्ष की कमी कही जा सकती है। अगर उसे यह अभिलषित ही था कि भारत में काश्मीर न मिले तो यह वहां लुटेरों और बदमाशों को सहायता देने की अपेक्षा वहां की जनता से स्वतन्त्रता पूर्वक राय लेने का अनुरोध करता और फिर प्रत्येक विचार धारा के व्यक्ति को वैधानिक ढंग से अपना पक्ष जनता के सामने रखने का भी एक सुअवसर प्राप्त होजाता। अतः पाकिस्तान की सारी युक्तियां सारवान हों अथवा सारहीन निस्सन्देह ही उसकी युक्ति हीनता की द्योतक हैं। दूसर तरफ न तो किसी की इच्छा के विरुद्ध न किसी के ऊपर अधिकार की नियत रखते हुए और नहीं किसी के ऊपर उसका

अधिकार किसी ऐसे ही सारहीन कारण के द्वारा है ऐसा भारत का दावा है वह तो मित्रता के नाते वहां के रहने वालों और उनके प्रतिनिधि की इच्छा के अनुकूल आपत्ति के समय उनकी आवाज पर सहायतार्थ वहां पहुँचा है और वह भी इस शर्त पर कि अगर वहां कीं जनता शान्ति पूर्वक यह निश्चय करे कि उसने अपना सम्बन्ध भारत से बनाये रखना है तभीं यह सम्बन्ध स्थायी सम्बन्ध समझा जावेगा। यदि भारत की इस प्रकार जन धन की हानि होने के बावजूद भी वहां की जनता भारत से सम्बन्ध त्याग करना चाहे तो उसको कौन जबर्दस्ती अपने से मिलाये रख सकता है। इन दोनों ही पक्षों की बातों को प्रत्येक मोटी से मोटी अक्ल वाला भी इन्सान भली भांति समझ सकता है मगर अति शोक का विषय है कि स्वार्थी नीति के चश्मे आंखों पर चढ़ा कर एक सुन्दर दृष्टि रखने वाला भी अन्धा बन जाता है।

यदि हम कानूनी दृष्टिकोण को प्रधानता दें तो भी शायद प्रत्येक निष्पक्षव्यक्ति यही निर्णय देगा कि जब काश्मीर की जनता और उसके प्रतिनिधि एव शासक की मर्जी से काश्मीर भारतीय संघ में प्रविष्ट हो चुका फिर काश्मीर के लिए पाकिस्तान का दावा करना एक नितान्त भूलही कही जा सकती है। और इसी के परिणाम स्वरुप पाकिस्तान को भारत पर आक्रमण करने का दोषी ठहराया जा सकता है जिसके विरोध में भारत पाकिस्तान पर कहीं भी प्रत्याक्रमण करने का अधिकारी हो जाता है। यह प्राथाक्रमण अन्तर्राष्ट्रिय दृष्टिसे यद्यपि उपयुक्त होता परन्तु बुराई को बुराई से रोकने के सिद्धान्त का अनुयायी न होने के कारण

भारत ने अन्तर्राष्ट्रिय वातावरण को अधिक न उलझने देने के लिए इस मार्ग का आश्रय लेना उचित नहीं समझा, जिसका खमयाजा (प्रायश्चित्त) आज भारत को करना पड़ रहा है। जो कि न्याय की मांग करने अन्यायियों के पास चला गया। भारत की आजाद सरकार की यह एक सबसे बड़ी भूल हुई है जो उसने राष्ट्र संघ से अपना फैसला कराने की प्रार्थना की।



राष्ट्रसंघ की समझौता कराने की असफलता ने उसकी योग्यता, और शक्ति को भी संसार के सामने रख दिया है। राष्ट्रसंघ के समक्ष काश्मीर का प्रश्न जाने के समय और आज में एक केवल यही अन्तर दिखाई देता है कि उस समय वाला भयंकर युद्ध आज काश्मीर भूमि में नहीं हो रहा है अन्यथा स्थिति जहां की तहां आज भी मौजूद है। इसके अतिरिक्त एक लाभ तो अवश्य

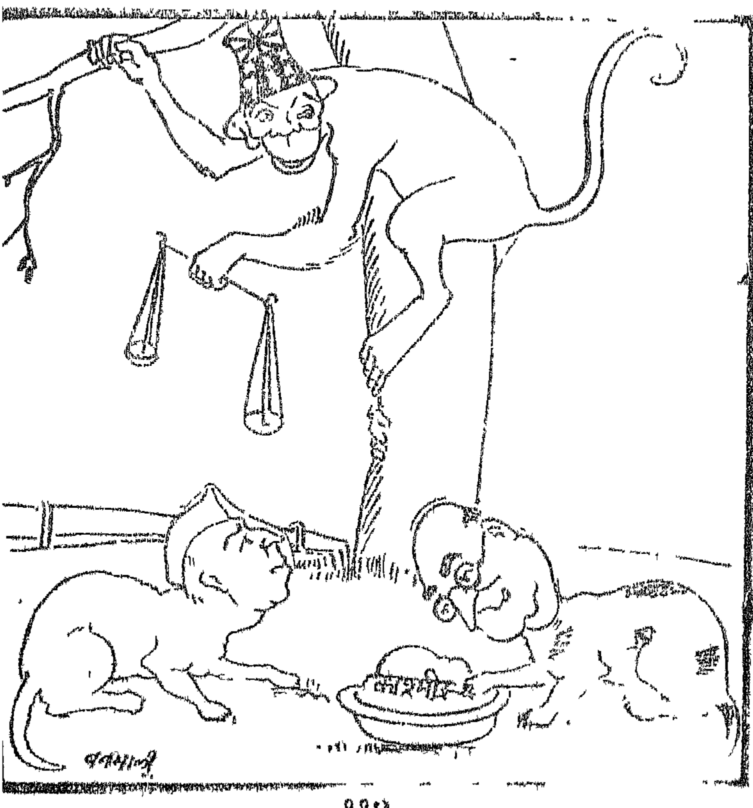
हुआ कि राष्ट्रसंघ के कुछ निरीक्षकगण पृथ्वी के स्वर्ग काश्मीर की सैर करने का सुख उठा गये जबकि उनकी अपनी जेब से एक कोड़ी भी खर्च न हुई। अपनी दुर्नीति द्वारा ऐसे अवसरों में वे स्वार्थी लोग विषवमन करने से नहीं चूके हैं काश्मीर कमीशन के एक सदस्य द्वारा बहुतसा मूल्यवान सामान श्रीनगर के एक बैंक से निकाल कर पाकिस्तान में रावलपिंडी पहुँचाने की घटना इस बात की पुष्टि करती है कि शत्रु देश से साठ गांठ करने में यह लोग भारत में आकर भी तत्परता दिखाते रहे हैं। काश्मीर कमीशन की युद्ध बन्द कराने और युद्ध विराम रेखा निश्चित करदेने इत्यादि कार्यों से भी अन्त तो गत्वा पाकिस्तान को ही लाभ पहुँचाया है क्योंकि पाकिस्तान के सीमित साधनों से लगातार भारत जैसे विशाल साधनसम्पन्न देश के साथ लड़ते रहना सम्भव नहीं था। इस युद्ध विराम के काल में उसे तय्यारी करके लड़ने का पर्याप्त अवसर मिल जायगा साथ ही बिना किसी प्रकार का अपराधी बनने के अतिरिक्त जिस विशाल प्रदेश पर उसके सैनिकों ने अधिकार करलिया था कम से कम उसके कोई हानी नहीं पहुंचेगी। अबतो दोबारा युद्ध करते समय उसे अपनी संचित शक्ति से केवल आगे बढ़ने का ही कार्य रह गया है। यह सब कार्य वैसा ही समझना चाहिए जैसा कि बिल्ली के द्वारा न्याय कराने पर बन्दरों का हुआ था। क्योंकि पश्चिमी देशों की स्वार्थ परक नीति को जितना संरक्षण पाकिस्तान में मिल सकता है उतना भारत में सम्भव नहीं और अपने विरोधी एशियावासी राष्ट्रों के विरुद्ध मोर्चा बनाने के लिए भी काश्मीर को पाकिस्तान का अंग बनाने से ही पश्चिमी राष्ट्रों की महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति सम्भव है इसी दूरदर्शिता पूर्ण उद्देश्य को ध्यान में रखकर

यह युद्धविराम सम्बन्धि प्रस्ताव रखा गया है जिससे कम से कम उतना प्रदेश तो पाकिस्तान के हाथ से निकलने से बच ही जायगा जितना युद्ध बन्द करते समय उसके हाथ में होगा। काश्मीर में भारतीय सेना के पहुँचने से पहिले काश्मीर के नाम से पुकारे जाने वाले सारे भू भाग का २।३ हिस्सा आक्रमण कारियों के हाथ में चला गया था। उत्तर पश्चिमी सीमान्त गिलगित और पूर्वी सीमान्त लद्दाख की दो तहसीलें स्कर्दू और कर्गिल काश्मीर वैलीका मुजफ्फराबाद व बारामूला जिला पुंछ सारा जम्मू के मीरपुर कोटली, भिम्बर, राजोरी के सम्पूर्ण इलाके पाकिस्तान के हाथ में थे। परन्तु भारत सरकार की सामयिक कार्य वाही ने न केवल शत्रु को आगे बढ़ने से ही रोका अपितु उसे पीछे हटा दिया जिसके फल स्वरूप कर्गिल की तहसील और बारामूला जिला वह पुंछका शहर व उसका पूर्वी भाग सारा अक्रमणकारियों के पञ्जे से भारतीय सैनिको ने निकाल लिया इतना होते हुए भी २।५ हिस्सा आज भी उनके हाथ में विद्यमान है। आज युद्ध विराम की स्थिति भी यह बतलाती है कि उत्तर में गिलगित का सारा महत्व पूर्ण प्रदेश पश्चिम में मुजफ्फराबाद जिलेका एक बड़ा भाग एवं पुंछकी बाघ पुलन्धरी तहसीलें तथा मीरपुर वह भिम्बर के इलाके आक्रमणकारियों के हाथ में यथापूर्व बने हुए हैं। इसके शेष भाग पर भारतीय सैनिकों का अधिकार है।

आज भारत के समक्ष सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकीय प्रश्न यह उठता है कि समय की आवश्यकता के अनुसार सैनिक कार्यवाही भी करदी गई थी और संसार को अपने पक्ष की सचाई दिखाने के लिए राष्ट्रसंघ में भी पहुँच करली गई परन्तु विकट

अवस्था के बन जाने पर अब अगला कदम क्या होना चाहिए क्या कोई अन्य वैकल्पिक मार्ग नहीं अपनाया जा सकता ? यदि अपना मामला राष्ट्रसंघ से वापस लेकर स्वयं अपने बल से उसे सुलझाने का प्रयत्न किया गया तो भारत राष्ट्रसंघ में अविश्वास रखने का जिम्मेदार करार दिया जायगा यही नहीं राष्ट्रसंघ को कमजोर करने का भी आरोप भारत परही लगाया जायगा फिर वह करे तो क्या करे यही एक पेचीदा पहेली भारतीय अधिकारियों के सामने मौजूद है। इसी तथ्य को श्री शेख अब्दुला ने गत नेशनल कान्फ्रेन्स के अधिवेशन में राष्ट्रसंघ से काश्मीर के मामले को वापस लेने के बहुमत प्रस्ताव की समालोचना करते हुए व्यक्त किया था। उन्होंने कहा था कि 'काश्मीर के प्रश्न को राष्ट्र संघ में रखने की जो भूल हुई है वहां से उसे वापस लेने में उससे और अधिक भूल होगी। इसी प्रकार अब भारत रूपी सांप काश्मीर कमीशन रूपी छछून्दर को निगलने और उगलने दोनों ही में असमर्थ दिखाई देता है। यद्यपि राष्ट्रसंघ की नींव न्याय के आदर्शों पर ही रखी गई थी परन्तु जब उसमें सम्मिलित सदस्यों के स्वार्थों पर किसी प्रकार हानि पहुँचे तो क्यों वह न्याय के नाम पर अन्याय करने से चूके यह तो आधुनिक काल की राजनीति की विशेषता है कि मन में कुछ, वचन में कुछ, हाथ में कुछ यदि तीनों स्थानों में एकसा हो तो वह सफल राजनीति नहीं कहला सकती। भारत के नेता अभी इस प्रकार के व्यवहार से अपरिचित जान पड़ते हैं क्योंकि सदियों के बाद भारतीयों को अपने देश का प्रबन्ध स्वयं करने का अवसर प्राप्त हुआ है साथ ही भारत तो ऐसे धार्मिक और त्यागी आदमियों को ही पैदा करता रहा है जो कि अपना सर्वस्व खोकर भी मनसा, वाचा, कर्मणा तीनों में

एक समान बने रहे हों न कि (मनस्यन्यद्, वचस्यन्यद्, कर्मण्यन्यद् दुरात्मनः) वाला सिद्धान्त यह तो पश्चिमी राष्ट्रों के लिए ही सुशोभित हो सकता है। परन्तु यह सब कुछ होते हुए भी आज का जो उत्तरदायित्व भारतीय नेताओं पर है देखें उसका समाधान वह किस प्रकार करते हैं। पाकिस्तान की सफलता तो काश्मीर के मामले को राष्ट्रसंघ की अदालत में लटके रहने से ही है ताकि अगर भारत नये सिरे से भी युद्ध आरम्भ करे तो उसे कम से कम उसके स्थान से तो च्युत न कर सके।



काश्मीर की उलझी पहेली

काश्मीर की समस्या भारत और पाकिस्तान के मध्य विद्यमान जटिल गुत्थियों में से एक है। पाकिस्तान के प्रधान मन्त्री तथा अन्य उच्च प्रवक्ताओं की दृष्टि में काश्मीर की समस्या अन्य गुत्थियों से भी अधिक महत्वपूर्ण है और जब तक यह गुत्थी पाकिस्तान के पक्ष में न सुलझ जाय, तब तक उनकी राय में भारत और पाकिस्तान के सम्बन्ध नहीं सुधर सकते। भारत भी अपने और पाकिस्तान के मधुर सम्बन्धों में इस समस्या को बहुत बड़ी रुकावट समझता है। किन्तु इस गुत्थी को सुलझाने के दोनों के मार्ग भिन्न २ है। पाकिस्तान का मत यह है कि काश्मीर पाकिस्तान को मिलना चाहिये, क्योंकि उसका समस्त व्यापार पाकिस्तान पर निर्भर है और काश्मीर की जनता के मुस्लिम बहुल होने के कारण भी उसका सम्बन्ध पाकिस्तान के साथ ही होना चाहिये जो कि एक इस्लामी राज्य है। उसकी यह युक्तियां सारवान हैं या निःसार, इस बहस में पड़ने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि इसके बिना भी यह बात निःसंशय होकर कही जासकती है कि पाकिस्तान इस गुत्थीको लाठी से हल करना चाहता है और यही उसके पक्ष की युक्ति हीनता का द्योतक है, इसके विपरीत भारत एकलौकिक राज्य है, वह धर्म या मजहब के नाम पर काश्मीर पर अपना दावा नहीं करता, न वह और कोई युक्ति ही इस सम्बन्ध में उपस्थित करता है। उसका एक

मात्र आधार यह है कि क्योंकि वहां की जनता ने भारत से मिलना चाहा था, इसलिये उसे भारत में मिला दिया गया और यदि वहां की जनता स्पष्ट और स्वतन्त्र रूप से यह मत प्रकट करे कि वह भारत में नहीं मिलना चाहती, तो वह उसे छोड़ने को भी उद्यत है, जबकि वह उसे पाकिस्तान के आक्रमण से बचाने के लिये बहुत अधिक व्यय कर चुका है। इससे यह स्पष्ट है कि भारत का पक्ष इस विवाद में अत्यन्त ईमानदारी और सचाई का पक्ष है, जबकि पाकिस्तान का पक्ष निरी थोथी और सारहीन दलीलों पर आश्रित है।

कानूनी दृष्टि से भी भारत की स्थिति काश्मीर के सम्बन्ध में सबल है। कानूनी तौर पर काश्मीर रियासत के भारतीय संघ में प्रविष्ट हो जाने पर पाकिस्तान का उस पर दावा खारिज हो जाता है और इस दशा में पाकिस्तान ने काश्मीर पर जो आक्रमण किया हुआ है, उसके उत्तर में भारत पाकिस्तान पर कहीं भी प्रत्याक्रमण कर सकता था। ऐसा करना अन्तर्राष्ट्रीय न्याय की दृष्टि से अनुचित नहीं होता, किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को पेचीदा होने से बचाने के लिये उसने इस मार्ग का आश्रय नहीं लिया और अन्तर्राष्ट्रीय जनमत को सत्य के पक्ष में करने के लिये संयुक्तराष्ट्र संघ का द्वार खटखटाया और यही असत्य, बेईमानी और स्वार्थपरता से भरे संसार में उनकी सबसे बड़ी भूल सिद्ध हुआ है।

संयुक्त राष्ट्रसंघ की असफलता

काश्मीर का मामला संयुक्त राष्ट्र संघ में गये दो वर्ष होगये हैं किन्तु इस दो साल में उसकी गति कछुए की भांति

से तीव्र नहीं हुई। पुरानी कहावत का कछुआ त्वरित गति से भागने वाले खरगोश को अपने धैर्य से जीत गया था, किन्तु यह कछुआ भी किसी दिन अपनी मंजिल पर पहुँच सकेगा, यह कहना कठिन है। जिस समय भारत सरकार ने यह प्रश्न संयुक्त-राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद् के सम्मुख उपस्थित किया था' उस समय और आज की परिस्थितियों में केवल इतना ही अन्तर है कि आज काश्मीर में गर्मागर्म युद्ध नही हो रहा, अन्यथा मामला आज भी जहां का तहां है। संयुक्तराष्ट्र संघ के कुछ निठल्ले सैनिक प्रेक्षक संयुक्तराष्ट्र संघ के व्यय पर काश्मीर की सुरम्य स्वर्गीय घाटी में कुछ चांदनी रातें और ग्रीष्म ऋतु बिताने आते हैं और चले जाते हैं। इस बीच में यदि उनसे बन पड़ता है तो वे पाकिस्तानका कुछ उपकार भीकरजाते हैं अन्यथा उनकी मधुया मिनियां बीतने में कहीं कोई व्याघात नहीं पड़ता। इस दो वर्ष में सुरक्षा परिषद् द्वारा भेजे गये भारत व पाकिस्तान सम्बन्धी कमीशन ने अधिकतम इतनी ही सफलता प्राप्त की है कि उसने युद्ध बन्द करा दिया है और युद्ध विराम की एक सीमा रेखा निर्धारित कर दी है। इसका श्रेय भी उसके कर्तृत्व को इतना नहीं है जितना कि स्वयं पाकिस्तान की सैनिक दुर्बलता को है, क्योंकि पाकिस्तान ने कई मास तक निरन्तर युद्ध करने के बाद यह अनुभव कर लिया था कि वह सैनिक युद्ध में भारत को जीत नहीं सकता। इसलिये यदि युद्ध बन्द कर दिया जाय तो कम से कम उतना प्रदेश तो उसके हाथ से निकलने से बच जायगा जितना कि युद्ध करते समय उसके अधिकार में होगा। भारतीय सेना के काश्मीर में पहुँचने से पूर्व पाकिस्तान की सेना ने तथा-कथित आजाद काश्मीर फौज और आक्रान्ता कबाइलियों की

सहायता से जम्मू प्रान्त के बहुत बड़े प्रदेश पर अधिकार कर लिया था और कोहाला की ओर से काश्मीर घाटी में घुसकर वह श्रीनगर की बाह्य बस्तियों तक पहुँच गई थी। किन्तु भारतीय सेना ने उसे उतने ही वेग से पीछे हटा दिया जितने वेग से वह आगे बढ़ी थी। आज यह स्थिति है कि उत्तर में गिलगित का सारा प्रदेश पाकिस्तान के हाथ में है, किन्तु उसके मुकाबले में समूचा लद्दाख और बाल्तिस्तान का अधिकांश भाग भारत के हाथ में है। दूसरी ओर दक्षिण में जम्मू का भी अधिकांश भाग भारत के अधिकार में है और काश्मीर घाटी तो सारी ही भारत के हाथ में है। युद्ध विराम रेखा के निर्धारण से थोड़े बहुत परिवर्त्तन अवश्य हुए हैं किन्तु वे अत्यन्त नगण्य हैं और उनसे भारत को सैनिक या शासन की दृष्टि से कोई नुक्सान नहीं हुआ है।

अगला कदम क्या हो।

आज काश्मीर और भारत के सम्मुख सबसे बड़ा सवाल यह है कि उन्हें काश्मीर की समस्या को सुलझाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय न्याय पाने में, जाकर क्या मिला? क्या उन्हें किसी अन्य वैकल्पिक मार्ग का आश्रय नहीं लेना चाहिये और क्या उन्हें अपना विवाद संयुक्तराष्ट्र संघ से लौटा कर स्वयं अपनी शक्ति से नहीं हल करना चाहिये? यह सब प्रश्न अभी गत वर्ष काश्मीर नेशनल कान्फ्रेंस के वार्षिक अधिवेशन में उठाये गये थे और इस आशय का एक प्रस्ताव भी उपस्थित किया गया था कि भारत सरकार काश्मीर के प्रश्न को सुरक्षा परिषद से वापिस ले ले और स्वयं इसका निबटारा करे। किन्तु इस प्रस्ताव को नेशनल कान्फ्रेंस के अध्यक्ष शेख मुहम्मद अब्दुल्ला के कहने

पर वापिस ले लिया गया। जो कुछ उन्होंने कहा उसकी यह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष ध्वनि तो थी ही कि गुरक्षा परिषद् के निबटाये यह प्रश्न नहीं निबटेगा किन्तु उन्होंने यह स्पष्ट शब्दों में कहा कि इस प्रश्न को संयुक्तराष्ट्र संघ में ले जाकर जो भूल की गयी है, अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से उसका परिमार्जन उससे भी बड़ी भूल होगी। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि भारत पर यह आरोप लगाया जायगा कि उसे संयुक्तराष्ट्र संघ में विश्वास नहीं है अथवा उसकी यह कार्यवाही राष्ट्रसंघ को दुर्बल बनाने वाली है। इस तरह भारत की स्थिति सांप छछूंदर की-सी हो रही है, काश्मीर कमीशन न उससे उगलते बनता है और न निगलते।

इस बात में जरा भी सन्देह नहीं कि संयुक्तराष्ट्र संघ की स्थापना का आधार भले भी बहुत ऊंचे ऊंचे दिव्य आदर्श हों किन्तु उसके कार्यकलापों का आधार विशुद्ध स्वार्थ है। इन स्वार्थों पर आंच न आय तो सभी राष्ट्र, विशेष कर बड़े राष्ट्र क्योंकि वास्तविक स्वार्थ उन्हीं के होते हैं, उसे सबल और शक्तिशाली संस्था बनाने की बड़ी बड़ी बातें करते हैं किन्तु यदि उनके स्वार्थ खटाई में पड़ते हों तो वे उसे दुर्बल बनाने में नहीं हिचकिचाते। इसका एक मनोरंजक उदाहरण गत वर्ष इटली के उपनिवेशों के सम्बन्ध में संयुक्तराष्ट्र संघ में हुई बहस में देखने में आया था। उस समय लीबिया के सम्बन्ध में सोवियत रूस ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया था कि उसे तब तक संयुक्तराष्ट्र संघ के संरक्षण में रखा जाय जब तक कि वह स्वाधीनता प्राप्त करने के योग्य न हो जाय किन्तु ब्रिटेन ने जिसका कि उस पर शासन था संयुक्तराष्ट्रसंघ की की ट्रस्टीशिप को स्वीकार करना और

इस प्रकार इसे अपने पंजे से मुक्त करना स्वीकार नहीं कीया और परिणाम यह हुआ कि इसकी पैंतरे बाजी से यह प्रस्ताव उस समय स्वीकृत नहीं हो सका। यदि सोवियत रूस का वह प्रस्ताव स्वीकार कर संसार के किसी भी प्रदेश पर संयुक्त-राष्ट्रसंघ का अधिकार हो जाता तो एक स्वतन्त्र सत्ता के रूप में इसकी जड़ कुछ मजबूत हो जाती। किन्तु आज संयुक्तराष्ट्र संघ की स्थापना हुए तीन वर्ष हो जाने पर भी संसार के सभी विवादग्रस्त और पराजित देश एक न एक महान शक्ति के गुलाम हैं, इनमें से एक पर भी इस अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का अधिकार स्थापित नहीं हो सका।

इस सब के बावजूद आज स्थिति यह है कि भारत न तो संयुक्तराष्ट्र संघ से अपना अभियोग वापिस ले सकता है, और न इसका निबटारा ही हो रहा है। पाकिस्तान का हित इसी में है कि यह मामला संयुक्तराष्ट्र संघ में फंसा रहे। ताकि भारत नये सिरे से युद्ध छेड़कर उसे उसके स्थान से च्युत न कर सके अब देखना है कि भारत सरकार इस मामले को इस प्रकार कब तक लटकाये रखती है, और यदि इसका कुछ समाधान करती है तो किस प्रकार।

काश्मीर का महत्व

आजकल काश्मीर शब्द से जिस प्रदेश का बोध होता है वह महाराजा हरिसिंह को अपने पूर्वजों से विरासतमें मिली हुई रियासत है। यथार्थ में काश्मीर उस प्रदेश का नाम होना

चाहिए जहां काश्मीरी भाषा प्रचलित हो। किंतु काश्मीरी बोली का यह प्रदेश वर्तमान रियासत का अंगमात्र है। महाराजा हरिसिंह इस रियासत के चौथे शासक हैं। इसके प्रथम शासक या नरेश महाराज गुलाबसिंह वर्तमान रियासत के दक्षिणी छोर पर अवस्थित जम्मू प्रदेश के मालिक थे और पंजाब के सिख सम्राट महाराजा रणजीतसिंह के एक जागीरदार थे। सन् १८४०-४१ में अंग्रेजों व सिखों के युद्ध में वह सिखों के साथी थे। इस युद्ध में विजय पाने पर अंग्रेजों को काश्मीर प्राप्त हुआ था किन्तु वे इस भूमि से अनजान थे। और इसकी नैसर्गिक छटा को भी न जानते थे। इधर महाराजा गुलाबसिंह के पास रुपये का वह खजाना था कि जिससे अंग्रेजों की युद्ध में हुई हानि-पूर्ति हो सकती थी। दोनों पक्षों में सन्धि हुई और ७५ लाख रुपया देकर महाराजा गुलाबसिंह जम्मू के साथ-साथ काश्मीर के भी अधिपति बन गये। तब से अभी तक इस रियासत का भले ही कोई प्रसिद्ध नाम हो, सरकारी नाम जम्मू और काश्मीर ही चला आता है। महाराज गुलाबसिंह मेहनती थे, इन्होंने परिश्रम तथा अन्य साधनों से रियासत में तिब्बती भाषा-भाषी लद्दाख और गिलगित एवं इसके अन्य पड़ोसी प्रदेश भी हस्तगत किये थे। हम भारतीय इतिहास को सरकार तौर पर पढ़ते हैं किन्तु हमें पता नहीं कि कभी जम्मू नरेश की विजयी सेनाओं ने ठेठ पश्चिमी तिब्बत पर भी हमला किया और इसके पर्याप्त प्रदेश पर कब्जा भी कर लिया था। यह तो उस सेना के दुर्भाग्य थे कि बर्फानी तूफान के कारण वह सेना अधिक सफल न हो सकी आज भी अल्मोड़ा से कैलास व मान सरोवर की यात्रा करने वाले हिन्दुस्तानी हिमाचल के उस पारगामी

सेनानी जोरावरसिंह की समाधि को देख कर गौरव अनुभव करते हैं। इसी प्रकार आज कि काश्मीर अकेला काश्मीरी भाषा भाषी प्रदेश नहीं है वह तो समय-समय पर एकत्र हुए अनेक भाषा-भाषी प्रदेशों का समूह है।

दो दृष्टिकोण

पिछले दो वर्षों से यह काश्मीर हमारे व पाकिस्तान के मध्य में एक कठिन समस्या का रूप धारण किये हुए है। यदि धर्म के आधार पर हमारे देश का विभाजन उचित व आवश्यक था तो यह काश्मीर हमारा न होना चाहिए। रियासतों का नरेश अपने राज्य को जहां शामिल करना चाहे वहां वह रहे, यह दृष्टि न्यायसंगत हो तो काश्मीर हमारा है, क्योंकि महाराजा हरिसिंह ऐसा कहते हैं। जूनागढ़ के नवाब की भी घोषणा अपने राज्य को पाकिस्तान में मिलाने की थी किन्तु जूनागढ़ आज पाकिस्तान का नहीं हमारे देश का अंग है। क्यों? क्योंकि न हम चाहते थे कि जूनागढ़ पाकिस्तान में जाये और न ही जूनागढ़वासी चाहते थे कि वे पाकिस्तानी बनें। तो फिर राजाओं की इच्छा यथार्थ में कसौटी नहीं है, कसौटी है जनता की इच्छा। काश्मीर की जनता क्या चाहती है? यह स्पष्ट नहीं है अतः वहां मत-संग्रह हो ऐसे पाकिस्तान कहता है, हमारे देश के विधाता भी यही कहते हैं और न्यूयार्क के विलासी भवनों में बैठा साथी राष्ट्रों का समुदाय भी यही कहता है। इन साथी राष्ट्रों के कुछ प्रतिनिधि पिछले दिनों दिल्ली और कराची आये एवं काश्मीर भी गये। ये प्रतिनिधि इस उधेड़बुन में हैं कि काश्मीर में मतदान का ढंग क्या बरता जाये। पाकिस्तान का कहना है कि जनता की राय

जल्दी ही ली जाय और बहुमत जिधर की बात कहे समूची रियासत उस प्रदेश में शामिल कर दी जाये। इधर हमारे देश का रुख भी स्पष्ट है। हमारे विधाताओं का कहना यह है कि मतदान द्वारा काश्मीर के भविष्य का निर्णय किया जाये यह तो उचित ही है किन्तु इस मतसंग्रह से पहले काश्मीर में बाहर से जो उपद्रवी आये हैं और उसके पर्याप्त इलाके को घेरे हुए हैं उन्हें निकल जाना चाहिए। इसके साथ ही हमारे विधाताओं का यह भी कहना है कि शासन की दृष्टि से काश्मीर को एक इकाई माना जाना चाहिए। वह इकाई महाराजा हरिसिंह की इच्छा से अब तक भारत का अंग है, अतः उसमें दूसरे किसी शासन को स्वीकार न किया जाना चाहिए। इसके विपरीत पाकिस्तान का कहना है कि काश्मीर किसका है इसका निर्णय वोट द्वारा होगा। अब तक यहां जो हकूमत है वह जनता की हकूमत नहीं है। यथार्थ में जनता आजाद काश्मीर की हकूमत की पक्षपाती है, महाराजा हरिसिंह या शेख अब्दुल्ला की हकूमत की नहीं। इस आधार पर पाकिस्तान वर्तमान में काश्मीर में दो शासनों को स्वीकर करता है और हम केवल एक शासन को स्वीकार करते हैं।

जम्मू की पृथकता

इस पेचीदा परिस्थिति में साथी राष्ट्र क्या करेंगे यह स्पष्ट नहीं है। हां ! युद्ध से विराम लेने के बावजूद भारत व पाकिस्तान में इस काश्मीर के लिए ले-दे जरूर जारी है। पाकिस्तान आजाद काश्मीर का पक्षपाती है और उसे अपना मानता है। यही कारण है कि उसने अपने यहां अभी हाल में काश्मीर विभाग खोल दिया

है और इसके लिए एक सचिव भी नियत कर दिया है। जब बिना अधिकार के पाकिस्तान ऐसा कर सकता है तो निश्चय ही कानूनी तौर पर अधिकार प्राप्त भारत को तो काश्मीर को हर तरह से अपनाना ही चाहिए। सम्भवत: यह सब कुछ सोचकर ही हमारी विधान परिषद् ने पिछले दिनों काश्मीर के चार प्रतिनिधि अपने में शामिल करने का निश्चय किया। ये चारों प्रतिनिधि विधान परिषद् में भाग लेने भी लगे हैं। इस निश्चय के समय में जो बहस हुई थी उस समय प्रो० शाह ने एक संशोधन द्वारा यह चाहा था कि इस रियासत को केवल काश्मीर न लिखा जा कर जम्मू और काश्मीर दोनों लिखा जाना चाहिए। यथार्थवादी प्रोफेसर शाह का यह संशोधन ठीक था और रियासत की वास्तविकता का द्योतक था किन्तु वह स्वीकार न हो सका। सम्भवत: विधान परिषद् के सदस्य जम्मू शब्द द्वारा महाराज हरिसिंह की अहमियत को नहीं बढ़ाना चाहते थे। यदि ऐसा है तो हम भी वैयक्तिक शासन की खराबियों के कारण महाराजा की अहमियत के कायल नहीं है किन्तु हम यह भी नहीं चाहते कि शेख अब्दुल्ला या पंडित जवाहरलाल नेहरू के कारण काश्मीर का का महत्व बढ़ जाये और और जम्मू का लोप होजाय। केवल शेख अब्दुल्ला या काश्मीर नाम इस बात के द्योतक है कि वह रियासत मुस्लिम प्रधान है। जम्मू शब्द जुड़ा रहने से यह गलत फहमी भी नहीं हो सकती। हमें खतरा है कि इस नाम-परिवर्तन के द्वारा हम केवल शेख अब्दुला या उनके साथियों को प्रसन्न करना चाहते हैं, जम्मूवालों को या लद्दाख के लोगों को विशेष महत्व नहीं देना चाहते। यथार्थ में हमें ऐसा न करना चाहिए, नहीं तो जिस प्रकार हमने सिन्ध शब्द के मायाजाल में पड़कर

समूचा सिन्ध प्रांत पाकिस्तान में जाने दिया और इस तरह वहां के थारपारकर जिले को जिसकी अधिकतर आबादी हिन्दू थी और जो सिन्धी भाषा-भाषी नहीं राजस्थानी की उपासक थी, खो दिया है ठीक उसी प्रकार सम्भवतः मत संग्रह द्वारा हम समूचे काश्मीर को खो कर साथ ही हिन्दू-बहुल एवं गैर काश्मीरी प्रदेश को भी अपने हाथ से न खो बैठें।

विभाजन ?

परन्तु हम काश्मीर के सम्बन्धमें अपने देश के विधाताओं की नीति में सन्तोष नहीं पाते। यदि काश्मीर भारत का अंग है, जैसा कि वह है, तो फिर हमें वहां मत-संग्रहकी मांगपर विचार न करना चाहिए। यदि हम अपनी घोषणाओं में पवित्र हैं और काश्मीर में मत संग्रह के कायल हैं तो हमें यह भी स्पष्ट कर देना चाहिए कि विपरीत मत होने पर हम क्या करेंगे? आज की काश्मीर रियासत का क्षेत्रफल की दृष्टि से अधिक बड़ा भाग हमारे हाथ में नहीं है, वह पाकिस्तान के हाथों में है या आजाद काश्मीर का अंग है। मत-संग्रह हो या न हो, साथी राष्ट्र कुछ फैसला करें या न करें वह इस समय हमारा नहीं है। यह सत्य है कि क्षेत्रफल में बड़ा होकर भी इसकी आबादी दस लाख से अधिक नहीं है किन्तु वह हमारा नहीं है यह तो मानी हुई बात है। इस समूचे देश में, जिसका दक्षिणी भाग पंजाबी मिश्रित पहाड़ी और उत्तरी भाग सरहद की अपनी बोली बोलता है, अब हिन्दू आबादी नहीं के बराबर है। विदेशी अधिकार में रहकर भी ये मुस्लिम लोग हमें वोट देंगे यह भी धोखा हमें न होना चाहिए। ऐसी स्थिति में एक हल यह भी हो सकता है कि जो प्रदेश

जिसके अधिकार में है वह उसका मान लिया जाये और यह झगड़ा समाप्त किया जाये ।

विभाजन ठीक है ?

काश्मीर रियासत का जो भाग हमारे हाथों में है वह क्षेत्रफल में अपेक्षाकृत छोटा है किन्तु उसकी आबादी तीस लाख के आस पास है । आज इस प्रदेश में जनतंत्र के नाम पर शेख अब्दुल्ला की सरकार कायम है; हम जनतंत्रवादी होते हुए भी इसे ना पसन्द करते हैं । इसलिये नहीं कि हम शेख-अब्दुल्ला के नेतृत्व को नापसन्द करते हैं किन्तु इसलिए कि भाषा व संस्कृति के आधार पर हम जैसे मद्रास, बम्बई व मध्यप्रान्त का विभाजन चाहते हैं वैसे ही वर्तमान काश्मीर, अपने काश्मीर को हम विभक्त किन्तु विकसित देखना चाहते हैं । वर्तमान काश्मीर का (जो कि हमारा है) तीन स्पष्ट विभाग हैं । पहला है जम्मू जहां पंजाबी या उससे मिली जुली भाषा बोली जाती है । यह समूचा प्रदेश हिन्दू बहुल है । धर्म के साथ २ भाषा द्वारा भी इसका काश्मीर से कोई सम्बन्ध नहीं है । हमारी राय में यह जम्मू प्रदेश पूर्वी पंजाब का अंग हो जाना चाहिए या नवीन हिमाचल प्रदेश में शामिल हो जाना चाहिए । काश्मीरी भाषा-भाषी यथार्थ काश्मीर शेख अब्दुल्ला का घर है । इसे पृथक प्रान्त का रुतबा मिलना चाहिए । रह जाता है लद्दाख—यहां न काश्मीरी बोली जाती है और न ही पंजाबी मिश्रित पहाड़ी ही । यह तो यथार्थ में तिब्बत का अंग है । तिब्बती भाषा व बौद्ध धर्म का यह स्थान है । हमारी राय में यह प्रदेश पुनः तिब्बत को सौंप देना चाहिए किन्तु जो अंग्रेजों का था अब वह हमारा

है। सिद्धान्तके माननेवाले कठमुल्ला शायद हमारी बातको पसन्द न करेंगे। तो फिर लद्दाख को भी काश्मीर की भांति पृथक सत्ता मिलनी चाहिए, या यदि वह चाहे तो काश्मीर और जम्मू में से जिसे पसन्द करे उसके साथ जा सकता है। हम जानते हैं कि कि लद्दाखी लोग काश्मीर के बजाय जम्मू में या हिमाचल में जाना पसन्द करेंगे और यही होना चाहिये। ऐसा होने पर पंजाब के उत्तर में काश्मीर को छोड़ कर समूचे हिमाचल में हिमाचल प्रदेश कायम हो सकता है। हमारी राय में भाषा व संस्कृति के विकास कीदृष्टि से यह व्यवस्था सर्वोत्तम रहेगी।

भविष्य

यह सब विवेचन हो जाने पर भी सवाल यह रह जाता है कि काश्मीर का क्या हल होगा? इसके लिये पाकिस्तान से हमारा झगड़ा था। हम ने भलमनसाहत में यह मामला साथी राष्ट्रों को सौंप दिया। साथी राष्ट्रों ने फिलिस्तीन की समस्या विभाजन द्वारा हल की है। हमारा खयाल है कि साथी राष्ट्र काश्मीर के मामलेमें भी शायद यही करना चाहें। अभी तक तो वे यह भी नहीं तय कर पाये कि काश्मीर का जो युद्ध चल रहा था उसकी स्थायी सन्धि किस आधार पर की जाये। साथी राष्ट्रों के कमीशन ने इसके लिए जो शर्तें निर्धारित की थीं अभी तक तो भारत व पाकिस्तान इन्हें ही नहीं मान रहे हैं। आगे क्या होगा? यह इस से स्पष्ट हो जाता है। हम समझते हैं कि भारत को काश्मीर-के मामले में थोड़ा दृढ़ता से काम लेना चाहिए। पंडित जवाहरलाल का केवल यह कहना कि हम काश्मीर में दो राष्ट्रों के सिद्धान्त पर कुठाराघात करने के लिए लड़ रहे हैं पाकिस्तान को परेशान नहीं कर सकता।

उसको परेशानी तो तभी होगी जब यह स्पष्ट हो जाये कि अब काश्मीर में उन्हें कुछ मिलने वाला नहीं है। या पाकिस्तान स्वयं किसी कठिनाई में पड़ जाये तब भी वह काश्मीर को छोड़ सकता है। इन दोनों अवस्थाओं के अतिरिक्त पाकिस्तान काश्मीर के मामले में हम से समझौता नहीं कर सकता। तो फिर या तो हम काश्मीर का फैसला खुद करें और या साथी राष्ट्रों से करायें। हमें दोनों हालतों में काश्मीर का विभाजन अनिवार्य मालूम देता है। प्रारम्भ में मुसलिम लीग इस विभाजन को स्वीकार करती थी किन्तु हम इसके लिये तैयार न थे। अब लीग के विधाता अर्थात पाकिस्तानी अधिकारी भी इस विभाजन को नापसन्द करते हैं और समूचे काश्मीर को हड़पना चाहते हैं। इससे सन्देह होता है कि पाकिस्तान काश्मीर में मत संग्रह में अपनी विजय के स्वप्न देखता है। यदि ऐसा है तो हमें अभी से इसके लिये सचेष्ट हो जाना चाहिये और ऐसी व्यूह रचना करनी चाहिये कि जिस काश्मीर के लिये हमने अपरिमित धन जन स्वाहा किया है वह हमारा बना रहे। क्या ऐसा होगा? यह बतलाना भविष्य के गर्भ में है।

हरिसिंह और अब्दुल्ला

—:※:—

[जरा एक प्रतिक्रियावादी हिन्दू के विचार भी देखिए यह विचार भी भारत में रहने वाले बहुत से लोगों के मन में चक्कर काटते रहते हैं। हमारा इन विचारों से सहमत होना आवश्यक नहीं। जनता को भी ऐसे विचारों से सावधान रहना चाहिए। —सम्पादक]

यह घटनाक्रम का उपहास है कि ज्यों ज्यों काश्मीर के भाग्य के निपटारे का समय निकट आता है हमारे शेख अब्दुल्ला साहब अपने मतलब की बात भारत सरकार से गांठ लेने में जरा भी संकोच नहीं करते, मानों उन्हें काश्मीर की भलाई के बदले अपनी गद्दी सुरक्षित रखने की बड़ी चिन्ता है। गत वर्ष शेख साहब ने बम्बई के एक आंग्ल-समाजवादी साप्ताहिक पत्र को एक मुलाकात में यह कहा था कि 'यदि काश्मीर के प्रश्न को लेकर भारत पाकिस्तान परस्पर झगड़ा करते हैं तो हमें पसन्द है कि हम दोनों को खुश रखने के लिए अपनी स्वतन्त्र स्थिति रखें' फिर जब श्री गोपालस्वामी आयंगरने उन्हें इस अवैधानिक एवं अनुपयुक्त बात के लिए टोका तब फिर वह यह फरमाते नजर आये कि 'उक्त बात दरअसल सुन्दर है परन्तु अव्यावहारिक है सच तो यह है कि शेख साहब एक ओर यह समझे बैठे हैं कि व्यर्थ ही काश्मीर, भारत-पाकिस्तान का अखाड़ा बन बैठा

है, और यदि दोनों लड़ना बन्द कर दें तो वे एक ऐसा जादू कर देंगे जिससे नये काश्मीर का स्वप्न सत्य हो जायगा। दूसरी ओर उन्हें यह आशंका है कि यदि काश्मीर के महाराज हरिसिंह पुनः राज्य में आते हैं तो उनकी स्वच्छन्दता में बाधा उत्पन्न होगी। हम जानना चाहते हैं कि नये काश्मीर से शेखसाहब का क्या मतलब है? यह स्पष्ट है कि शेखसाहब और हरिसिंह में पटरी नहीं खाती। काश्मीर पर जब कबाइलियों ने हमला किया, महाराज हरिसिंह ने सभी सम्भव उपायों से मुकाबला किया! अल्पसंख्यक हिन्दू डोगरों को जन्मभूमि की रक्षा के लिए भेजा। कितने ही हिन्दू व सिख मारे गये। भयंकर अत्याचार हुआ। अन्त में महाराजा ने भारत सरकार को यह कहकर शरण ली कि कुछ भी हो काश्मीर जम्मू राज्य की रक्षा विदेशी कबाइलियों से की जाय। भारत सरकार ने भी एक लंगड़ी शर्त महाराजा के सम्मुख रखी, हरिसिंह मान गये और हस्ताक्षर कर दिया। उनका उद्देश्य केवल एक ही था कि जम्मू और काश्मीर पाकिस्तानियों के हाथ न जाय। पश्चात घटनाओं ने जो क्रम पकड़ा वह सर्वविदित है। शेख साहब प्रकाश में आये, बात बात पर टांग अड़ानी शुरू की और नौबत यहां तक आ पहुँची कि केवल वैधानिक शासक के रूप में भी श्री हरिसिंह को वे नहीं देखना चाहते। यदि यह बात नहीं होती तो बीस वर्षीय अनुभव हीन युव राज करणसिंह जम्मू काश्मीर राज्य' के शासक क्यों कर बनाये जाते? उनकी ओर से यह दलील दी जाती है कि महाराजा हरिसिंह के काले कारनामों से काश्मीरकी जनता क्षुब्ध है और उन्हें अपना शासक नहीं मानना चाहती परन्तु यदि

पाठक आरोपपर ध्यानपूर्वक गौर करें तो शेख साहब की थोथी दलील की कलई खुले बिना नहीं रहेगी।

महाराजा हरिसिंह

यह बात किसी से छिपी नहीं है कि ब्रिटिश शासन देशी राज्यों में अपना एक 'राजनीतिक दलाल' नियुक्त करता था जो महाराजा को जनता के आगे कर स्वयं राजकार्य चलाता था सन् १९४७ ई० के १४ अगस्त तक महाराजा काश्मीर ने नाममात्र के शासक थे और सारा शासन तथा कथित दीवान, जो शासक ही रहता था, चलाता था। इस पर भी यत्रतत्र सर्वत्र महाराजने अपने सीमित अधिकारों के अन्तर्गत जनसेवा का कार्य नहीं छोड़ा। 'जम्मू काश्मीर' पहला देशीराज्य है जहां प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य और मुफ्त दी जाती रही। राज्य व्यवस्थापिका सभाका अधिकार महाराजा हरिसिंह ने प्रथम ही स्वीकृत किया था। स्वयं शेख साहब राज्यकी ओर से भारतीय मुस्लिम युनिवार्सिटी में पढ़े। राज्यव्यवस्थापिका-सभा में विरोधी दल को सरकारी आलोचना की छूट उतनी थी जितनी आज भी हम कांग्रेसी राज्य में में नहीं पाते। शेख साहब ने जोर पकड़ा केवल महाराजा की उदारता एवं सहिष्णुता के कारण। राज्य का दीवान ही शासक था और महाराजा हरिसिंह को दीवान की सलाह माननी ही पड़ती थी। यही कारण था कि पण्डित रामचन्द्र काकने महाराजा हरिसिंह की इच्छा के विरुद्ध पण्डित नेहरू और श्री आसफ अली को काश्मीर आने से रोका तथा जम्मू-काश्मीर को भारत में पहले ही मिलने से रोक दिया। व्यवस्थापिका सभा में दीवान की ही चलती थी और दीवान की बात न मानना भी हरिसिंह के लिए खतरे से खाली नहीं था। जो कुछ भी हुआ, इसके लिए

पण्डित राम चन्द्र काक इसी तरह जिम्मेदार हैं जिस तरह आज शेख साहब !

श्रीहरिसिंह ने काश्मीर निवासियों को लिए हर तरह की उन्नति करने का अवसर दिया । काश्मीरी भाषा, संस्कृति एवं साहित्य न रहने के बावजूद भी उसे उचित प्रोत्साहन दिया और सदा काश्मीरी संस्कृति को भारतीय संस्कृतिसे अभिन्न रखा । हरिसिंह ने जो कुछ भी किया, एक सच्चे भारतीय और छोटे दृष्टिकोण में एक काश्मीरी के नाते किया । जब कबाइली श्रीनगर तक आ गये थे, महाराजा काश्मीर अपने परिवार के साथ श्रीनगर में ही थे । वे तब तक नहीं हटे जब तक भारतीय सेनाने उन्हें यह आश्वासन न दिया कि वे लोग 'काश्मीर-जम्मू' की श्री की रक्षा करेंगे । महाराजा काश्मीर जानते थे कि खूंखार कबाइली उन्हें और उनके परिवार की बोटी-बोटी नोच कर खा जायेंगे पर देश प्रेमी, सच्चे भारतीय और वीर हिन्दू ने राज्य से हटना तब भी अनुचित ही समझा ! तात्कालिक प्रधानमन्त्री पंडित महाजन विमान द्वारा भारत सरकार से सहायता की याचना करने दिल्ली आगये थे और महाराज का वह भी पत्र साथ में था जिसमें केवल 'जम्मू काश्मीर की श्री' की रक्षा के लिए सैनिक सहायता की याचना यह समझ कर की गयी थी कि भारत और काश्मीर की संस्कृति अभिन्न है तथा 'भारत मां का मुकुट काश्मीर शत्रुओंके आधीन होरहा था । यह मार्मिक याचना माताके सिन्दूर पोछने वालों के विरोध में वीर पुत्रों से की गयी याचना थी ।

भारत-सरकार

बेचारे महाजन हनुमान् के समान सञ्जीवनी बूटीके लिए दिल्ली आये । यहांका वातावरण कुछ और ही था । मन्त्रि

मण्डल के एक दो सदस्यों को छोड़कर किसीको श्रीहरिसिंह के पत्र पर विश्वास नहीं हुआ। लार्ड माउण्टबैटन ने सारा मामला 'नेहरू मन्त्रिमंडल' के समक्ष रखा। मन्त्रिमण्डल को मामले की गम्भीरता पर विश्वास होगया, रातों रात कार्य किया गया। वीर कर्नल राय एक छोटी सी फौजी टुकड़ी लेकर श्रीनगर गये। इधर ५० हजार सशस्त्र कबाइली पाकिस्तानी फौजों की मदद से आगे बढ़ रहे थे, 'काश्मीरी श्री' की वेदी पर बलि हो गया कर्नल राय, और बचगया श्रीनगर। माता का सिंदूर नहीं पोछा जासका। इधर महाराजा हरिसिंह भी राज्य में रक्षा की योजना कर रहे थे। जम्मू-काश्मीर के वीर हिन्दुओं एवं सिखों की बोटी बोटी नोच ली गयी परन्तु वे स्वदेश रक्षा के काम आये। पण्डित महाजनने भारत सरकार की जनमतगणना वाली बात भी उसी क्षण मान ली जिसके कारण ही आज संकट छाया हुआ है। महाराजा काश्मीर ने सहायता याचना के पूर्व बिना शर्त यह लिखा था कि हम 'काश्मीर-जम्मू' को भारत उपनिवेशमें शासककी हैसियत से मिला रहे हैं !' परन्तु न जाने भारत सरकार को श्रीहरिसिंह के इस निर्णय पर सन्देह क्यों हुआ जिससे उसने जनमत द्वारा पुनः भारत में मिलाये जाने की बात को एक दस्तावेज में अङ्कित किया।

इधर तो भारत सरकार निजाम पर यह दबाव डाल रही थी कि हैदराबाद की जनता हैदराबाद को भारत में मिलाने के पक्ष में है, फिर तुम उसे क्यों नहीं मानते और 'जम्मू काश्मीर के सम्बन्ध में उलटा ही सोच रही थी! शेख साहब बन्दी थे दीवान की सलाह से, उन्हें छोड़ा भी गया दीवान की सलाहसे।

वे 'प्रधान मन्त्री बनाये गये, वे प्रमुख बने और भारत सरकार ने उन्हें प्रमुख बनने बनाने में मदद की। शेख साहब भारतीय प्रधानमन्त्री के पुराने दोस्तों में एक हैं। दो मित्र प्रधान मन्त्री की हैसियत से मिले। महाराजा ने 'जम्मू काश्मीर' में नये सुधारकी घोषणा की। राज्य की तिजोरियां खोल दी गयीं—हिन्दू मुसलिम, सिख और सभी काश्मीरियों के लिए! महारानी ने महिला संगठन प्रारम्भ किया। महाराजा की छत्र-छाया में ही शेख साहब महाराज के विरुद्ध जन सभा में बराबर बोलते रहे। भारत सरकार ने शेख साहब को आगे इसलिए किया कि 'जम्मू-काश्मीर' का भारी जनमत सरकार के पक्ष में आ जायगा। यह स्वाभाविक था, चूंकि कबाइली हिन्दू मुसलिमों को समान रूप से लूट, जान से मार रहे थे, अतएव जनमत सरकार के विरुद्ध शेख साहब के न रहने के बावजूद भी नहीं जीता। परन्तु भारत सरकार ने समझा कि शेख साहब के प्रमुख रहने से मुसलिम भारत सरकार का पक्ष लेंगे। यह तो 'काकतालीय न्याय' था कि कबाइलियों के अत्याचार के विरुद्ध काश्मीरी जनमत था और है, और शेख साहब का कबाइलियों के विरुद्ध रहना जनमत का अनुसरण था इस प्रकार जनमत शेख साहब का अनुसरण नहीं कर रहा था।

शेख साहब

शेख साहब दिल्ली आये और कहने लगे कि उन्हें राज्य का सारा अधिकार मिलना चाहिए, अन्यथा वे कुछ भी नहीं करेंगे। यानी यदि उन्हें अधिकार नहीं दिये जाते तो वे 'जम्मू काश्मीर' पर पाकिस्तानियों का राज्य होने देना पसन्द करेंगे।

भला बताइये कि एक व्यक्ति जेल से निकल कर राज्य का शासन भार कैसे संभाल सकता है ? उसे राज्य शासन के सम्बन्ध में क्या मालूम है ? उसे क्या मालूम कि राज्यशासन की दिनचर्य्या कहां और किधर से प्रारम्भ होती है ? माना कि हमने शेख साहब की बात उस समय नहीं मानी होती, तिसपर भी आज जो परिस्थिति है उससे कहीं अच्छी परिस्थिति भी नहीं होती अर्थात् उसमें कोई अन्तर नहीं होता। किन्तु हमने शेख साहब को अधिकार देकर बस उन्हें लाइसेन्स दिया कि आप महाराजा के विरुद्ध जन सभा में बकते फिरें और अपनी गद्दी सम्भालने के लिए जनमत को महाराज के विरुद्ध भड़काते रहें, लोगों को यह कहें कि उनके कष्ट के जिम्मेदार कबाइली नहीं, अपितु महाराजा हरिसिंह हैं। शेख साहब को प्रधान मन्त्रित्व का पद क्या मिला, मानो इन्द्रासन मिल गया और आप महाराज के महलों में सपत्नीक निवास करने लगे।

मन्त्री महाजन जी शेख साहब को राज्यसम्बन्धी जब शिक्षा दीक्षा दे चुके तब गुरु गुड़ और चेला शक्कर बन गया। झट प्रस्ताव लाये कि महाजन जी के दीवान पद को क्या आवश्यकता है ? अच्छा, महाजन जी तो चले। उधर शेख अब्दुल्ला सोचने लगे कि अब कौन बाकी है ? अपने मन्त्रिमण्डल में अपने लोगों को रखा। हम अब तक इसे भलमन्साहत से देखते रहे पर यह कहां की बात कि जिस पत्ते पर खाते हैं उसी में छेद किया करें ? श्रीहरिसिंह ने कभी 'जम्मू काश्मीर' को अपने पाकिट का धन नहीं समझा कि मनमोजी अपव्यय करें और राज्य के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं करें ! जिस जिमय भी स्वार्थ त्याग का

मौका आया, श्रीहरिसिंह दिल खोलकर आगे बढ़ते रहे और आज जब दूसरे देशी राज्य अपने पाकिट खर्च के लिए लाखों रुपये लेते हैं, उधर श्रीहरिसिंह पांच अङ्कों में ही सन्तुष्ट हैं। अपने निजी खर्च का अधिक रुपया वे निर्वासितों के लिए ही व्यय करते हैं। इधर शेख साहब मनमाना हाथ मारते रहे, वह भी जनता के नाम पर। अधिकारों की तिजोरी सम्भाली। हम तो यहां तक मानने को तैयार हैं कि जनता के प्रतिनिधि को सर्वाधिकार मिलने चाहियें पर जब तक जनमत शेख साहब को अपना नेता नहीं मानता, तब तक किस प्रकार उन्हें पूरी छूट दी जाय? एक ओर तो शेखसाहब भारत में काश्मीर को मिलाने को चीखते हैं, दूसरी ओर यह भी कहते हैं उन्हें काश्मीर का नया निर्माण करना है। कुछ भी हो, जब काश्मीर अभी तत्काल के लिए भारत का अङ्ग है, शेखसाहब को क्या हक है कि वे भारत की निर्धारित नीति से विपरीत कार्य्य करें? 'काश्मीर मिलिशिया' क्या बला है? क्या भारत का कोई भी अङ्ग भिन्न फौजें रख सकता है? विदेशी नीति में अपनी टांग अड़ा सकता है? नहीं। परन्तु शेख साहब 'जम्मू-काश्मीर' राज्य के नाम पर सब कुछ इसलिये करना चाहते हैं, चूंकि वे काश्मीर के नेता हैं।

मानलिया हमने शेख साहब को काश्मीर का सब कुछ। फिर भी हम यह जानना चाहते हैं कि शेख साहब महाराज हरिसिंह से चिढ़ते क्यों हैं? शेख साहब चाहे जो करें जनहितार्थ परन्तु उसमें श्रीहरिसिंह बाधक नहीं होते। श्रीहरिसिंह के नाम पर शेख साहब वह सब कुछ कर सकते हैं जो पण्डित काक

और मन्त्री महाजन ने किया था। श्रीहरिसिंह तो सदा से वैधानिक एवं लोकतन्त्री राजा रहे हैं। परन्तु श्रीहरिसिंह के नाम पर कार्य करने के बदले शेख साहब जनता और महाराज के बीच सद्‌भावना के फैलने पर प्रतिबन्ध लगाते हैं। शेख साहब जनता को यह क्यों नहीं कहते कि महाराज ने अमुक अमुक सुधार की स्वीकृति दी है और यह क्यों कहते फिरते हैं कि हमें नया काश्मीर बनाना है? हम यह अधिकार पूर्वक पूछ सकते हैं कि शे० साहब के नये काश्मीर से जिसका वे खूब ढोल पीटा करते हैं, मतलब क्या है? शेख साहब यदि नये काश्मीर को बनाना चाहते हैं तो क्या वे अभी नहीं बना रहे हैं? क्या उनके लक्ष्य में कोई बाधक है? यदि वे काश्तकार सम्बन्धी सुधार करना चाहते हैं तो करें, महाराजा ने कब उन्हें ना कहा है? यदि जमींदारी हटाना चाहते हैं तो हटायें, महाराजा तो जनता की भलाई जिसमें है वही चाहते हैं और उसी भलाई के लिये शेख साहब को प्रधान मन्त्री बनाया। यदि उन्हें अपनी भलाई देखनी होती तो कम समझ का व्यक्ति भी शेख साहब के प्रधानमन्त्रित्व के लिये शिफारिश नहीं करता।

शेख साहब को अभिमान है जम्मू काश्मीर के प्रधान मन्त्री बन जाने का, श्रीहरिसिंह को अभिमान है भारत माता के सिपाही बनने का। महाराज हरिसिंह के पास झूठा गर्व ही किधर है जो उनका अपमान हो? महाराजा हरिसिंह ने राजा होते हुए भी लोकतन्त्र को बढ़ने दिया, इधर शेख साहब लोकतन्त्र के नेता होकर भी अधिनायकवाद को जन्म दे रहे हैं। महाराजा ने सदा विपक्षी-दल की सुनी, शेख साहब हिन्दुओं के बारे में

कुछ नहीं जानते। वे अपना प्रचार चाहते हैं। जबकि महाराजा के विरुद्ध दुर्जनों पत्र विष वमन करते हैं, फिर भी महाराजा आशुतोष हैं। शेख साहब व्यर्थ ही महाराजा को बुरा भला कहते हैं, महाराजा ने कभी शेख साहब की शिकायत किसी से नहीं की। शेख साहब दिल्ली आकर भारत सरकार को महाराजा के विरुद्ध भड़काते हैं, महाराजा ने कभी किसी से ऐसा भी नहीं कहा कि शेख साहब चुगली करते हैं। शासन करते हैं शेख साहब जनता पर और महाराजा पर भी। फिर भी महाराजा कुछ नहीं बोलते। शेख साहब की गलतियों को महाराजा अपने ऊपर लेने के लिये उसी तरह तैयार हैं जिस तरह उन्होंने पण्डित काक और महाजन की गलतियों को अपने ऊपर ले लिया। इधर शेख साहब महाराजा के वैधानिक शासक रहने पर भी व्यर्थ ही लोगों में यह बेतुकी बेपर उड़ाते हैं कि महाराज अमुक सुधार नहीं करने देते।

बम्बई का आंग्लसाप्ताहिक 'ब्लिट्ज' शेख साहब का अनुयायी पत्र है। जिस तरह कोई व्यक्ति व्यर्थ ही मार्ग में चीख मार कर लोगों का ध्यान आकृष्ट करता है, उसी तरह यह पत्र महाराजा के विरुद्ध गलत सबूत देकर प्रतियां छपवाया करता है। शेख साहब इसी में जली कटी सुनाते ऊबते नहीं हैं।

काश्मीर कमीशन

यह कमीशन जब से जहां आया हुआ है वह काश्मीर को अनाथ समझे हुए है। उसे यह भी मालूम नहीं है कि दर असल ,जम्मू काश्मीर राज्य' वैधानिक रूप से महाराजा काश्मीर का है। उसपर किसी तीसरे निर्णायक की कोई आवश्य-

कता नहीं है। महाराजा काश्मीर यह चाहते हैं कि उनका राज्य भारत से मिल जाय, इस में कोई वैधानिक दुर्बलता नहीं है। फिर भी इस कमीशन के सिर में यह फितूर बना हुआ है कि काश्मीर न तो भारत का है और न पाकिस्तान का है और कमीशन को यह निर्णय करना है कि वह किसका है ?

दर असल देखा जाय तो काश्मीर का प्रश्न बिल्कुल सरल है। भारत सरकार ने जब यह मान लिया कि काश्मीर उसका अंग है तब वह रक्षा करने के लिये गयी। उसने यह नहीं माना था तब तो काश्मीर उसके महाराजा का ही था फिर चिल्लपो क्यों है कि काश्मीर किसका रहे ? एक तरफ तो भारत सरकार 'काश्मीर जम्मू' के सम्बन्ध में बोलने का हक रखती है और दूसरी ओर झट कहती है कि उसके बारे में जनमत गणना हो। जब भारत सरकार को जम्मू काश्मीर' की ओर से रक्षा और बोलने का हक महाराज काश्मीर ने प्रदान किया तो क्यों काश्मीर कमीशन की व्यर्थ की बात सुनी जाय ? वास्तविक बात तो यह है कि महाराज काश्मीर को ये लोग प्रमुखता नहीं देना चाहते। यदि 'महाराज काश्मीर' को आगे करके भारत सरकार कार्य करे तो 'काश्मीर कमीशन' अवश्य ही प्रभावित होगा। शेख साहब को तो वह कमीशन भारत सरकार की कठ-पुतली मानता है ! अतएव आवश्यकता है कि महाराज काश्मीर को 'काश्मीर कमीशन' के सम्मुख भारत सरकार पेश करे। महाराज हरिसिंह का 'काश्मीर जम्मू' राज्य से हटना शेख साहब की डिक्टेटरशिप की विजय होगी और जनता का प्रिय शासक हरिसिंह इसका प्रथम शिकार होगा !

मौजूदा काश्मीर के प्रति हमारा कर्त्तव्य

काश्मीर को पाकिस्तान की दयापर नहीं छोड़ा जा सकता साथ ही पाकिस्तान का काश्मीर विषयक मिथ्या प्रचार अब हमारे लिये असह्य हो चुका है हमारी शान्ति की अब अन्तिम सीमा आचुकी है आज अन्तर्राष्ट्रीय चाल बाजियां भी प्रश्न को हल न होने देंगी। हमारा दृढ़ विश्वास होगया है कि कुछ भी कठिनाइयां हमारे मार्ग में आवें हम काश्मीर को पाकिस्तान की दया पर नहीं छोड़ सकते। हम पाकिस्तानके अन्दर और बाहर काश्मीर के सम्बन्ध में किये गये मिथ्या प्रचार की घोर निन्दा करते हुए वहां की सरकार को आगे से ऐसा न करने की सलाह देते हैं। प्रतिदिन वहां के समाचार पत्र तथा अन्य बहुत से उत्तरदायी व्यक्ति काश्मीर के सम्बन्ध में झूठी बातों के प्रचार में लगे हुए हैं। और इस प्रकार दूसरे पड़ोसी देश के आन्तरिक मामले में हस्तक्षेप करते हैं। जब कि हमारी सरकार यह जानते हुए भी कि पूर्वी पाकिस्तान सारा वहां के रहने वाले अल्पसंख्यकों के लिये और स्वयं पश्चिमी पाकिस्तान में सीमान्त प्रदेश वहां के बहुमत तक का दबाने के लिये एक जेलखाना बना हुआ है कुछ नहीं कहती क्योंकि यह पाकिस्तान का घरेलू मामला है। यही नहीं काश्मीर में स्वार्थ निहित सारे राष्ट्रों के समाचार पत्र तथा वहां के नेता काश्मीर के सम्बन्ध में अनर्गल बातें बकते रहते हैं। सुरक्षा परिषद् ही वास्तव में देखा जावे तो इस समस्या को हल न होने देने में दोषी है।

हम आज बहुत दृढ़ता से कह सकते हैं कि काश्मीर पर आक्रमण होने वाले इस गत दो ढाई वर्षों की घटनाओं पर हम जितना अधिक विचार करते हैं उतना ही अधिक हमारा विचार दृढ़ होता जाता है कि हमनेऔर हमारी सरकारने जोकुछ काश्मीर के प्रश्न को लेकर कदम उठाया वह शत प्रति शत सही था। न केवल यही बल्कि हम इस प्रश्न पर अपने सिद्धान्तों की और अपने सन्मान की बाजी लगाने को तय्यार हैं। यदि हमारी सरकार जैसा कि आम जनता का आज रुख देखा जाता है काश्मीर के प्रश्न को सुरक्षा परिषद् के समक्ष न लेजाती तो निश्चित था कि भारत विश्व शान्ति को भंग करने का अपराधी होने के साथ २ आज प्रत्यक्ष रूप से पाकिस्तान के साथ युद्ध में उलझा हुआ होता। केवल अपनी ओर से शान्ति भग न होने देने और युद्ध की स्थिती को रोकने के लिए हमने काश्मीर का प्रश्न सुरक्षापरिषद् में पेश किया था। उस समय भी हमने पाकिस्तान को आक्रमण करने का अपराधी न बताकर सुरक्षा-परिषद् से केवल यही कहा कि पाकिस्तानी क्षेत्र के रास्ते से हमारे क्षेत्र पर आक्रमण किया गया है इस प्रकार तब हमने पाकिस्तान को दोषी नहीं ठहराया था। हमारा सुरक्षा परिषद् से केवल इतना ही कहना था कि यदि पूर्वोक्त कथन सत्य सिद्ध हो जाये तो सुरक्षापरिषद् पाकिस्तान से कहे कि वह अपने देश के क्षेत्र के मार्ग से भारत पर आक्रमण करने वालों को रोके। इतनी ही उस समय हमारी मांग थी जिसका रूप और आकार बिगाड़ कर न केवल पाकिस्तान ही बल्कि बहुत से स्वार्थी देशों ने संसार के सामने रखा है। आक्रमणकारियों को रोकना तो क्या इसके विपरीत पाकिस्तान ने आक्रमण कारियों को सहायता

ही नहीं अपनी फौज तक काश्मीर में भेजना शुरू कर दिया। शुरू में तो पाकिस्तान इस षड़यन्त्र से अपनी अज्ञानता दिखाकर अपने को निर्दोष सिद्ध करने का प्रयत्न करता रहा और कई मास तक यह बात स्वीकार ही नहीं की, कि उसका किसी तरह का भी सम्बन्ध इन आक्रमणकारियों से है।

यही एक सीधा साधा सरल प्रश्न सुरक्षा परिषद के सामने हमारी सरकार ने रखा था। यह न तो परिषद के विद्वानों की बुद्धि में ही प्रवेश कर पाया है और न पाकिस्तान को ही वह समझ में आया है क्यों कि न तो सुरक्षा परिषद ने अभी तक पाकिस्तान को इस अन्तर्राष्ट्रिय कानून को तोड़ने का अपराधी साबित किया और नहीं हमें आज तक कोई उत्तर मिला। दूसरी तरफ पाकिस्तान ने भी अपनी वही हरकत जारी रक्खी है जिसका आधार लेकर उसने कार्यारम्भ कराया था। हम इन दोनों बातों को भली प्रकार समझते ही नहीं किसी प्रकार और कभी भी नहीं भूल सकते कि पाकिस्तान के मिथ्या प्रचार का विदेशी पत्र व कुछ जिम्मेवार लोग समर्थन तक करते हैं इन बातों को देख कर हमारे धैर्य ने अपनी सीमा छोड़ दी है। इस झूठे प्रचार के साथ भारत पर दबाव भी डाला जा रहा है। दबाव डालने और तरह तरह की चाल बाजियों से भरे प्रस्ताव एवं वक्तव्यों से यह साफ प्रकट हो गया है कि काश्मीर के प्रश्न को उसके वास्तविक स्थिती के आधार पर हल न करके उसके पीछे अन्य कारणों की ओट में एक षडयन्त्र रचने की चेष्ठा की जा रही है। इन्ही अन्य हितों को दृष्टी में मुख्य रूप देकर वास्तविक प्रश्न के गुण और अवगुणों की जांच नहीं की जा रही किन्तु अनावश्यक

प्रश्न खड़े किये जा रहे हैं ताकि अनुचित दबाव को भारत पर डाला जाय। इस में कोई सन्देह नहीं कि यह चालबाज़ी हमारे देश की सभ्यता व संस्कृति के विरुद्ध है इसी लिए यह अन्तर्राष्ट्रिय राजनीतिक चालबाजी भारतके लिये एक नई बात है। क्यों कि किसी प्रश्न के हल करने का आधार हमारे यहां चाल बाजी न हो कर उसके गुण और अवगुण ही उसके निर्णय का आधार हैं। यही कारण है कि भारत में विदेशी सत्ता के विरुद्ध संघर्ष करते हुए ३० वर्ष से हम खेला ही करते आ रहे हैं और करेंगे।

पाकिस्तान यह भी आरोप भारत पर ही लगा रहा है कि वहां की सरकार युद्ध की तय्यारी कर रही है यह तो स्वयं हमारे राष्ट्रपति के तात्कालिक वक्तव्य से ही अप्रमाणित हो जाता है, कि 'भारत को रक्षा व्यय में कमी करनी चाहिए' यद्यपि इतना होते हुए भी सुरक्षा का पूरा ध्यान रखा जावेगा। और व्यय में कमी करने का सुझाव वर्तमान स्थिती में एक प्रशंसनीय बात ही है। दूसरी तरफ पाकिस्तानी समाचार पत्र और वहां की जनता हमेशा एक दूसरे को युद्ध के लिए भड़काते रहते हैं। हमारे यहां ऐसा गलत रास्ता न तो जनता ने और नहीं पत्रों ने अपनाया है। इसके अतिरिक्त हमारी युद्ध न करने सम्बन्धी संयुक्त घोषणा के लिये भेजा हुआ पत्र भी हमारे युद्ध न करने की इच्छा को स्पष्ट कर देता है फिर तय्यारी किसलिए और क्यों कीजावे। यदि हमारे पत्र का उत्तर जो पाकिस्तान ने दिया है उसका वास्तविक आशय निकाला जावे तो पाकिस्तान की इच्छा युद्ध करने का अधिकार सुरक्षित रखने की साफ जाहिर होती

है क्योंकि उसका यह निश्चय मालूम होता है कि कुछ प्रश्नों का हल वह युद्ध से ही करना चाहता है। परन्तु हमारा इस विषय से जहां तक भी सम्बन्ध है हम युद्ध नहीं करना चाहते और न करेंगे ही। मगर रक्षा के लिए आक्रमण कारी के विरुद्ध आवश्यकता होने पर युद्ध भी करना पड़ सकता है।

पंडित नेहरू ने ऊपर लिखे विचारों के समर्थन में तथा अपने पक्ष को पुष्ट करने के लिए काश्मीर के प्रधान मन्त्री श्री शेख अब्दुल्ला ने भी कहा कि काश्मीर की इंच इंच भूमि के वापस होने तक जनमत संग्रह नहीं लिया जा सकता यह केवल कठिन ही नहीं असम्भव भी है। श्री अब्दुल्ला के मत से यदि काश्मीर को स्वेच्छासे या भय से मजबूर होकर पाकिस्तान को सौंप दिया जाता तो वह न केवल उस महापुरुष राष्ट्रपिता बापू के सिद्धान्तों पर ही कुठाराघात होता अपितु संसार के सर्व प्रिय प्रजातन्त्र के सिद्धान्त एवं न्याय से भी इन्कार करना होता। भारत को काश्मीर की स्थिति पर किसी प्रकार का सन्देह हो ऐसी लोगों की धारणा सर्वथा गलत है। भारत के राष्ट्र पति के वक्तव्य और भारत के नये विधान से यह स्पष्ट विदित है कि काश्मीर को भी अन्य प्रदेशों की भांति भारत को राजनैतिक स्थिति में एक सन्मान पूर्ण एवं सुरक्षित स्थान प्राप्त है जब कि आज तक भी पाकिस्तान ने अपनी काश्मीर के प्रति कोई नीति या रुख स्पष्ट नहीं किया। हमें मालूम है कि पाकिस्तान की नीति केवल अपने स्वार्थ के लिए काश्मीर की सम्पत्ति और सौन्दर्य को हड़पने की है परन्तु हम काश्मीर देश वासी ऐसा न होने देने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ हैं। काश्मीर सुरक्षा परिषद की दुकान पर रखी जाने

वाली कोई सौदे की चीज नहीं है। काश्मीर के भाग्य का फैसला सुरक्षा परिषद् के हाथ में समझने वाले भ्रान्ति में पड़े हुए हैं उनका यह विचार सर्वथा मूर्खता पूर्ण और अवास्तविक है। यह तो इन्हीं २ सालों में प्रमाणित ही हो चुका है कि नतो सुरक्षा-परिषद् में किसी समस्या को हल करने की क्षमता है और न योग्यता। पाकिस्तान ने अब सुरक्षापरिषद् द्वारा प्रस्तावित और भारत पाकिस्तान दोनों देशों के द्वारा स्वीकृत युद्ध विरति सन्धि को भी भंग कर दिया है इसी कारण वह काश्मीर स्थित अपनी सेना की संख्या को ४० बटालियनों तक कर चुका है। आज भी वह अपने शत्रुता पूर्ण व्यवहार से युद्ध के द्वारा काश्मीर के प्रश्न को हल करना चाहता है। यदि ऐसा न होता तो काश्मीर के उत्तरी प्रदेश में पाकिस्तानी अफसर अपनी किले बन्दी के लिये न जाते। यह सब कार्यवाही युद्ध विराम सन्धि के नियमों को तोड़ना नहीं तो क्या है? जब युद्ध ही पाकिस्तान के लिए एक मात्र काश्मीर समस्या का हल है तो फिर जनमत की दुहाई देना क्या ढोंग और शरारत नहीं है? इस अवस्था में किसी का भी काश्मीर में जनमत संग्रह की बात करना बिल्कुल व्यर्थ है। हमारी काश्मीर से फौज हटा लेने की मांग को यदि पाकिस्तान मानने को तय्यार नहीं तो फिर हम जनमत के लिए तैयार नहीं। पाकिस्तान ने यदि अपनी फौजों को अविलम्ब काश्मीर भूमि से न हटाया तो उसके आगे आने वाले परिणामों के लिए वह जिम्मेवार होगा। जब हमारे राज्य की प्रत्येक इंच २ भूमि हमारे हाथ में होगी तभी हम शान्ति लेंगे और उसी समय जनमत भी देखा जावेगा इससे पूर्व यह सब कुछ सम्भव नहीं है।

हम भारतीय सेना की नैतिकता और उसके साहस की सराहना करते हुए प्रधान मन्त्री के उस वक्तव्य को स्मरण करते हैं कि काश्मीर में भारतीय सेना का कार्य अभी अपूर्ण है सेना के अधिकारियों और सैनिकों को चाहिये कि वह काश्मीर की जनता के रक्षार्थ अपनी सतर्कता कम न करें, भारतीय सेना ने जो काश्मीर में कर दिखाया है वह सब कुछ भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा और वह शहीद जो कि काश्मीर में अपने जीवन से हाथ धो चुके हैं अमर होगये हैं। हम इस बात की बधाई देते हैं और यह बड़ी प्रसन्नता का बात है कि भारतीय सेना रियासत की जनता की सहायता करने के निमित्त इतनी घुल मिल गई है कि भविष्य में एक दूसरे का अभाव भी सम्भव है कष्ट प्रद हो। काश्मीर का निर्णय किसी बाहरी शक्ति के हाथ में नहीं वहां की जनता के हाथ में है। भारत ने जो वायदा काश्मीर के भारत में सम्मिलित होने के समय दिया था आज भी वह उस पर अटल है वही वायदा ज्यों का त्यों मौजूद है। परन्तु उससे पूर्व यह भी आवश्यक है कि काश्मीर में निष्पक्ष एवं उचित मतसंग्रह के लिए आवश्यक शर्त्तें पूरी की जाय काश्मीर के बहुमत का प्रतिनिधित्व करने वाली सबसे बड़ी राजनीतिक संस्था 'नेशनल कान्फ्रेन्स' ने भारत के भाग्य के साथ अपना भाग्य मिलाया है भारत इस प्रकार उसे नीचा न देखने देगा। काश्मीर के निवासी क्रियात्मक रूप में दो राष्ट्रों के सिद्धान्त के जिसके विरुद्ध हम और वह बरसों से लड़ते रहे हैं, विरुद्ध हैं। यद्यपि आज संसार विविध दलों और विचार धाराओं में विभक्त हैं परन्तु अन्तिम विजय उसी की होगी जोकि जनता रूपी

कसौटी पर ठीक उतर कर उसके लिए लाभ पहुँचाने वाली हो। लाभ से यहां यही मतलब है कि जिससे जनता की स्थिती में सुधार के साथ २ अमीर और गरीब के बीच का मौजूदा भेद नष्ट हो जावे।

पश्चिमी देश आज एशिया वासियों की अपेक्षा अधिक सामर्थ्यवान हैं सम्भव है इसीलिए पश्चिम के सम्पतिशाली राष्ट्र आज गुटबन्दी में पड़ गये हैं। एशिया की सीमितशक्ति तो अपने भोजन मकान कपड़ा तथा अन्य जीवन की आवश्यकताओं को ही पूरा करने में लगी है। लड़ाइयों की उसे न तो फुर्सत है और न लड़ाइयों से कभी समस्यायें हल होती हैं। भारत की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने में यहां की सेनाओं का बड़ा हाथ है। उनके सक्रिय भाग लेने से अर्थ व्यवस्था सुधरने में सहायता मिलेगी। भारतीय जनता के साथ ही भारतीय सैनिकों को भी पेटपर पट्टी बांध कर मातृ भूमि की रक्षा और उसके सम्मान की रक्षा करनी पड़ेगी। इसी से भारतीय सैनिक इस कठिन प्रदेश में अपने कार्य में सफल हुए और होंगे।

वर्त्तमान अवस्था किसी प्रकार भी काश्मीरी जनता के जनमत संग्रह के उपयुक्त नहीं हैं और न वह इस समय उसमें भाग ही लेगी। क्योंकि यह एक प्रकार से आक्रमण कारियों को रियायत देना होगा। यह जब तक सम्भव नहीं है जब तक वहाँ की वैधानिक सरकार की सार्वभौमिकता सिद्ध न हो और उसके साथ ही बाहर से अनधिकार चेष्टा करने वाला प्रत्येक व्यक्ति काश्मीर से बाहर न हो जावे। पाकिस्तान की सेना जोकि लग-भग काश्मीर के आधे भाग पर कब्जा किये हुए है वहां

रहते हुए काश्मीर में जनमत लेने का पाकिस्तान का राग एक हिटलरी चाल ही है।

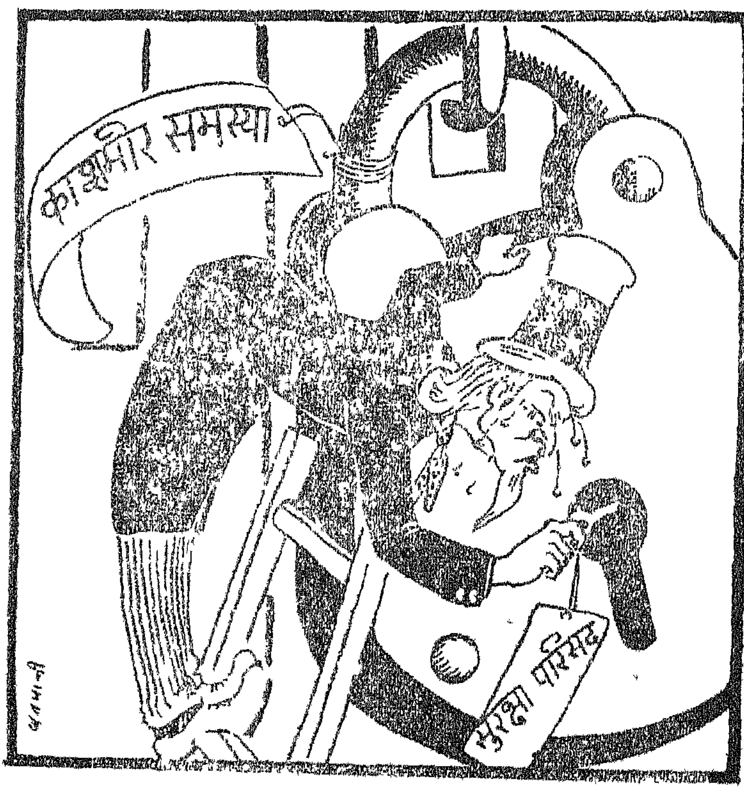
यह तो स्पष्ट ही विदित है कि जनमत संग्रह काश्मीर की जनता का सर्वोच्च एवं सर्व प्रथम अधिकार है। जिसे वह उपयुक्त अवसर पाते ही काम में लावेगी। जिसकी वह आज भी प्रतीक्षा में हैं। परन्तु पाकिस्तान तो क्या संसार की कोई भी शक्ति काश्मीर के ऊपर अपनी इच्छा से जनमत को लाद नहीं सकती जबकि इन दो वर्षों में काश्मीर की जनता ने पाकिस्तान की नीति और उसके रवैये को खूब जाँच लिया है उसके आधीन रहकर जो कष्ट और अपमान काश्मीरियों को सहना पड़ा है वह इतिहास की चीज बनगई है उसे कभी भूला नहीं जा सकता। अतः वर्त्तमान काल में जनमत संग्रह की बात करना निरर्थक और धोखा देने वाला है। आक्रमण कारियों की काश्मीर में मौजूदगी से जितनी भी देरी वहां की जनता के जीवन को साधारण स्थिति में आने में लगेगी उतनी ही देरी जनमत संग्रह में होगी ऐसे अशान्त वातावरण में काश्मीरी जनता के लिए अपने जनमत संग्रह के अधिकार को काम में लाना कठिन है।

यदि सुरक्षा परिषद् ने तथाकथित आजाद काश्मीर सरकार या उसकी सेना को काश्मीर सरकार और उसकी सेना के समान स्थान दिया तो यह साफ २ सच्चा गला घोटना ही नहीं अपितु आक्रमण कारियों के साथ किया गया पक्षपात होगा। 'यह सबको मालूम है कि इस शक्ति और सफलता के लिये वह फासिष्टवादी मार्ग होगा जिसके विरुद्ध लड़ने वाले हजारों वीर उस मातृ भूमि पर सोये पड़े हैं। हमें तो विश्वास है कि केवल

काश्मीरी लोग ही अपनी मातृ भूमि की पराधीनता के इस षड्-यन्त्र को विफल बना देंगे। ऐसे समय में भारत की जनता का यह कर्त्तव्य होजाता है कि वह काश्मीरी जनता के हाथ अपनी चिरस्थाई असाम्प्रदायिकता की मनोवृत्ति को क्रियात्मक रूप देकर मजबूत करे। सम्प्रदाय के शत्रु से लड़ने में भारत और काश्मीर की जनता ने पूर्वकाल में एकसी तकलीफें उठाई हैं और उनके इस विषय में एकसे आदर्श रहे हैं। इसलिये काश्मीर का शेष भारत के साथ असाम्प्रदायिकता एवं प्रजा तन्त्र की प्रगति में उसके विश्वास होने के कारण काश्मीर ने अपना भविष्य भारत के साथ सम्बद्ध कर दिया है। अतः प्रत्येक भारतीय का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह साम्प्रदायिकता तथा संकुचित मनोवृत्ति को दूर भगाकर काश्मीर के लोगों का साथ दे।

कुछ संकुचित एवं स्वार्थनिहित मनोवृत्ति रखने वाला बहुसंख्यक जाति का एक वर्ग भारत के चार करोड़ मुसलमानों को पाकिस्तान का जासूस व पक्षपाती समझता है। परन्तु वह उस समय को भूल जाते हैं जब काश्मीरी मुसलमानों ने एक बड़े नाजुक समय में असाम्प्रदायिक भाई चारे के प्रति अपनी वफा-दारी का सबूत दिया था क्यों कि उस समय उनके लिए पाकि-स्तान में मिलना बड़ा सरल था। कोई शक्ति उन्हें ऐसा करने से नहीं रोक सकती थी। परन्तु ऐसा होता कैसे यह सब उनके तथा उनके नेता महात्मा गान्धी के सिद्धांतों के विरुद्ध होता। भला वह किस प्रकार अपने किये कराये काम को क्षणिक आवेश में आकर नष्ट कर सकते थे। उन्होंने ऐसे समय में शत्रु के द्वारा पहुँचाई हुई सारी तकलीफों का डटकर मुकाबला किया। और

बड़ी बहादुरी के साथ सारी कठिनाइयों के विरुद्ध युद्ध किया यहाँ तक कि अनेकों ने गान्धी व नेहरू के सिद्धान्तों के लिए अपने प्राण तक उत्सर्ग कर दिये। देश की स्वतन्त्रता के लिए लड़ने वालों में आज एक प्रकार की शिथिलता और निराशता देखने में आती है यह स्थिती पूर्व की अपेक्षा इस स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद ज्यादा खतरनाक है। क्योंकि किसी प्रकार की जीवन सम्बन्धि त्रुटियों का इलाज जीवन के प्रति नैरा व अश्रद्धा



व नकारात्मक दृष्टि कोण से नहीं किया जा सकता। हमें अपना आशावादी दृष्टि कोण रखकर उत्साह के साथ आदमी से आदमी का भेद मिटाना होगा ताकि स्वतन्त्रता चाहे वह आर्थिक हो या राजनैतिक उसमें सब गरीब व अमीर समान रूप से हिस्सा ले सकें। यह आजादी गरीब को ज्यादा गरीब और अमीर को ज्यादा अमीर बनाने में सहायक हो गई तो देश का भविष्य खतरे में होगा।

जिन लोगों की यह धारणा है कि काश्मीर की समस्या का हल उसका विभाजन ही है उनकी धारणा केवल ठीक ही नहीं सर्वथा अनुपयुक्त एवं असम्भव है। क्योंकि उन्हें नहीं मालूम कि काश्मीर का सबसे महत्व पूर्ण भाग काश्मीर की घाटी जो कि आज शत्रुओं से सर्वथा रहित है किसी प्रकार भी बंटवारे का शिकार नहीं बन सकती। इस घाटी का महत्व इसी से जाना जा सकता है कि यह जिसके अधिकार में होगी विजय भी निश्चित रूप से उसी की समझनी चाहिए। जबकि काश्मीर के भविष्य के निर्णय का अधिकार वहां की जनता का सर्व प्रथम अधिकार है फिर वहां के लिए मध्यस्थता की बात करना कितना बेदलील है यह इसी से जाना जा सकता है कि ४० लाख मनुष्यों का जीवन एक आदमी की सनक पर नहीं छोड़ा जा सकता। भारत की तरफ से संयुक्त शान्ति घोषणा से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भारत पाकिस्तान के साथ काश्मीर तो क्या कहीं भी युद्ध करने की इच्छा नहीं रखता परन्तु इसका यह मतलब भी नहीं होता कि हम अपनी आत्म रक्षा के उपायों को कम करदें क्योंकि अगर किसी समय कोई शत्रु हमारे ऊपर आक्रमण करता है तो उसका

मुकाबला करना ही पड़ेगा। ऊपर की सारी बातों को अभी कुछ बलवत्ता प्राप्त होगी जब कि हम सम्पूर्ण भारत में मनोवैज्ञानिक रूप से असाम्प्रदायिक लोकतन्त्र का वातावरण बनाये रखें। इससे हमारा अभिप्राय यही है कि हमें किसी प्रकार का भी आक्षेप का मौका देकर विदेशी षड़यन्त्र कारियों के हाथ मजबूत नहीं करने चाहिऐ। क्योंकि काश्मीर का निर्णय अब तक वहां की जनता के हाथ में है वहां भारत की जनता के ऊपर बहुत ज्यादा उत्तरदायित्व है। एंग्लो अमेरिकन गुट पाकिस्तान के पक्ष में है, यह २ ढाई सालों से सुरक्षा परिषद के ही कार्यवाहियों से साफ हो चुका है। आज ब्रिटेन और अमेरिका अप्रत्यक्ष रूप में नाना प्रकार से पाकिस्तान के हाथ मजबूत कर रहे हैं। चाहे इंगलैण्ड की वर्तमान सरकार यह न भी चाहती हो परन्तु पाकिस्तान को उसके अनेकों, मित्र प्राप्त हैं जिन्होंने उसे जन्म दिया है वही उसे बचा बनाकर पालना भी चाहते हैं क्यों कि भारत की शक्ति को बढ़ने देना उनके हितों के विरुद्ध होगा वह नहीं चाहते कि एशिया में कोई ऐसी शक्ति पनपने दी जावे जो कि बाद में उनकी शक्ति का मुकाबला कर सके। यह अब तक के सुरक्षा परिषद के निर्णयों से प्रत्यक्ष है कि उन्होंने सदैव पाकिस्तान का साथ दिया है। अन्यथा यह स्पष्ट रूप से मालूम होने पर भी कि पाकिस्तान ने कबाइलियों को न केवल सहायता ही दी बल्कि पाकिस्तान का षड़यन्त्र में भी हाथ था। आजतक पाकिस्तान को दोषी नहीं ठहराया गया। आरम्भ में तो दुनियां की आखों में धूल झोंकने के लिए पाकिस्तान ऐसा करने से मनाही करता रहा। इन्हीं बातों से हम पर जो दबाब डाला जा रहा है हम इस अवस्था में कोई मतदान लेने के लिए तय्यार नहीं! पाकि-

स्तान को अपनी सेनाए काश्मीर से हटाकर वहां की जनता की सर्वतन्त्रता का आदर करना चाहिये। वालिक मताधिकार के आधार पर मतदाताओं की सूचि बनाने का काम वहां की सरकार ने शुरू कर दिया है संभव है कि अगले वर्ष तक वहां पर विधान सभा भली भान्ति कार्य करने लगे तभी सब बातों का निर्णय होगा और स्वयं महाराजा की स्थिती का भी निर्णय वही करेगी।

—★—

काश्मीर के साथ खिलवाड़

दुनिया के देशों में स्वीटजरलैण्ड का स्थान स्वतंत्र है। पश्चिम के स्वतंत्र राष्ट्रों में भी कई उतार-चढ़ाव आये, उनके मानचित्र बने, और बिगड़े, किन्तु प्रकृति के प्रिय प्रदेश स्वीटजरलैंड की स्वतंत्रता को अक्षुण्ण रखा गया है। जिस प्रकार हमारे देश का हृदय स्थान 'मध्य भारत' है और शोभाभाग काश्मीर है, उसी प्रकार यूरोप का हृदय स्वीटजरलैंड है। यह राष्ट्र एक ओर इटली और आस्ट्रिया से जुड़ा हुआ है तो दूसरी ओर जर्मनी और फ्रांस से लगा हुआ है ये पास पड़ोस के राष्ट्र सदियों से समर सन्नद्ध रहे और रक्त से स्नान कर विग्रह, विजय और पराजय के प्रपंचों में पड़ते रहे, परन्तु निर्विकार स्वीटजरलैंड सर्वदा तटस्थ की तरह पड़ोसियों के प्रपंचों से बच कर स्वाभिमान अनुभव करता रहा है। यही कारण है कि आज भी उसकी स्वतंत्रता स्वर्गीय सुखोपभोग कर रही है। हमारा काश्मीर कई बार कुटिल चालों का शिकार बना, मुगलों के आमोद-प्रमोद को मनमारकर देखता रहा, और शाला-

मार एवं निशात का नकशा बनवा कर अपना फंदा छुड़वाया। पर डोगरा और पठानों की संस्कृतियों का वहां संगम भी होता था, वह भी हुआ, किन्तु बाद में बराबर अंग्रेजों की आखें इसके सौन्दर्य पर लगी रहीं और गिलगित को गले से लगाकर ही वे माने। आज तो पाकिस्तान ने अपना 'पंजा' डाल रखा है। भारत इस पांचाली की पुकार सुनकर, अपने स्वभाव के अनुसार शील-संरक्षण के लिए सन्नद्ध भी हुआ। देखना है इसका स्वत्व सुरक्षित रहता है, या नहीं ? जो भी हो, काश्मीर के सौन्दर्य को क्षत-विक्षत हो जाने के लिए विवश बनना पड़ा है। यह दुर्भाग्य स्वीटज़रलैंड को प्राप्त नहीं हुआ। समर सन्नद्ध राष्ट्रों ने भी प्रकृति-सुन्दरी के इस स्वर्गीय उपहार को कुचलना पसन्द नहीं किया।

काश्मीर को प्रकृति ने जिस तरह मुक्त-हस्त होकर सौन्दर्य और सौरभ देकर संवारा है उतना ही आज के मानवों ने उसे अपने उपभोग का विषय बनाकर स्वार्थ साधा है। प्रकृति के उपहारको अपनाया नहीं, बल्कि उसकी उपेक्षा की है। स्वीटजर लैण्ड को जितना प्रकृति ने प्रेमपूर्वक उपहार दिया, मानव ने उसे अपनी ओर से भी सहयोग देकर संवारा, सुधारा। इसलिए उसमें मानव और प्रकृति का सुन्दर शुचि समन्वय होगया है, सोने में सुगन्ध का समावेश होगया है, एवं मानव-प्रकृति का तादात्म्य होगया है। काश्मीर में हम आत्मैक्य नहीं साध सके हैं। प्रकृति की प्रचुर-पूंजी को पाकर भी 'नर' ने श्रीनगर को नारकीय नगर बनाने में प्रायश्चित्त नहीं किया है, चाहे वहां के रहने वालों ने, चाहे प्रवासियों ने पाया, पीया और पोंछकर फेंक दिया है। जहां भी प्रकृति इन मलिन मानवों के स्पर्श से अछूती रही है वहां

अपने अनोखे सौन्दर्य और स्वास्थ्य को सुरक्षित बनाये रही है। काश्मीर में भी मानव हैं और स्वीटजरलैंड में भी मानव हैं। परन्तु दोनोंमें कितना अन्तर है। यह अन्तर मानव मानवका नहीं, केवल संस्कार और साधन का है। स्वीट्जरलैंड यदि, समर-सन्नद्ध राष्ट्रों से संलग्न रहकर भी अपना सौन्दर्य, सौभाग्य सदा सुरक्षित रख सका, जहां कि सदाचार का 'स्तर' भी विभिन्न है—भौतिकता का ही जहां सर्वस्व है, तो फिर इस अनिवर्चनीय आचार, के आदर्श वाले देश में काश्मीर को क्योंकर दुर्योधन की द्रोपदी बन चीर-हरण करवाने को विवश होना पड़े? अवश्य ही काश्मीर के पास-पड़ौसी की सीमा से सटे हुए चीन, रूस, अफगानिस्तान, तिब्बत, पाकिस्तान जैसे पांच प्रदेश हैं, पर स्वीट्जलैंड भी तो जर्मनी-फ्रांस इटली आदि से घिर कर 'हृदय' रखता हुआ आत्मस्थ है! काश्मीर की डलझील की 'गंध' और उसके तट पर बसे हुए जनों की विस्तारित की हुई 'गंद' एक दूसरी से होड करती है। झील की शैवाल और हमारा कूड़ा-कर्कट मानों मुकाबला कर रहा है कि किससे कौन अधिक है? इसके ठीक विपरीत 'आल्प्स' की पर्वतमाला अपने हिम-धवल मुकुट को धारण कर झील में झांक कर अपना प्रतिबिम्ब देखा करती है, और विमल-सलिला झील से अठखेलियां करती हुई स्वस्थ समीर सुख स्पर्श करती हुई बहती रहती है। निःसन्देह काश्मीर की हिमकिरीटिनी गिरिमाला जब कुहरे की झीनी चादर से अपना मुंह ढक लेती है और उसमें लुका-छिपी करते हुए चांद-तारे झिल-मिलाते दिखाई देते हैं, तब कवि 'प्रसाद' की पंक्ति 'शशि मुख पर घूंघट डाले, अंचल में दीप छिपाए,' सहसा स्मरण आये बिना नहीं रहती। काश्मीर के अगणित हिमसण्डित-सौधशृङ्ग,

प्रकृति-प्रेरित कमनीय-कुसुम क्यारियां, और बिना सजाए-संवारे भी सुघर-सुघरे मानव-मुख, तथा फल-सुमन-सौरभ से भरे हुए द्रुम-लता मण्डप इतने मन-मनोहर हृदय-हारी होते हैं कि हृदय रखने वालों को बरबस मुग्ध किये बिना नहीं रहते। पर पुराणों में कहा है कि जिस समय अर्जुन पर आकर्षित हो उर्वशी ने अपना सर्वस्व अर्पण करना चाहा था, उसमें सरलता जागृत हुई वह अडिग, अविचल बना रहा आखिर उर्वशी प्रणय-पिपासा से विकल हो तिलमिला उठी और अभिशाप देने को उद्यत होगई। ठीक इसी तरह प्रकृति के रूप-लावण्य प्रचुर प्रिय उपहार की उपेक्षा करके काश्मीरियों ने जो अपराध किया है वह अक्षम्य हो गया है और वह बदला लेने को आतुर हो उठी है। अवश्य ही सौन्दर्य साधना सरल नहीं है। स्वीट्जरलैंड की सुन्दरता मानवता की चिर-सखी बनी और यहां हमारी उपेक्षा अभिशाप रखाने को आकुल है।

और—

इस समय अवश्य ही काश्मीर में तोपों तलवारों और बम बर्षकों का युद्ध रुक गया है, लेकिन उस से भी चिंताजनक 'बौद्धिक-युद्ध आरम्भ होगया है। एक जमाना ऐसा था कि काश्मीर ने बुद्धि और शक्ति के समर में अपनी ख्याति दुनिया में प्राप्त कर रखी थी। आज वह सौंदर्य-सुरा की साधना में दोनों से ही हाथ धो बैठा है। एक समय के 'सरस्वती' के इस 'देश' पर अब शेख अब्दुल्ला का वर्चस्व है। 'बुद्धि' के उपासक ने जब 'मुगलों' से ममत्व किया, तब से उसकी ख्याति खत्म होगई है। पर आज उन्हीं के उत्तराधिकारियों ने अपने स्वभावानुसार काश्मीर का

कावरण्य ह़ट न शुरू किया है और इसके विपरीत उन्हीं के एक जाति-बन्धु पर काश्मीर की आशा निर्भर हो रही है। उधर युद्धो-परत पाकिस्तान ने सहसा स्नेह-सम्बन्ध बढ़ाने की भाषा बोलना आरम्भ कर दिया है। विरोधियों की इस नई परिवर्तन वाणी को सुन कर चिंता बढ़ती है कि यह स्नेह का 'हाथ' है, या मुक्के की बात! नीति-परिवर्तन के इस 'नाटक' का 'ड्रापसीन' कहां जाकर होगा? और जिस पर अभी तक अकेले अंग्रेजों की आंख जमी हुई थी, उसे समझौते की भावना में 'अंतर्राष्ट्रीय सैनिक 'पर्यवे-क्षक बारीकी से निहार रहे हैं, वह भी बिना पासपोर्ट के घर में घुसने की इजाजत पाकर 'मोर्चों' का मुआयना कर चुके हैं।

इधर 'काश्मीर में मुस्लिम बहुमत' की बात बतलाकर सीमा प्रांत के प्रधान मन्त्री अब्दुलकयूम जो प्रचार कर रहे हैं, काश्मीर में निर्वासितों के नाम पर जैसे लोग प्रसन्न रूप से प्रयास कर रहे हैं, यह भी चिंता से खाली नहीं है। फिर जम्मू तथा काश्मीर की संयुक्त मतगणना की मंजूरी देकर और महाराजा का जम्मू पर परम्परागत अधिकार रहते हुए भी उसे काश्मीर के साथ समेट कर एवं उन्हें अधिकार से असमय वंचित करने की भूल कर हमारे पथ-प्रदर्शक काश्मीर का कौनसा भावी निर्माण करने जा रहे हैं? समझ में नहीं आरहा है। मतगणना की यह समस्या और वह भी परदेशी पंचों की मध्यस्थता में असाधारण गंभीर है जितनी कि लड़ाई भी नहीं हो सकती थी। लड़ाई कुछ दिन और चलती तो काश्मीर का उचित निर्णय ही हो जाने को था। ठीक ऐसे समय युद्ध रोक कर परदेशी पंचों को प्रपञ्च बढ़ाने का अव-सर देना छोटे खतरे से बड़े खतरे को आमंत्रित करना ही हो

गया है। आशंका यह हो रही है कि कहीं यह 'मतगणना' 'विभाजन' का पर्याय ही नहीं बन जाय ? अभी पञ्जाब-सिंध से आये शरणार्थियों की समस्या को भी हम ठीक तरह सुलझा न सके हैं, ऐसी स्थिति में फिर काश्मीर के निर्वासितों की नई समस्या सामने उपस्थित न हो जाय ? हम सरकार से उसी के शब्दों में यह कहना चाहते हैं कि 'काश्मीर के भाग्य के साथ खिलवाड़ न हो जाय।'

काश्मीर का भावी निर्णय

पूरे चौदह मास और सात दिन के पश्चात १ जनवरी की अर्धरात्रि को एक विराम-सन्धि के परिणामस्वरूप काश्मीर का युद्ध स्थगित कर दिया गया था। यह एक सुखद सूचना है। किन्तु प्रश्न तो यह है कि अब काश्मीर का भावी निर्णय क्या होगा ? क्या काश्मीर भारत के पक्ष में अपनी सम्मति देगा ? सचमुच ही युद्धकाल की समस्याओं की अपेक्षा इस समय की स्थिति अधिक विचारणीय और जिज्ञासा उत्पन्न करने वाली है। किन्तु इसका एकमात्र उत्तर यही है कि काश्मीर का भविष्य हमारे अर्थात भारतीय जनता के कार्य-व्यवहार और नीति पर निर्भर है। इसे स्पष्ट रूप में समझ लेने के लिए काश्मीर की भौगोलिक, राजनैतिक और सामाजिक स्थिति तथा इसी से सम्बन्धित कुछ घटनाओं का जान लेना अति आवश्यक है।

काश्मीर की भौगोलिक स्थिति के सम्बन्ध में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि भारतवर्ष की यही एक मात्र ऐसी

रियासत है, जिसकी सीमाएं चीनी तुर्किस्तान, रूसी तुर्कीस्तान और अफगानिस्तान से मिली होने के कारण भारी अन्तर्राष्ट्रीय महत्व रखती हैं। इस समय समस्त संसार की राज्यशक्तियों रूस और अमरीका के जिन मुख्य दो दलों में बटी हुई हैं उस दल-बन्दी से भी काश्मीर के प्रश्न का एक भारी सम्बन्ध है, क्योंकि रूस को चारों ओर से घेरने के लिए अमरीका एक ओर तो पूर्व में जापान को और पश्चिम में जर्मनी को अपने प्रभाव में बनाये रखना चाहता है और मध्य में वह काश्मीर में भी अपना अप्रत्यक्ष प्रभुत्व चाहता है जिस से संकट का समय उपस्थित होने पर अमरीका की वायुसेना काश्मीर के हवाई अड्डों का उपयोग करके कुछ ही घंटों में पामीर पठार के अन्तगर्त स्थित समझी जाने वाली उन रूसी वेधशालाओं को नष्ट कर सकें जहां कहा जाता है कि रूसी और जर्मन वैज्ञानिक अणुबम और अणुबम से भी सहस्रों गुनी भयानक 'कास्मिक किरण' पर अनुसन्धान कर रहे हैं। इसीलिए काश्मीर के भावी निर्णय का प्रश्न रूस और अमरीका की शक्ति और राजनीति पर भी गहरा प्रभाव डालने की क्षमता रखता है। इससे स्पष्ट है कि काश्मीर का निर्णय भारत और पाकिस्तान के बीच जिस पक्ष में होगा उसकी केवल स्थानीय ही नहीं बल्कि अन्तर्राष्ट्रिय शक्ति भी बढ़ जायगी।

इसके अतिरिक्त काश्मीर की भौगोलिक स्थिति पाकिस्तान के लिए एक और भी पहलू रखती है। इस पहलू का सम्बन्ध सीमाप्रांत के पठानिस्तान आन्दोलन से है, जिसे आज पाकिस्तान ने संगीनों के बल पर दबाया हुआ है। अब यदि काश्मीर का निर्णय भारत के पक्ष में होता है, तो भारत की पश्चिमी सीमाएं

सीधी सीमान्त प्रदेश से जा मिलेंगी। पाकिस्तान जानता है कि यदि ऐसा होगया तो पठानिस्तान आन्दोलन को फिर किसी प्रकार भी दबाया नहीं जा सकेगा। यह याद रखना चाहिए कि इस युद्ध काल में भी सीमाप्रांतीय कबाइली इलाके के सर्वाधिक प्रभावशाली नेता इपी के फकीर ने काश्मीर युद्ध में सदैव भारत के पक्ष में ही सहानुभूति प्रकट की है और बादशाह खान भी कबाइलियों द्वारा काश्मीर पर आक्रमण किये जाने के पक्ष में नहीं था। किन्तु सीमाप्रांत का पठान इलाका जीवन के लिये आवश्यक वस्तुओं के सम्बन्ध में निर्भर तो पाकिस्तान पर ही है, अतः उसे पाकिस्तान की वर्तमान सरकार के इच्छानुसार ही चलना पड़ता है। अब यदि काश्मीर भारत के साथ मिल जाता है तो पठान बड़ी सुविधा के साथ अन्न वस्त्र आदि भारत से प्राप्त कर सकेंगे। ऐसी स्थिति में भला कौन पठान 'आजाद पठानिस्तान' का समर्थक न बन जायगा ? और पठानिस्तान बन जाने का स्पष्ट अर्थ है, पाकिस्तान की मृत्यु। इस प्रकार काश्मीर के भावी निर्णय का प्रश्न भारत के लिए तो उसकी शक्ति की वृद्धि तक ही सीमित है किन्तु पाकिस्तान के लिए तो उसके अस्तित्व को ही चुनौती देना है। पाकिस्तान यह भली भान्ति जानता है कि यदि काश्मीर के मुसलमान भारत के अन्तर्गत रहने का निर्णय कर लेते हैं तो पठानों पर, जो पहिले से ही कांग्रेसवादी रहे हैं, इसका यह मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ेगा कि वे पठानिस्तान को भारत के अन्तर्गत रखने के लिए भी तैयार हो सकते है।

सामाजिक स्थिति

काश्मीर की सामाजिक स्थिति यह है कि १९४१ की जनगणना के अनुसार काश्मीर की कुल आबादी ४० लाख २१ हज़ार

६१५ है। इसमें ७७,११ प्रतिशत मुसलमान, २०,१२ प्रतिशत हिन्दू और २,७७ प्रतिशत सिख व बौद्ध हैं। इस प्रकार काश्मीर स्पष्टतः एक मुस्लिम बहुल प्रदेश है और यदि हम 'हिन्दूराष्ट्र' के सिद्धान्त पर विश्वास रखते हैं तब तो काश्मीर के सम्बन्ध में हम कोई दावा कर ही नहीं सकते। जो लोग इन दिनों आजाद काश्मीर सरकार' का और पाकिस्तान सरकार' का रेडियो सुनते रहे हैं वे जानते हैं कि दोनों सरकारों का प्रचार मुख्यतः इसी आधार पर रहा है। आजाद काश्मीर सरकार और पाकिस्तान सरकार का रेडियो बराबर प्रचार करता रहा है कि (१) हिन्दुस्तान एक हिन्दू राष्ट्र है। जिसमें मुसलमान सुरक्षित नहीं रह सकते। (२) भारत की जनता इतनी साम्प्रदायिक होगई है कि उसने गांधी जी जैसे नेता तक की हत्या करदी, इसलिये काश्मीरी मुसलमान भारत के पक्ष गये तो उनकी स्थिति गुलामों जैसी हो जायगी। (३) भारत में होने वाले साम्प्रदायिक दंगे और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का सत्याग्रह भारत की हिन्दू जनता के विचारों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

इस प्रचार के विपरीत शेख अब्दुल्ला की सरकार के रेडियो ने निरंतर इस बात का प्रचार किया है कि भारत एक असाम्प्रदायिक राज्य है और वह असाम्प्रदायिक राज्य ही रहेगा, इस प्रचार के निमित्त 'हिन्द से अपना नाता' शीर्षक एक व्याख्यान माला भी काश्मीर रेडियो से प्रति दिन प्रसारित की जाती रही है। जिसके अधिक तर वक्ता प्रमुख काश्मीरी मुसलमान ही रहे हैं।

युद्ध से पूर्व की स्थिति

भूत सदैव भविष्य पर प्रभाव डाला करता है, इसलिये काश्मीर के भविष्य का अनुमान लगाने के लिए हमको काश्मीर की युद्धपूर्व की स्थिति पर भी विचार कर लेना अति आवश्यक है।

काश्मीर में युद्ध से पूर्व की स्थिति यह थी कि काश्मीर का शासन एकतंत्र के सबसे बुरे और विकृत रूप का प्रतिनिधित्व करता रहा है। काश्मीर के महाराजा राज्य की आय का जितना बड़ा भाग अपने ऊपर व्यय करते रहे हैं और काश्मीर में शिक्षा चिकित्सा आदि पर कितना कम व्यय होता रहा है उसका उदाहरण काश्मीर जैसी स्थिति की किसी दूसरी रियासत में नहीं मिल सकता। अपने इस शोषण-कार्य को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये काश्मीर महाराजा ने भी साम्प्रदायिकता को प्रोत्साहन दिया और वह राष्ट्रीयता को सदैव ही कुचलते रहे। जिस प्रकार हैदराबाद के निजाम ने अपनी बहुसंख्यक हिन्दू जनता में साम्प्रदायिकता की भावनायें उत्तेजित करने के लिए ओ३म् का झण्डा फहराने कैसे कार्यों पर भी प्रतिबन्ध लगा रखा था, उसी प्रकार आज से कुछ वर्ष पूर्व काश्मीर के अनेक क्षेत्रों में अजान तक पर पाबन्दी थी। ये दोनों शासक जानते थे कि जनता के संगठन को नष्ट करने के लिए साम्प्रदायिकता ही सबसे अमोघ अस्त्र है, इसलिये हैदराबाद की जन-जागृति की धारा जिस प्रकार प्रारम्भ में हिन्दू साम्प्रदायिकता के दुरूह गर्तों में भटकती रही, उसी प्रकार काश्मीर की जनता भी आरम्भ में साम्प्रदायिक संगठनों की ओर ही झुकी। स्वयं शेख अब्दुल्ला ने

अपनी संस्था का नाम 'मुस्लिम कान्फ्रेंस' रखा था, किन्तु उनकी समझ में यह जल्दी ही आगया कि इस समस्या का वास्तविक रूप आर्थिक है, साम्प्रदायिक नहीं। इसलिये मुस्लिम कान्फ्रेन्स के स्थान पर उन्होंने नेशनल कान्फ्रेन्स स्थापित की।

महाराजा द्वारा मुस्लिमसाम्प्रदायिकता को सहायता।

कुछ दिनों पश्चात जब समस्त भारतवर्ष में मुस्लिम लीग का जोर बढ़ा तो काश्मीर के कुछ साम्प्रदायिक मुसलमान नेताओं ने एक संगठन खड़ा किया, जिसका नाम 'मुस्लिम कान्फ्रेन्स' रखा गया। इसके उत्तर में साम्प्रदायिक हिन्दू नेताओं ने पंडित सभा' कायम की और वे 'मुस्लिम कान्फ्रेन्स और मुसलमानों से इस हिन्दू राज्य' को बचाने में जुट गये। किन्तु तमाशा यह था कि मुस्लिम कान्फ्रेन्स और पंडित सभा दोनों की ही चोट बेचारे शेख अब्दुल्ला और उनकी नेशनल कान्फ्रेन्स पर थी। मुस्लिम कान्फ्रेन्स' का नारा था—'शेख अब्दुल्ला हिन्दुओं के हाथ बिक गया है, वह नेहरू का गुलाम है, काश्मीर के मुसलमान के लिए वह भयानक खतरा है।' 'पंडित सभा वाले कहते थे—'शेख अब्दुल्ला काश्मीर के हिन्दू राज्य पर मुसलमानों का अधिकार करा देना चाहता है। हम किसी तरह इसे नहीं होने देंगे।'

एक खास बात और थी। वह यह कि काश्मीर का हिन्दू शासन मुस्लिम कान्फ्रेन्सवालों पर विशेष कृपा रखता था। मुस्लिम कान्फ्रेन्स के कार्यकर्ताओं के लिए सरकारी नौकरियों के दर्वाजे हमेशा खुले रहते थे किन्तु नेशनल कान्फ्रेंस के कार्य कर्ताओं पर दिन-रात अत्याचार किये जाते थे। पंडितसभा तो सरकार की कठपुतली थी ही। यही स्थिति उस समय थी, जब तक कबाइली गुंडे श्रीनगर के दरवाजे तक आ पहुँचे थे।

साम्प्रदायिकता के प्रबल विरोधी शेख अब्दुल्ला ।

किन्तु महाराजा, मुस्लिम कान्फ्रेन्स और पंडित सभा की सम्मिलित शक्ति से शेख अब्दुल्ला उसी प्रकार सफलतापूर्वक मोर्चा लेते रहे, जिस प्रकार अंग्रेज अधिकारियों और मुस्लिम-लीगियों की सम्मिलित शक्ति से सीमाप्रान्त में खानबन्धुओं ने मोर्चा लिया है। पाठक सम्भवतः भूले न होंगे कि सन् १९४५ में जबकि जिन्ना साहब काश्मीर में राज्य के अतिथि बने थे, तब उनके लिए किसी सार्वजनिक सभा में भाषण देना तक कठिन होगया था और उनको कुछ ही दिनों में काश्मीर से भाग आना पड़ा था। इसके पश्चात् जब जवाहरलाल जी मौ० आजाद और सरहदी गांधी काश्मीर गये तो वहां इन नेताओं का शानदार जलूस निकाला गया था। लीगियों ने, कहा जाता है, राज्याधिकारियों की सहायता से, उस जलूस को भंग कर देने का प्रयास किया था किन्तु वे असफल रहे थे। शेख अब्दुल्ला के प्रभाव का दूसरा उदाहरण उस समय मिला, जब समस्त देश में भयंकर दंगे होते रहे किन्तु श्रीनगर और उसके आस-पास रहने वाले हिन्दू पूर्ण सुरक्षा और विश्वास के साथ अपना व्यापार करते रहे थे। कहा जाता है कि यह महाराजा के कारण हो सका। किन्तु सन् १९३३-३४ में महाराजा कहां गये थे। जबकि उनकी समस्त शक्ति श्रीनगर के हिन्दुओं को लूट मार से नहीं बचा सकी थी ?

तो काश्मीर की भूतकालीन स्थिति यह रही है कि वहां साम्प्रदायिकता को पर्याप्त राज्याश्रय मिलता रहा है- फिर भी शेखसाहब का प्रभाव कम शक्तिशाली नहीं रहा। क्या अच्छा

होता कि उस समय काश्मीर के महाराजा जरा बुद्धि से काम लेते।

वर्तमान स्थिति

काश्मीर की वर्तमान स्थिति यह है कि उसका एक बड़ा भाग इस समय भारतीय सरकार के अधिकार में है। काश्मीर की घाटी में साम्प्रदायिकता का पूर्णतः दमन कर दिया गया है और वह मृतप्राय-सी-ही है। इधर कुछ मास में ही अब्दुल्ला सरकार ने जनहित के जो बड़े २ कार्य किये हैं, जैसे जागीरदारी



शेख अब्दुल्ला अपने मन्त्री के साथ सुरक्षा परिषद में

समाप्त कर देना इत्यादि, उसका भी जनता पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा है और सच कहा जाय तो इसी कारण यह युद्ध 'जनयुद्ध' के रूप में लड़ा जा सका है।

किन्तु शेख अब्दुल्ला की कठिनाइयां भी कम नहीं हैं। पहिली कठिनाई तो यही है कि साम्प्रदायिकता की संकीर्णता मनुष्य के मन पर बड़ी जल्दी प्रभाव डालती है। यही कारण था कि रिजवी के पीछे लाखों मुसलमान और सैकड़ों हजारों हिन्दू लगगये थे और इस बेहूदी बात पर यकीन करने लगे थे कि वह सचमुच दिल्ली के लाल किले पर अपना झंडा फहरा सकेंगे इसके विरुद्ध शोईबुल्ला जैसे समझदार मुसलमानों ने जब हैदराबाद की जनता को सचेत करने का प्रयास किया तो उनको अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। गांधी जी भी इसीलिये मारेगये कि वह हमको साम्प्रदायिकता से दूर रहने का परामर्श देते थे।

शेख अब्दुल्ला की दूसरी कठिनाई यह है कि जहां हिन्दुस्तान सरकार ने उनको पूरी सहायता दी है, वहां हिन्दुस्तान की जनता, विशेषतया हिन्दू जनता ने उनको वह सहायता नहीं दी जो उसे देनी चाहिए थी। जरा हम सोचें तो कि राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सत्याग्रह, हिन्दू महासभा की वर्त्तमान मार्गें और उसका राजनीति में पुनः प्रवेश, तथा हाल में ही होने वाले कलकत्ता, इन्दौर इत्यादि के दंगे काश्मीर के मुसलमान को अपना मत किस ओर देने की प्रेरणा देंगे ? हां, पंजाब में मुसलमानों के पुनर्वास का जो कार्य आरम्भ हुआ है उससे शेख अब्दुल्ला के हाथ अवश्य ही मजबूत हुए हैं। जो लोग काश्मीर की स्थिति से परिचित हैं वे जानते है कि यदि कुछ दिन पहले ही पंजाब में

मुसलमान बसा दिये गये होते तो काश्मीरी मुसलमानों का और भी अधिक समर्थन शेख अब्दुल्ला को प्राप्त हो सकता था, क्योंकि काश्मीरी मुसलमान भारत में व्यापार के लिए केवल पंजाब ही होकर आ सकता है और जब यही रास्ता उसके लिए खतरनाक था तब स्वभावतः वह पूछता था कि मैं फिर भारत के साथ क्यों रहूँ ?

यहां उस प्रचार की ओर भी संकेत कर देना आवश्यक है, जो शेख अब्दुल्ला के विरुद्ध हिन्दू सम्प्रदायवादियों की ओर से निरन्तर होता रहा है। इस प्रचार का प्रारम्भ उस समय हुआ, जब शेख ने 'काश्मीर छोड़ो' आन्दोलन प्रारम्भ किया था। उस समय नेहरू जी पर भी बड़ा रोष प्रकट किया गया था, क्योंकि वह शेखसाहब की सहायताको काश्मीर पहुँचे थे और गिरफ्तार भी हुए थे। आज भी वह प्रचार चल रहा है। सब जानते है कि शेख चाहते तो पाकिस्तान के साथ मिलकर आज काश्मीर के सबसे बड़े अधिकारी बने होते। इसी लोभ में काश्मीर के अनेक हिन्दू तो पाकिस्तान के साथ मिल भी गये थे, किन्तु शेख खानबन्धुओं की भान्ति ही अपनी विचारधारा पर दृढ़ रहे। फिर भी कहा है कि शेख धोखा देंगे। एक बार कहा गया कि शेख के डिप्टी श्री मुहम्मद बख्शी पाकिस्तान से मिले। कभी कहा जाता है कि शेख काश्मीर के राजा को हटा कर स्वयं बादशाह बन जाना चाहते हैं।' यह प्रचार करना शेख और भारत सरकार की पीठ में छुरा घोपना है और पाकिस्तान को मूल्यवान सहायता देना है।

भविष्य हमारे हाथों में है

इस प्रकार काश्मीर के प्रश्न में अनेक उलझनें हैं और उसका भविष्य सन्देहास्पद है, फिर भी उसकी कुंजी हमारे हाथों

में ही है। यदि हम काश्मीर के महत्व को समझ लें, उसकी अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति जान लें, इस रहस्य से परिचित हो जायं कि पाकिस्तान के जीवन-मरण का प्रश्न ही काश्मीर के साथ सम्बन्धित है और फिर थोड़े विवेक से काम लें तो निश्चय है कि काश्मीर हमारे साथ रहेगा और काश्मीर के जनमत में हम विजयी होंगे। किन्तु यदि हम न चेते और ऐसी ही भूलें करते रहे, जैसी कर रहे हैं, तो काश्मीर का भविष्य क्या होगा इसका स्वयं ही अनुमान लगाया जा सकता है।

इस प्रकार काश्मीर के भविष्य का निर्णय पहिले भारतीय जनता को करना है। काश्मीरी जनता का निर्णय तो उस निर्णय की प्रतिक्रियामात्र होगा।

—:o:—

शुभ शकुन

सन् १६४८ के अवसान की वह संध्या भारतीय इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगी जब प्रधान मंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने उसकी मध्यरात्रि से काश्मीर में युद्ध-विराम की घोषणा की। संयोग की बात है कि यह शांति-घोषणा पुण्यनगरी प्रयाग में हुई जिसके दुकूलों को धोनेवाली गंगा, यमुना और सरस्वती की धाराएं अपने अन्तर में शान्ति के अन्यतम पुजारी और उसकी सच्ची सहधर्मिणी की अस्थियां छिपाये हुए है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि नेहरूजी की यह घोषणा भारत की शांतिप्रिय जनता के लिए एक सुखद विस्मय के रूप

में प्रकट हुई और आज सारा संसार एककण्ठ से पुकार रहा है कि लगभग १५ मास के भीषण रक्तपात के पश्चात काश्मीर में युद्ध का बन्द होना भारत और भारत से भी अधिक पाकिस्तान के लिए नववर्ष का एक शुभ शकुन है।

भारतीय जननायकों की कीर्ति के अंचल पर सदा ही 'रक्तहीन क्रान्ति' की धवलता लहराती रही है। हम इस बात को विस्मरण नहीं कर सकते कि लहू की एक बूंद बहाये बिना ही उन्होंने ब्रिटिश सरकार जैसी शक्तिशालिनी सत्ता को उखाड़ फेंका और उसके पृष्ठपोषकों—राजाओं व नवाबों—को भी शस्त्र का प्रयोग किये बिना ही नतमस्तक कर दिया। किन्तु पाकिस्तान के जिस कुचक्र ने अधिकांश भारत-भूमि को रक्त-प्लावित कर दिया उसीने जूनागढ़, हैदराबाद और काश्मीर को भी अहिंसक संघर्ष का केन्द्र बनाया और भारतीय लोकनायकों को अपना अभ्यास और अपनी इच्छा के प्रतिकूल अपने उज्वल कीर्ति-अंचल को लहू के छींटों से कलंकित होने दिया। इस अहिंसक मार्ग पर हमारे नेताओं ने बड़ी सतर्कता किन्तु दृढ़ता और कुशलता के साथ पग बढ़ाया और जनता की एक ललकार ने जूनागढ़ के नवाब को पाकिस्तान की शरण में भगा दिया। आज जूनागढ़ की जनता अपने को मातृभूमि भारत का एक अंग मानकर सुख और आनन्द के साथ जीवन बिता रही है। हैदराबाद का भूत भी भारतीय सेना का पहला ही थप्पड़ खाकर सीधा हो गया और वहां के निजाम साहब भारत सरकार की शरण में आकर अपना अहोभाग्य मान रहे हैं। काश्मीर को भी निरीह जनता के लहू से रंजित होने से रोकने में भारत की ओर से कोई कसर न छोड़ी गई, किन्तु श्री मुहम्मदअली जिन्ना की हठधर्मी और दुराग्रहपूर्ण

महत्वाकांक्षा ने ऐसा नहीं होने दिया। किन्तु सवा वर्ष तक आर्थिक और सैनिक क्षतियां उठाने के बाद आज पाकिस्तान का विश्वास हो गया है कि भारत एक लोहे का चना है जिसे वह अपने दांतों से चबा नहीं सकता। उसके युद्ध-विराम के लिए तत्पर होने के और भी अनेक कारण हो सकते है, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि पाकिस्तान यह अनुभव करने लगा है कि भारत के विरुद्ध उसकी सैनिक उद्दण्डता सफल नहीं हो सकती।

बर्बरतापूर्ण आक्रमण

आज जब जम्मू और काश्मीर के प्रांत में रणभेरी सुनाई नहीं देती, हमारा मस्तिष्क स्वभावतः २२ अक्तूबर १९४७ की उस अशुभ घड़ी की ओर जाता है जब २००० से भी अधिक कबाइली लुटेरों का एक उन्मत्त गिरोह पाकिस्तान सरकार द्वारा दिखाये गये प्रलोभनों से लुब्ध हो भारतीय सीमा का उल्लंघन कर काश्मीर के शांत प्रदेश में घुस आया और देखते ही देखते मुजफ्फराबाद का नगर नृशंसतम लूटमार का केन्द्र बन गया तथा वहां के सुन्दर भवन धू-धू कर जल उठे। सीमा उल्लंघन का यह पहला ही दृष्टांत नहीं था। सितम्बर मास के मध्य से ही पाकिस्तान-समर्थित लुटेरों के छोटे-छोटे गिरोह कभी कहीं और कभी कहीं काश्मीर प्रांत में घुस आते थे और लूटमार कर भाग जाते थे। किन्तु २२ अक्तूबर का आक्रमण एक नियमित आक्रमण था। लुटेरे कोरे लुटेरे नहीं थे—वे ब्रेनगनों, स्टेनगनों हथगोलों, आग उगलनेवाली तोपों, टैंक तोड़ राइफिलों आदि आधुनिक शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित थे और मोटर ट्रकों पर सवार होकर आये थे। गिरोह में कबाइलियों के अतिरिक्त पाकिस्तान

के भूतपूर्व और छुट्टी पर गये हुए सनिक तथा काश्मीर की रियासती सेना से भागे हुए मुसलमान भी थे। स्पष्टतः वह आक्रमण एक पूर्व आयोजित षड्यन्त्र का अंग था और उसके पीछे पाकिस्तान की काली छाया गुप्त होती हुई भी प्रकट दिखाई देती थी।

यह बात किसी से छिपी नहीं है कि कबाइलियों के इन आक्रमणों ने काश्मीर की जनता को भयभीत कर दिया और वहां के महराजा श्री हरिसिंह तथा उनकी डोगरा सेना ने अपने को उस बाढ़ को रोकने में असमर्थ पाया। स्मरण रहे कि भारत के स्वाधीन होने के पश्चात् जब रियासतों की जटिल समस्या भारत के सामने थी और अधिकांश राज्यों के केन्द्र या प्रांतों में विलीन हो जाने पर भी हैदराबाद की ही भांति काश्मीर की ओर से भी द्विविधा बनी हुई थी, महाराजा हरिसिंह ने दुरंगी चाल चलने की चेष्टा की थी और उन्होंने भारत तथा पाकिस्तान दोनों से यथापूर्व समझौता करने की घोषणा की थी, यद्यपि उस समय तक यह समझौता केवल पाकिस्तान से हुआ था। उन दिनों श्री मुहम्मदअली जिन्ना जीवित थे और उनकी जो पथभ्रष्ट महत्वाकांक्षा भारत का अंगभंग करा कर मानी थी, वही काश्मीर को भी अपने अंग में दबाने का स्वप्न देखती थी। भय था कि काश्मीर कहीं भारत की चरणरज माथे न चढ़ा ले, अतः उस पर सब दिशाओं से दबाव डाला जाने लगा और पाकिस्तानी अधिकारियों ने काश्मीर को अन्न पेट्रोल तथा अन्य आवश्यक पदार्थ देना बन्द कर दिया। इस आर्थिक दबाव के साथ ही साथ लुटेरों के छुट-पुट आक्रमणों के रूप में सैनिक दबाव भी डाला जाने लगा। २२ अक्तूबर का आक्रमण इसी योजना का एक बृहत्तर अंग था।

श्री जिन्ना को आशा थी कि काश्मीर इन सैनिक धमकियों से डर कर पाकिस्तान के चरणों पर लोट जायेगा। उन्होंने कल्पना की थी कि बाह्य आक्रमणों से प्रोत्साहित हो काश्मीर की मुस्लिम-बहुल जनता विद्रोह कर बैठेगी और हरिसिंह जी चित्त दिखाई देंगे। किन्तु दुर्भाग्यवश उनका स्वप्न पूरा नहीं हुआ। जब काश्मीर महाराजा ने देखा कि उनके समक्ष केवल दो ही मार्ग हैं—या तो पाकिस्तान की प्रभुता स्वीकार करना या भारत की शरण में जाना—जो उनका हिन्दू हृदय स्वभावतः भारत की ओर प्रवृत्त हुआ। यह छिपाने की आवश्यकता नहीं कि महाराजा साम्प्रदायिकता के दुर्गुण से मुक्त नहीं थे और परिस्थिति उत्पन्न होने पर उनका भारत की ओर झुकना एक निश्चित-सा निष्कर्ष था। असली प्रश्न था वहां की लग-भग सवा चालीस लाख जनता का जिसका ८५ प्रतिशत भाग मुस्लिम था। क्या महाराजा में इतना साहस था कि एक ऐसे युग में जब साम्प्रदायिकता का नाग काश्मीर की दोनों दिशाओं में बड़े क्रोध के साथ फुंकार रहा था, वह अपनी अधिकांश जनता की स्वाभाविक साम्प्रदायिक प्रवृत्ति की अवहेलना करते? इस जटिल अवसर पर शेख मुहम्मद अब्दुल्ला ने महाराजा के कंधे से कंधा भिड़ाया। राष्ट्रीय कान्फ्रेंस जिसके कि वह अध्यक्ष थे, काश्मीर की प्रबलतम लोक संस्था थी, और वहां के अधिकांश मुस्लिमों का प्रतिनिधित्व करने का दावा करती थी। वैसे तो शेख अब्दुल्ला और उनकी संस्था की भारतीय कांग्रेस के कार्यक्रम में पहले से ही आस्था थी किंतु उस समय उनके लोचनों के समक्ष विभाजन-जनित नरसंहार के हृदयद्रावक दृश्य नाच रहे थे। जो भूल भारतीय मुसलमान अपने पथभ्रष्ट नेता के बहकावे में आकर कर चुके थे, उसे काश्मीरी मुसलमान

दुहराना नहीं चाहते थे। अपनी स्वर्ग-जैसी मातृ-भूमि को रक्त रंजित होते देखना उन्हें सह्य नहीं था। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी देख लिया था कि पाकिस्तान उन्हें प्यार के बल पर नहीं बल्कि सैनिक धमकियों से जीतना चाहता है और उसने उनकी हरी-भरी भूमि में कबाइली लुटेरे छोड़ दिये हैं। अतः शेख अब्दुल्ला और उनके साथियों ने अत्याचारियों से मोर्चा लेने का निर्णय किया और महाराजा को भारत से सैनिक सहायता मांगने का परामर्श दिया। फलतः २४ अक्तूबर को महाराजा काश्मीर ने भारत सरकार से सैनिक सहायता की याचना की। स्थिति नाजुक थी। अहिंसा और शांति का देवता दिल्ली में बैठा हुआ था। काश्मीर को सहायता देने का अर्थ था पाकिस्तान से युद्ध मोल लेना और अहिंसा तथा रक्तपात के क्षेत्र में कमर कस कर उतरना, देश ने बड़ी व्याकुलता के साथ महात्मा की ओर देखा। भारत की प्राचीन धर्म परायणता का आदर करने वाला वह संत कर्तव्य को जानता था। वह मानता था कि यदि शरणागत की रक्षा और अन्याय के विरोध के लिए शस्त्र उठाना पड़े तो वह अनुचित अथवा अवांछनीय नहीं। अतः उसने काश्मीरके धर्मयुद्ध में अहिंसा के नाम पर रोड़े अटकाना उचित नहीं समझा और देश ने कर्त्तव्य-पालन के लिए कमर कस ली। थल और आकाश मार्ग से काश्मीर में भारतीय सेना भेजने की व्यवस्था की गई और २७ अक्तूबर को काश्मीर के भारत में सम्मिलित होने के तत्काल पश्चात् हमारी सेनाएं श्रीनगर के हवाई अड्डे पर जा उतरीं। कल्पना कीजिए उस समय की हमारी दयनीय सैनिक स्थिति की। आक्रमणकारियों की सेना बीच के नगरों को लूटती-जलाती बड़े वेग और अहंकार के साथ आगे बढ़ रही थी। बारा-

मूला पदाक्रांत होचुका था और श्रीनगर के द्वार उसके सामने निर्विघ्न खुले पड़े थे। दुर्भाग्यवश रियासत की डोगरा सेना भी इधर उधर पड़ी थी और काश्मीर की ग्रीष्मकालीन राजधानी की रक्षा का कोई साधन नहीं दिखाई देता था। ऐसे समय में कुछ इने गिने भारतीय वीरों ने साहस-पूर्वक आगे बढ़ कर काश्मीर से कुछ ही मीलों की दूरी पर शत्रु को ललकारा। इसमें सन्देह नहीं कि उस यज्ञ में भारतीय सैनिकों की आहुति चढ गई और उनके नायक कर्नल डी० आर० राय को वीर गति प्राप्त हुई किन्तु वह एक बांध था जिसने कबायलियों की प्रगति धारा को वहीं अवि-रुद्ध कर दिया और भारत को इतना समय दिया कि वह अधि-काधिक संख्या में सेना और सैनिक सामग्री भेज कर आक्रमण कारियों के स्वप्न को भंग कर दे। काश्मीर में भारतीय सफलता का भवन वस्तुतः इन्हीं वीरों की समाधि पर खड़ा किया गया है।

काश्मीर के युद्ध की कहानी एक लम्बी कहानी है। वह काश्मीर की दुर्गम टेढ़ी-मेढ़ी पर्वत मालाओं के बीच भयंकरतम शीत का सामना करते हुए साहसपूर्वक लड़ने वाले भारतीय वीरों के अपूर्व पराक्रम और पौरुष की कहानी है। वह कर्नल राय के अतिरिक्त मेजर शर्मा और ब्रिगेडियर उसमान के अपूर्व बलि-दानों की कहानी है। और वह कहानी है कि काश्मीर के नर-नारियों के अडिग आत्मबल और दृढ़ संकल्प की जिसने देश को अत्याचारियों के समक्ष नतमस्तक नहीं होने दिया। विस्तार में न जाने की अपेक्षा यहां इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि पाकिस्तान ने काश्मीर की कसौटी पर अपने सैनिक बूते को रगड़ २ कर कसने की चेष्टा की किन्तु वह खरा नहीं उतरा।

भारत की निस्वार्थता

पिछले १४ मासों में अपार धन और युद्ध-सामग्री की क्षति उठाकर भारत काश्मीर में युद्ध तो अवश्य करता रहा है, किन्तु उसने उस प्रदेश में कभी स्वार्थ अथवा सत्ता के लोभ से पदार्पण नहीं किया। काश्मीर का अंचल पकड़ने से पहले भारतीय नेता इस सम्भावना से अनभिज्ञ नहीं थे कि वहां की अधिकांश जनता मुस्लिम है और साथ ही साम्प्रदायिकता है जिस जहर ने भारत के दो टुकड़े कर दिये वह किसी दिन काश्मीर की जनता को भी उद्वेलित कर दूसरे पक्ष की ओर उन्मुख कर सकती है। यदि भारत काश्मीर को सोने की चिड़िया समझकर उसे बलात अपने पिंजड़े में बन्द करके रखने का अभीलाषी होता तो अवश्य ही वह यह कार्य बड़ी सरलता के साथ सम्पन्न कर सकता था, क्योंकि उसे ऐसा करने का वैधानिक अधिकार मिल चुका था और चिड़िया इतनी निःशक्त थी कि उड़ भागने का उपक्रम तक नहीं कर सकती थी। किन्तु भारत के जो नेतागण सदा जनता को ही देश का सच्चा शासक मानते आये थे और जनतन्त्रीय सिद्धांतों के लिए अपना लहू बहाते आये थे, वे स्वार्थ की वेदीपर अपनी नैतिकता का बलिदान कैसे कर सकते थे? उनकी वास्तविक शक्ति तो उसीमें निहित थी यही कारण था कि नेहरूजी ने काश्मीर की-रक्षा का भार वहन करते समय ही घोषणा कर दी कि काश्मीर के भाग्य-निर्णय का अधिकार केवल वहां की जनता को ही है और यद्यपि विपत्ति से विवश होकर काश्मीर ने अपनी पूर्ण सत्ता भारत को सौंप दी है तथापि शांति स्थापित होने पर वहां जनमत लिया जायेगा और इस प्रकार काश्मीर के नेता को

अपनी मातृभूमि के भविष्य की रूपरेखा निश्चित करने का स्वतन्त्र अवसर प्रदान किया जायेगा। काश्मीर में युद्ध करते समय भारतीय अधिकारियों ने इस उच्च आदर्श को एक क्षण के लिए भी दृष्टि से ओझल नहीं होने दिया और आज सारा संसार इस आदर्श को कार्यान्वित होते देख रहा है। यद्यपि काश्मीर की राष्ट्रीय कान्फरेंस ने १२ अक्तूबर १६४८ को अपने एक विशेष अधिवेशन में भारत में स्थायी रूप से सम्मिलित होने का निर्णय कर लिया था और शेख अब्दुल्ला एक बार नहीं बल्कि अनेक बार यह घोषणा कर चुके थे कि काश्मीर में जनमत-संग्रह का कोई प्रयोजन नहीं रह गया तथापि भारत सरकार अपनी न्याय-प्रियता पर किसी प्रकार का कलंक नहीं आने देना चाहती थी और न वह अपनी सत्ता लेशमात्र भी कच्ची भित्ति पर खड़ा करना चाहती थी। अतः वह जनमत-संग्रह के लिए स्वेच्छा से और हर्षपूर्वक उद्यत होगई। निसन्देह उसके इस कार्य से संसार के उन कूटनीतिज्ञों को जो युद्ध और सदाचार को दो विरोधी तत्व मानते हैं, कुछ नया प्रकाश मिलेगा।

संयुक्त राष्ट्र से निराशा

काश्मीर की घटनाएं इस बात की भी साक्षी हैं कि भारत संघर्ष नहीं बल्कि प्रेम और समझौते के मार्ग का समर्थक है। तभी तो उसने काश्मीर में अपनी सेनाएं भेजने के पश्चात् भी पाकिस्तान से बराबर प्रार्थना की कि वह कबाइलियों का सहायता और सुविधा देना बन्द कर दे। पाकिस्तान के कान में तेल डाले रहने पर भी उसने क्रोध अथवा प्रतिकार की भावना से वशीभूत होकर पाकिस्तान से नियमित युद्ध करने के उन्माद को बल नहीं

पकड़ने दिया यद्यपि आक्रमण का मार्ग खुला हुआ था और सैनिक विशेषज्ञों का मत था कि पाकिस्तान पर आक्रमण किये बिना काश्मीरकी समस्या कदापि नहीं सुलझ पायेगी। इतने परभी भारत के शांतिप्रिय अधिकारियों ने सैनिक परामर्श की अवहेलना की और युद्ध की अग्नि में घृत डालने की बजाय संयुक्त राष्ट्र का द्वार खटखटाने का निश्चय किया। अतः १ जनवरी, १६४८ को काश्मीर का मामला सुरक्षा परिषद् को सौंप दिया गया जो विश्व शान्ति की ठेकेदार मानी जाती है। इस अवसर पर भारत सरकार ने जो स्मरण पत्र उपस्थित किया उसमें अकाट्य प्रमाणों के बल पर यह सिद्ध कर दिया गया कि काश्मीर में पाकिस्तानी सैनिक खुल्लम-खुला भारतीय सेना से युद्ध कर रहे हैं। भारत को आशा थी कि विश्व-शांति के हित को दृष्टि में रखते हुए सुरक्षा-परिषद् तत्काल न्याय का मार्ग ग्रहण करेगी और पाकिस्तान को काश्मीर की भूमि से हट जाने का आदेश देगी। किन्तु जब परिषद् ने उलटे भारत पर भृकुटि तानी तो न्याय और शांति के लिए मत-वाले रहने वाले भारतीय अधिकारियों की आंखों पर से भ्रम का घना आवरण हटगया और उन्होंने अनुभव किया कि संयुक्त राष्ट्र न्याय का मंच नहीं बल्कि विरोधी स्वार्थों के जटिल संघर्ष का क्रीड़ास्थल बन गया है। जिस ब्रिटेन को अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों से विवश होकर भारत से अपना बोरिया बधना हटाना पड़ा था, किन्तु उसीने भावी स्वार्थ-सिद्धि के लिए बड़ी चतुराई के साथ पाकिस्तान का निर्माण किया था, वह भला भारत का पक्ष कब ले सकता था? और अमरीका जो रूसी विस्तार को रोकने के लिए काश्मीर को एक ढाल बना कर रखना चाहता था और जिसे पता

था कि भारत में रूस-समर्थक तत्वों की कमी नहीं है, वह भी क्योंकर भारत का हित चाह सकता था ? स्वभावतः सुरक्षा परिषद् में विचार आरम्भ होने पर जब पाकिस्तानी प्रतिनिधि श्री जफरुल्ला खां ने काश्मीर की समस्या के साथ ही साथ जूनागढ़ आदि के प्रश्नों पर भी विचार करने की मांग उपस्थित की तो ब्रिटेन अमरीका और उनके सहयोगी राष्ट्रों ने उसका जी खोलकर समर्थन किया। भारत का पक्ष निर्मल था और वह किसी भी विषय पर सुरक्षा परिषद की जटिलतम जांच का सफलता पूर्वक सामना कर सकता था, किन्तु प्रश्न था न्याय और मर्यादा का। अतः उसने परिषद् की अन्यायप्रियता और धांधली के समक्ष सिर झुकाना अस्वीकार कर दिया। ढाई महीने तक भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों में निरर्थक विचार-विनिमय होता रहा। यद्यपि सैद्धान्तिक रूप से उन्हों ने सुरक्षा परिषद् का यह सुझाव स्वीकार कर लिया कि तीन व्यक्तियों का एक कमीशन काश्मीर की स्थिति की जांच करने के लिए नियुक्त किया जाय और साथ ही २० जनवरी १६४८ को सुरक्षा परिषद् ने अपने इस सुझाव को एक नियमित प्रस्ताव के रूप में अंगीकार कर लिया, तथापि कमीशन के कार्याधिकार के संबंध में भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों में कोई भी समझौता नहीं हो पाया, यहां तक कि फरवरी के मध्य में भारतीय प्रतिनिधिमण्डल के नेता श्री गोपालस्वामी आयंगर निराश होकर कुछ समय के लिए नई दिल्ली लौट आये और मार्च १६४८ को भारत के प्रधान मन्त्री पण्डित-जवाहर नेहरू को, जो संयुक्त राष्ट्र की न्याय-क्षमता पर बड़ी आस्था रखते आये थे, भारतीय लोकसभा में यह स्वीकार करना पड़ा कि संयुक्त

राष्ट्र पथभ्रष्ट हो गया है। उसी अवसर पर नेहरूजी ने सभासदों की जानकारी के लिए काश्मीर के संबन्ध में एक विस्तृत विवरण उपस्थित किया, जो श्वेतपत्र के नाम से प्रसिद्ध है।

सुरक्षा परिषद में धांधली

इससे पूर्व नेहरूजी श्री आयंगर को पहले की अपेक्षा अधिक दृढ़ आदेशों के साथ लेकसक्सेस भेज चुके थे। उन्हें कड़ा निर्देश कर दिया था कि जांच-कमीशन की अधिकार-सीमा के सम्बन्ध में यह रत्तीभर भी न झुके। फलतः सुरक्षा परिषद में बहुत दिनों तक अनुपयोगी वाद-विवाद चलता रहा और उसमें आंग्ल-अमरीकी गुट की प्रधानता होने के कारण भारत के प्रति न्याय की सम्भावना एक मृगतृष्णा मात्र बनी रही। फिर भी भारत का पक्ष इतना स्पष्ट और प्रबल था कि जफरुल्ला खां की मांगों का भी ज्यों का त्यों समर्थन किया जाना असम्भव होगया। फल स्वरूप २१ अप्रेल को सुरक्षा परिषद ने ब्रिटेन, अमरीका, चीन कोलम्बिया, कनाडा और बेल्जियम की ओर से उपस्थित किया गया जो संयुक्त प्रस्ताव स्वीकार किया वह न तो भारत को मान्य हुआ न पाकिस्तान को और इस प्रकार सुरक्षा परिषद द्वारा काश्मीरकी गुत्थी सुलझने की आशा क्षीण हो गई।

उक्त प्रस्ताव में कमीशन के सदस्यों की संख्या ३ से बढ़ाकर पांच कर दी गई थी और भारत सरकार को निर्देश किया गया था कि वह अपनी सेना क्रमशः काश्मीर से हटा ले तथा राज्य के शासन से विभिन्न दलों का भी सहयोग ले। यह प्रस्ताव सुरक्षा परिषद में १७ अप्रेल को प्रस्तुत किया गया था और उसके दूसरे ही दिन भारतीय प्रतिनिधि मण्डल के नेता श्री गोपालस्वामी

आयंगर ने घोषणा कर दी थी कि भारत इस प्रस्ताव को स्वीकार करने में असमर्थ है।

३ जून को एक और घटना घटी जिसके कारण सुरक्षा परिषद् के प्रति भारत का रहा-सहा विश्वास भी जाता रहा। उस दिन सुरक्षा परिषद् ने ब्रिटिश प्रतिनिधि का एक प्रस्ताव स्वीकार किया जिसमें १ अप्रेल के प्रस्ताव का पुनः समर्थन करते हुए कमीशन को शीघ्र से शीघ्र काश्मीर जाने का आदेश दिया गया और साथ ही साथ उसे जूनागढ़ आदि समस्याओं की जांच करने का भी भार सौंपा गया जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, भारत कठोर से कठोर अग्नि-परीक्षा के लिए उद्यत था, किंतु वह काश्मीर के प्रश्न को अन्य अनिश्चित प्रश्नों के झाड़खंखाड़ में छिपाने को तैयार नहीं था। इसलिये प्रधान मंत्री नेहरू जी ने सुरक्षापरिषद् के ३ जून के प्रस्ताव के उत्तर में उसके पास एक कड़ा विरोध पत्र भेजा और यह स्पष्ट कर दिया कि भारत काश्मीर के प्रश्न के साथ जूनागढ़ जाति-बध और आर्थिक समझौतों के उल्लंघन के कथित आरोपों का मिलाया जाना कदापि सहन नहीं करेगा।

जांच कमीशन भारत में

फिर भी सुरक्षापरिषद् के उक्त निर्णय के अनुसार पांच व्यक्तियों का एक कमीशन काश्मीर की स्थिति का अध्ययन करने के लिए ७ जुलाई को कराची और १० जुलाई को नई दिल्ली पहुँचा। उसमें निम्नलिखित सदस्य थे—श्री रिकार्डो जे० सीरी (अर्जेनटाइना), सभापति, श्री अल्फ्रेडो लोजानो (कोलम्बिया) उपसभापति, श्री एग्बर्टग्रेफे (बेल्जियम), श्री

जोसेफ कार्बेल (चैकोस्लोवाकिया) और श्री जे० के० हडल (अमरीका)। श्री एरिक कालबन इस कमीशन के नेता थे, वह संयुक्त राष्ट्र के महामन्त्री श्री ट्रिग्वेली के प्रतिनिधि के रूप में आये थे।

कमीशन के आगमन के समय भारत और पाकिस्तान सरकारों की अवस्था एक दूसरे के बिलकुल प्रतिकूल थी। भारत को कुछ छिपाना नहीं था इसलिये उसने निर्द्वन्द्व होकर कमीशन को जांच सम्बन्धी सब प्रकार की सुविधा प्रदान की। उधर पाकिस्तान, जो सुरक्षापरिषद् में चिल्लाकर कहता आया था कि उसपर काश्मीर के युद्ध में भागीदार होने का बिलकुल झूठा आरोप लगाया गया है, उन दिनों खुल्लम-खुल्ला और पूरी शक्ति के साथ काश्मीर के रणक्षेत्रों में भारत से अपना बल तोल रहा था। उसने सोचा था कि कमीशन के आगमन से पूर्व ही काश्मीर को निगल लिया जाय या वहां इतनी अराजकता फैला दी जाय कि कमीशन को भारत के बलात्कार का विश्वास होजाय। किन्तु उसकी दाल गली नहीं और वह अपने व्यूह में स्वयं इस प्रकार फंसा कि काश्मीर की भूमि से निकल नहीं पाया और वहां रंगेहाथ पकड़ा गया। कमीशन ने अपनी आंखों के सामने जो दुश्मन देखे और काश्मीरी जनता तथा युद्धबंदियों ने उन्हें जो कच्चे चिट्ठे सुनाये उनसे कमीशन के सदस्यों की आंखों के सामने से मानो एक अन्धकार सा हटगया और उन्होंने अपने को एक विचित्र स्थिति में पाया। पाकिस्तान की झूठी डींगों की कलई पूरी तरह से खुल गई थी और कमीशन ने अनुभव किया कि युद्ध बन्द किये बिना एक पग भी आगे बढ़ना असम्भव है। अतः १३ अगस्त १९४८ को उसने भारत और पाकिस्तान

के समक्ष तत्काल युद्ध बन्द करने का प्रस्ताव उपस्थित किया। प्रस्ताव में यह भी कहा गया कि विराम-संधिकाल में पाकिस्तानी और कबाइली सेनाएं काश्मीर से हटा ली जायें तथा स्वाभाविक स्थिति स्थापित होने पर काश्मीर में जनमत किया जाय। पहले तो भारत और पाकिस्तान दोनों ही ने इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया किन्तु कुछ स्पष्टीकरण के अनन्तर भारत ने उसे स्वीकार कर लिया यद्यपि पाकिस्तान तब भी अपनी अड़ पर जमा रहा। अभी तक पाकिस्तान की बागडोर जिन्ना महोदय के हाथों में थी।

कमीशन की कर्त्तव्य-परायणता

निराश होकर कमीशन भारत से लौट गया और उसने सुरक्षापरिषद् को जो अंतिम रिपोर्ट दी। उसमें पाकिस्तान की मिथ्यावादिता और हठधर्मी का स्पष्ट संकेत था। यह रिपोर्ट पेरिस में २२ नवम्बर १६४८ को प्रकाशित हुई थी और उसमें पाकिस्तान पर यह दोषारोपण किया गया था कि काश्मीर में युद्ध विराम न हो सकने का एक मात्र कारण यह था कि पाकिस्तान ने कमीशन के १३ अगस्त के विराम सन्धि प्रस्ताव को ठुकरा दिया था जब कि भारत ने उसे असंदिग्ध शब्दों में स्वीकार कर लिया था।

कमीशन का हम को कृतज्ञ होना चाहिये कि इतने पर भी वह हताश अथवा उदासीन नहीं हुआ और जबकि वह जिनेवा में बैठा अपनी रिपोर्ट तैयार करता रहा, पेरिस में, जहां संयुक्त राष्ट्र का अधिवेशन हो रहा था, भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों के बीच जनमत-गणना सम्बन्धी कुछ आधारभूत

सिद्धांतों पर विचारविनिमय होता रहा। जिन सिद्धान्तों पर दोनों प्रतिनिधि सहमत थे उनकी सूचना भारत और पाकिस्तान की सरकारों को भेज दी गई और कमीशन के उपाध्यक्ष डाक्टर लोजानो एक बार पुनः कराची व नई दिल्ली आये। इस बार सफलता ने उनका साथ दिया और भारत तथा पाकिस्तान दोनों ही सरकारों ने उनके प्रस्तावों को स्वीकार कर लिया फलतः २६ दिसम्बर को डाक्टर लोजानो अपने उन्नत भाल पर सफलता का कुंकुम लगवा सुरक्षा परिषद् की रिपोर्ट देने न्यूयार्क के लिए रवाना हुए। उनके जाते ही भारत के प्रधान मन्त्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने धन-जन के निरर्थक संहार को तत्काल रोकने की सद्भावना से प्रेरित हो पाकिस्तान के प्रधान मन्त्री श्री लियाकत अली खां से युद्ध बन्द करने का प्रस्ताव किया और श्री लियाकत अली खां के तत्वार्थपूर्ण सहयोग के फलस्वरूप कमीशन की नियमित घोषणा से पूर्व ही ३१ दिसम्बर की अर्द्धरात्रि से काश्मीर में युद्ध बन्द हो गया।

इस सुखद संवाद को भारत और पाकिस्तान ही नहीं बल्कि समस्त संसार की शान्तिप्रिय जनता ने नववर्ष के एक अनूपम उपहार के रूप में ग्रहण किया है।

कमीशन ने जनमत संग्रह के जो प्रस्ताव प्रकाशित किये हैं वे सर्वथा न्याययुक्त हैं और यदि सभी सम्बन्धित दलों ने निष्पक्षता से काम लिया तो इसमें सन्देह नहीं कि काश्मीर समस्या का निराकरण शीघ्र और सुचारु रूप से हो जायगा।

काश्मीर के मनोरञ्जक तथ्य ।

भारत में राशनिंग प्रथा गत महायुद्ध केदिनों में जारी हुई लेकिन श्रीनगर में गत ३० वर्ष से राशनिंग प्रथा जारी है । इसका कारण वहां खाद्य पदार्थों की कमी नहीं थी लेकिन किसानों को सहायता देना था । काश्मीर किसान बहुत गरीब हैं नई फसल तक उनके पास खर्च के लिए रुपया नहीं रहता था, अतः काश्मीर की सरकार फसल काटने के पहले ही किसानों को फसल का दाम दे देती थी और विशेषता यह थी कि तब के बाजार भाव से अत्यधिक दाम देती थी सरकार श्रीनगर में केन्द्रीय अन्न भंडार शाली स्टोर में अन्न एकत्र कर रखती थी जहां से लोग अन्न खरीदते थे ।

❀ ❀ ❀ ❀

जब गत फरवरी में काश्मीर में अन्न, मिट्टी का तेल, कपड़ा नमक चीनी आदि के लिए हाहाकार मच रहा था तब सरकार के सामने एक बड़ी समस्या खड़ी हो गई कि पहाड़ों तथा घाटियों के छोटेछोटे गांवों तक किस तरह आवश्यक चीजें पहुंचायी जाय । तब केवल भारतीय सेना ही कई गांवों को, जो उनके आने जाने के रास्ते में पड़ते थे, आवश्यक चीजें देती थी । स्वतः मेजर जनरल थिमाया ही कई गांवों में जाकर कपड़ा, चीनी, आदि बांटते थे। ऐसे संकट के समय काश्मीर सरकार ने सोचा कि काश्मीर घाटी के ४४० पटवारी हल्कों में, जिसकी आबादी लगभग १७ लाख है, ४४० सहकारी सोसाइटियां खोली जांय और भारतीय

सेना की सहायता से एक सप्ताह के अन्दर ही ४४० सहकारी सोसाइटियां खोल दी गईं जहां ग्रामीण, कपड़ा, चीनी, नमक, अन्न, मिट्टी का तेल और सरसों का तेल खरीद सकते थे। इतने केन्द्रों को, जिनमें से कितने ही तो केन्द्र सड़कों से बहुत दूर हैं, इतनी चीजें इतने कम समय में पहुँचाना बहुत कठिन कार्य है। लेकिन इस योजना को कार्यान्वित करने से किसानों के संकट को दूर करने में काश्मीर सरकार को बहुत बड़ी सफलता मिली।



[भारतीय सैनिक काश्मीरी जनता को राशन दे रहे हैं]

जोजीला की लड़ाई के दिनों में भारत के रक्षा सचिवालय से प्रकाशित एक विज्ञप्ति में जब यह बताया गया कि जोजीला में भारतीय सेना टैंकों का उपयोग कर रही है तब ज्ञात हुआ कि ब्रिटेन स्थित भारतीय हाई कमिश्नर ने भारत के पररा्ट्र विभाग को तार भेजा कि विज्ञप्ति में ऐसी झूठी बात शामिल नहीं की जानी चाहिये, क्योंकि ब्रिटिश तथा अन्य फौजी अफसर जो



[जोजीला दर्रा]

जोजीला की दुर्गम पहाड़ियों को जानते हैं उक्त विज्ञप्ति का मजाक उड़ा रहे हैं। उनका कथन है कि इतनी दुर्गम पहाड़ियों पर, जो

१४००० फुट ऊंची है टैंकों को ले जाया जाना सम्भव नहीं है। हमारे हाईकमिश्नर का तार रक्षा सचिवालय को दिया गया जो फिर काश्मीर स्थित सैनिक कार्यालयको भेजा गया। उत्तरमें हमारे हाईकमिश्नर से कहा गया कि आप अपना कार्य करें और यदि शक हो तो देखलें।

जोजीला में सड़क बनाने और वहां टैंक ले जाने में हमारी सेना ने जितना साहस और अदम्य उत्साह का परिचय दिया है उसकी मिसाल संसार में कही नहीं है और यही कारण है कि अन्य देशों के फौजी अफसर यह जानकर अचम्भे में पड़ गये और कुछ समय तक वे इस पर विश्वास नहीं करते थे।

इन्हीं दिनों जब जोजीला में प्रथम बार भारतीय टैंकों का उपयोग किया गया तब उस मोर्चे के पाकिस्तानी फौजी कमांडर ने प्रधान सैनिक कार्यालय को वायरलेस पर खबर भेजी कि भारतीय सैनिक वहां टैंको का उपयोग कर रहे हैं तब प्रधान सैनिक कार्यालय के अफसर ने उनसे पूछा कि क्या तुम बहुत ज्यादा शराब पी गये हो।

❀ ❀ ❀ ❀

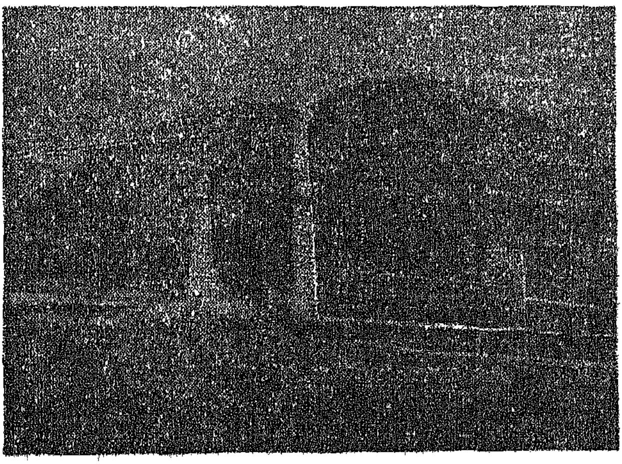
गत दोनों महायुद्धों में ५०० फुट की ऊंचाई से लेकर अधिक से अधिक ६००० फुट की ऊंचाई पर लड़ाई हुई। लेकिन काश्मीर में भारतीय सेना को कई मोर्चों पर ६००० फुट की ऊंचाई पर लड़ाई शुरू करनी पड़ी और १५००० फुट की ऊंचाई तक लड़ाई लड़नी पड़ी। इसीसे अनुमान लगाया जा सकता है कि काश्मीर की लड़ाई में हमारी सेना को कितनी कठिन परिस्थिति का सामान करना पड़ा। हमारी सेना के सामने बर्फ व

ऊंची पहाड़ियों पर लड़ने की ही एक समस्या नहीं थी, उतनी दूर तक अस्त्र शस्त्र पेट्रोल तथा खाद्य पदार्थ ले जाना और आने जाने के मार्ग को सुरक्षित रखना तथा तार आदि के सम्बन्ध बनाये रखने की भी समस्या थी। और यह सब काम अचानक ही करना पड़ा क्योंकि पहले से योजना तो बनायी ही नहीं गई थी और इन्हीं दिनों भारतीय सेना के विभाजन के कारण पुनर-संगठन का भी कार्य जारी था। पाकिस्तानी सेना के सामने इतनी समस्या नहीं थी क्योंकि वह सेना तथा आक्रमणकारी जहां जाते थे वहीं अन्न, कपड़ा आदि लूट लेते थे और साथ ही वह आक्रमण करने की योजना बना चुकी थी और बिना किसी जोरदार प्रतिरोध के पाकिस्तानी आक्रमणकारी काश्मीर की घाटी पर प्रायः अधिकार कर चुके थे। वे श्रीनगरके हवाई अड्डे से १०००गज से भी कम दूरी पर थे। यदि हवाई अड्डे पर आक्रमणकारियों का अधिकार हो गया होता तो श्रीनगर पर अधिकार करना अत्यन्त कठिन हो जाता। कर्नल राय के नेतृत्व में श्रीनगर के हवाई अड्डे पर जो प्रथम भारतीय सैन्य दल उतरा वह उतरते ही आक्रमणकारियों का सामना करने में लग गया। इस दल ने साहस और देशभक्ति का जो परिचय दिया वह भारत के इतिहास में अमर रहेगा।

❀ ❀ ❀ ❀

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यदि पाकिस्तानी आक्रमण-कारी लूटमार करने और युवतियों से बलात्कार करना तथा उन्हें भगाने के कार्य में न लगे होते तो वे भारतीय सेना के पहुँचने के पहले ही काश्मीर की घाटी पर पूर्णतः अधिकार कर लेते।

बारामूला में दो रसोई नर्सों की आक्रमणकारियों द्वारा हत्या की खबर जब विदेशों के अखबारों में प्रकाशित होगई—यह उल्लेखनीय है कि पहले यह खबर विदेशों के अखबारों में ही प्रकाशित हुई और जब उन आक्रमणकारियों की निन्दा की जाने लगी तब पाकिस्तानी सेना के कमांडर ने बारामूला में आक्रमणकारियों के नेता को आदेश दिया कि जब तक सब आक्रमणकारी लिखित रूप से यह आश्वासन न दें कि वे श्री नगर में लूट मार नहीं करेंगे तब तक वे आगे न बढ़ें। आक्रमणकारी ऐसा करने को तय्यार नहीं थे अतः इन्हें इस बात के लिए तयार करने तथा इनसे हस्ताक्षरकराने में दो दिन लग गये और यही कारण है कि आक्रमणकारी तथ पाकिस्तानी सेना हमारी सेना के पहुँचने के पहले श्रीनगर पर अधिकार नहीं कर सकी।



जोजीला का एक मात्र द्वार बायल ब्रिज

उड़ी के पास तथा जोजीला की पहाड़ियों में रहने वाले हमारे राष्ट्रीय सैनिकों के चेहरे में प्रसन्नता, उत्साह और साहस देखकर हम दंग रह गये। वे पहाड़ियों पर रहते हैं जहां आज-कल भी रात में कम से कम ५ मोटे कम्बल ओढ़ने की आवश्यकता पड़ती है, पानी इतना ठंडा रहता है कि पीया नहीं जासकता। उड़ी के पास हमारी सेना ने जमीनके नीचे अस्पताल बना रखा है जहां हर तरह की चिकित्सा चीर फाड़ तथा बिजली से भी की जाती है। इसका नाम करिअप्पा अस्पताल रखा गया है। यहां पहाड़ पर सिनेमा घर भी खोल दिया गया है क्लब बना लिया गया है, और नाटक भी खेलते हैं। वालीबाल बास्केट बाल तथा डेकटेनिस खेलने के लिए जमीन भी बराबर करली गई है। ऊंची-ऊंची पहाड़ियों में सड़क बनाने और जीप तथा ट्रक ले जाने में हमारी सेना ने इतनी सफलता प्राप्त की है कि जिसका पहले कभी अनु-मान भी नहीं किया जाता था और जिसे सम्भव भी नहीं समझा जाता था।

❀ ❀ ❀ ❀

काश्मीर में हमारी राष्ट्रीय सेना ने जनता के साथ इतना अच्छा व्यवहार किया है कि प्रत्येक वर्ग के व्यक्तियों से—चाहे वह किसान हो या जमींदार, हिन्दू हो या मुसलमान—गरीब हो अमीर—प्रशंसा ही सुनी जाती है। लोग उनके चरित्रों की इतनी प्रशंसा करते है जितना हमने ब्रिटिश शासन काल में कभी सुना ही नहीं था। अतः हम सैनिकों के चरित्र को इतना ऊंचा नहीं समझते थे। एक स्थान में जब सिख सैनिक हटाये जाने लगे तब उस स्थान के मुसलमानों ने अधिकारियों से अनुरोध किया कि

कि इन सैनिकों को वहां से न हटाया जाय। वहां आम तौर पर यही देखने को मिला कि वहां के लोग भारतीय सैनिकों के अन्तर्गत रहने में अपने को पूर्णतः सुरक्षित समझते हैं।

हमारी राष्ट्रीय सेना ने काश्मीर में देशभक्ति का जितना परिचय दिया है उसकी तुलना भारत के किसी वर्ग व संस्था से नहीं की जा सकती। काश्मीर की लड़ाई में हमारी सेना को जिन कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा है उससे कई कारणों से जनता प्रायः नहीं के बराबर परिचित है। ऐसी परिस्थितियों में रहते हुए भी हमारे सैनिकों में अदम्य उत्साह देखा गया— इसका एक मात्र कारण देश के प्रति सच्चा प्रेम है।

गत २८ मास से हमारी सेना काश्मीर में आक्रमणकारियों से रक्षा कर रही है और भारत का मान और शान बढ़ा रही है। यद्यपि गत १५ मास से युद्ध-बन्दी होने के कारण लड़ाई नहीं हो रही है लेकिन स्थायी तौर पर लड़ाई बन्द नहीं होने के कारण सैनिकों को प्रायः उतना ही सतर्क रहना पड़ता है जितना कि युद्ध के दिनों में, क्योंकि विरोधी सेनाएं युद्ध-बन्दी रेखा से लग-भग ५०० गज की दूरी पर ही हैं।

हाल ही में हमने जब उड़ी तथा बालतल के मोर्चेपर भारतीय सैनिकों को देखा। उड़ी मोर्चे की युद्ध बन्दी रेखा श्रीनगर से ७४ मील की दूरी पर है और उड़ी श्रीनगर से ६३ मील की दूरी पर श्रीनगर से उड़ी जाने वाली सड़क परहै। जो कोहाला होते हुए जाती है और जो भारत-विभाजन के पहिले रावलपिण्डी पञ्जाब और काश्मीर के बीच व्यापार आदि के लिए एक मात्र चौड़ी और पक्की सड़क थी। आक्रमणकारी शाल्टिंग तक जो श्रीनगर से ४

मील दूर है आ गये थे, जहां भारतीय सेना ने आक्रमणकारियों का प्रथम बार मुकाबला किया। यहां और इससे लगभग १५ मील की दूरी पर स्थित पट्टन पर आक्रमणकारियों ने जोर दार मुकाबला नहीं किया। बारामूला में आक्रमणकारियों तथा पाकिस्तानी सेना ने भारतीय सेना का डट कर मुकाबला किया और बारामूला में आक्रमणकारियों ने जो लूटपाट तथा बलात्कार किया उससे हम सब परिचित ही हैं यहीं नेशनल कान्फ्रेन्स के नेता श्री शेरवानी को अपनी संस्था के प्रति वफादार रहने के कारण दो खम्भों के बीच बांध कर तथा उसके शरीर पर कील गाड़ कर उस पर गोली चलाई गई और वह अन्तिम दम तक 'शेरे काश्मीर और नेहरू जी जिन्दाबाद' का नारा लगाता रहा।

यहां बुरी तरह मार खाने के पश्चात कबाइली आक्रमणकारियों और पाकिस्तानी सेना में भगदड़ मच गई और उड़ी उससे भी आगे कोहाला तक उसके सैनिक जान बचाकर भागने लगे हमारी सेना उड़ी पहुँची तब अधिकारियों ने सोचा कि सैनिक महत्व की दृष्टि से यह स्थान अच्छा है अतः यहीं रुक कर अपनी स्थिति सुदृढ़ करली जाय और क्योंकि यातायात तथा वायरलैस प्रबन्ध को सुरक्षित किये बिना आगे बढ़ना सुरक्षित नहीं समझा जाता। जब हमारी सेना यहां अपनी स्थिति सुदृढ़ करने में लगी थी तब पाकिस्तानी सेना ने इस कार्य में बाधा डालने की भरसक चेष्टा की और तोपों से ८० पौंड के बम फके। इसका परिणाम यह हुआ कि उड़ी का बचा खुचा हिस्सा भी, जिसे यहां से भागते समय कबाइली तथा पाकिस्तानी सेना ने लूट तथा आग लगाकर तहस नहस कर दिया था, नष्ट होगया। यह उल्लेखनीय

है कि कबाइलियों के आने के पूर्व यहां लगभग ४०० दुकानें तथा अन्य मकान थे लेकिन लड़ाई के पश्चात केवल दो ही मकान बच गये। भारतीय सेना की सहायता से सिविल अधिकारी इस क्षेत्र के लोगों को पुनः बसाने में हर तरह से सहायता पहुँचा रहे हैं। इस क्षेत्र की ३३,००० की आबादी में से लग भग १५ हजार लोग बसाये जा चुके हैं। लग भग ११ हजार व्यक्ति पाकिस्तानी क्षेत्र में चले गये हैं जहां से ऐसा बताया जाता है कि वे इधर आने के लिए उत्सुक हैं क्योंकि वहां उनकी हालत बहुत खराब है।

उड़ी में भारतीय सेना का अड्डा

पाकिस्तानी सैनिकों द्वारा बाधाएं डालने के बावजूद हमारी सेना ने अपनी पूर्व योजना के अनुसार उड़ी तक अपनी स्थिति सुदृढ़ कर ली और अब वहां हमारी सेना काफी बड़ी संख्या में रहती है। यहां कई मील के क्षेत्र में पहाड़ियों में बंकरों में (गुफा बना कर) रहते हैं वस्तुतःहमारे सैनिक यहां से उप्पी पुल तक की, जहां युद्धबन्दी रेखा है, पहाड़ियों पर जहां तहां फैले हैं। कहीं हमारी सेना २००० फुट ऊंची पहाड़ी पर और कहीं ४२०० फुट ऊंची पहाड़ी पर बंकरों में रहती है। बंकरों की छतें इतनी मजबूत बनाई गई हैं कि तोप के गोले उन्हें पार नहीं कर सकते। बंकर भी कई तरह के हैं—कई छोटे हैं जिन में दो से अधिक सैनिक नहीं सो सकते और कुछ बड़े हैं जिन में ७ सैनिक तक सो सकते हैं बंकरों में सैनिक लकड़ी के तख्त पर चटाई और उस पर कम्बल बिछा कर सोते हैं। कुछ बंकरों की ऊंचाई ५॥ फुट है। बंकर बहुत साफ सुथरे तथा दूर दूर हैं

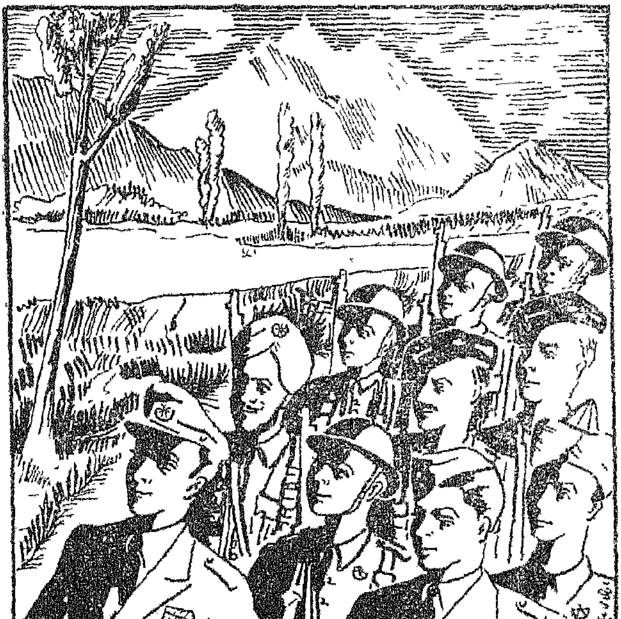
विशेषता यह है कि ४२०० फुट ऊंची पहाड़ियों पर बंकरों में रहते हुए भी आमोद प्रमोद की बहुत अच्छी व्यवस्था है वहां वाली बाल बास्केट बाल डेक टेनिस आदि खेलने का प्रबन्ध है। कभी कभी वे नाटक भी खेलते हैं—क्लब रूम भी है जहां ताश खेलने तथा पत्र पत्रिकाएं पढ़ने का प्रबन्ध है कई मील दूर से नाली निकाल कर पानी लाते हैं। यहां फव्वारे से स्नान करने का भी प्रबंध है। वहां दुकान भी होती है जहां दैनिक आवश्यकताओं की चीजें मिल जाती हैं। यहां वायरलेस सेट से दिल्ली तथा श्री नगर आदि स्थानों से बात चीत भी की जा सकती है। युद्ध के मोर्चे के पास और वह भी इतनी ऊंची पहाड़ियों पर रसद ले जाना तथा इन सब बातों का प्रबंध करना सरल कार्य नहीं है। हमारे सैनिकोंके उत्साह बने रहने का एक मुख्य कारण उनके रहने की उचित व्यवस्था ही है।

जमीन के नीचे अस्पताल

उड़ी में बंकरों (गुफाओं) के अन्दर काफी बड़ा एक सैनिक अस्पताल है जिसका नाम करिअप्पा अस्पताल है। यहां सब तरह की बीमारियों का इलाज किया जाता है—यहां चीर फाड़ की भी व्यवस्था है। यहां ६ वार्ड हैं जिन में विभिन्न बीमारियों का अलग अलग इलाज किया जाता है। ५० रोगियों के ठहरने के लिए बिस्तरा का प्रबन्ध है। अस्पताल में बिजली तथा रेडियो का भी प्रबन्ध है।

उड़ी के सैनिक कार्यालय में अफसरों के लिये एक बड़ा क्लब है जिसका नाम श्री नागेश क्लब है। यहां लकड़ी के

भी छोटे छोटे कई मकान बना लिए गए हैं जिन में कुछ अफसर रहते हैं। विभिन्न क्षेत्रोंको आने जाने के लिए सड़क बना ली गई है और कहीं कहीं फुलवाड़ी भी लगा रखी है। सैनिकों के वालीबाल और वास्केट बाल खेल के लिये बहुत मैदान बना लिये गये हैं। सैनिकों ने अपने खाने के लिये कुछ हिस्से में सब्जियां भी बो रखी हैं। पहाड़ियों पर होते हुए भी सफाई का बहुत सुन्दर प्रबन्ध है।



काश्मीर में भारतीय फौजें

जोजीला में हमारे सैनिकों के सामने कठिनाइयाँ

श्रीनगर से जोजीला जाने के रास्ते में पहाड़ियां ही पहाड़िया नजर आती हैं और पहाड़ियों पर आज कल भी बर्फ के बड़े बड़े चट्टान मीलों तक दिखाई देते हैं। इस रास्ते पर आक्रमणकारी वायल पुल तक आ गए थे जो श्रीनगर से लगभग २१ मील दूर। इस ओर इस पुल पर भारतीय और पाकिस्तानी सेना की प्रथम मुठभेड़ हुई थी। पहाड़ी इलाका होनेके कारण आक्रमणकारी पहाड़ियों में आसानी से छिप जाते थे। आक्रमणकारी पहाड़ियों तथा गलियों से अच्छी तरह परिचित थे अतः वे बड़ी आसानी से भारतीय सैनिकों पर, जो इस क्षेत्र के बारे में बहुत कम जानते थे, छुटफुट आक्रमण कर भाग जाते थे। इसके सिवा सर्दियो में विशेषतया इस ओर अधिक बर्फ जमती है—सड़कों पर भी कहीं कहीं २०-२२ फुट बर्फ जम जाती है, एक स्थान पर तो हमने अभी १० फुट बर्फ जमा हुआ देखा। भारतीय सेना को सन् १९-४७-४८ की शरद ऋतु में भी इस क्षेत्र में अपनी कार्रवाई करनी पड़ी जबकि बताया जाता है कि सन् १९४७-४८ में काश्मीर में जितनी सर्दी पड़ी पिछले २०-२५ वर्ष से नहीं पड़ी थी।

ऐसी कठिन परिस्थिति में आक्रमणकारी कबाइलियों तथा पाकिस्तानी सेना को जो प्राय बिना किसी विरोध के इतनी समीप आ गई थी और अपनी स्थिति सुदृढ़ कर चुकी थी इस पहाड़ी इलाके से खदेड़ना सरल कार्य नहीं था। इसके बावजूद तीव्रगति से भारतीय सेना जब आक्रमणकारियों को खदेड़ती हुई सोनमर्ग और बाल्तल पहुँची तब उसके सामने आगे बढ़ने की समस्या और भी जटिल हो गई क्योंकि जोजीला पार कर शत्रु को दूर

खदेड़ने के लिये कोई सड़क नहीं थी। जोजीला जिस शब्द का अर्थ बर्फीली हवा की घाटी है (जोजो के माने बर्फीली हवा और ला के माने घाटी हैं) और जिसकी ऊंचाई लगभग १२,००० फुट है जहां सड़क बनाना संसार के युद्ध-विशारदों द्वारा भी असम्भव समझा जाता था वहां हमारी सेना ने सड़क बनाने को निर्णय किया। रात को हमारी सेना का इंजीनियर विभाग सड़क बनाया करता था जिससे शत्रु को इस बात का पता न लग सके। ४ मील की यह कठिन सड़क दो माह में बनाई गई। यह सड़क ऐसी पहाड़ी पर बनाई गई है कि प्रत्येक कदम चढ़ने के माने लगभग ८ इंच ऊंचा चढ़ना है और जहां उतार है वहां इसी तरह का उतार भी है इस सड़क को बनाने वाले प्रधान इंजीनीयर का नाम थंगराज था अतः इस सड़क का नाम थंगराज सड़क रखा गया। इस सड़क को अभी और चौड़ी करने का कार्य जारी है। जब यह सड़क बन गई और जोजीला पर हमारे टैंक पहुँच गये और टैंकों ने हमला शुरू किया तब पाकिस्तानी सेना के इस क्षेत्र में भी भगदड़ मच गई और कई मील तक भागती ही रही।

सोनमर्ग में हमारी सेना का एक बड़ा अड्डा है जहां सैनिक तम्बुओं में रहते हैं। सोनमर्ग से हम बालतल होते हुए व जोजीला पार करते हुए गोमरी मैदान तक पहुँचे। रास्ते के कई स्थानों में हमारी सेना रहती है इस तरह और कहीं भी हमारी सेना ने लकड़ी आदि के मकान नहीं बनाये, क्योंकि सर्दी पड़ते ही उन्हें श्रीनगर की ओर हट जाना पड़ता है और वहां २०-२५ फुट तक बर्फ जम जाती है।

गत शरद ऋतु में समय से बहुत पहले ही बर्फ पड़ने लग गया था जिससे रास्ते में लगभग ३०० ट्रक बर्फ के नीचे दब गईं अब ये ट्रकें निकाली जा रही हैं और गोमरी मैदान में सैनिकों द्वारा मरम्मत की जा रही है। बताया जाता है कि लगभग ३४ ट्रकें बिल्कुल नष्ट हो गईं।

काश्मीर रियासत की सड़कों में जितने पुल हैं वे इतने कमजोर हैं कि उनपर ८ टन के टैंकों को उड़ी तथा जोजीला ले जाने का कार्य भारतीय सेना के इतिहास में सदा के लिए रहस्य ही रहेगा।

सैनिकों के खाने पीने का भी अच्छा प्रबन्ध है। उन्हें पर्याप्त कपड़ा दिया जाता है। सैनिकों को जालीदार एक खास तरह की बनिआइन दी जाती है जिससे शरीर की गर्मी पर ठंडी हवा का बुरा असर न हो। वहां कितने ही ऐसे सैनिक हैं जो ४ या ५ वर्ष से छुट्टी पर घर नहीं जा सके हैं और गत २६ मास से पहाड़ियों व तम्बुओं में रह रहे हैं और अपनी जान को प्रति क्षण खतरे में डालकर देश की सेवा कर रहे हैं। वे यह जानने के लिए आजकल बहुत उत्सुक रहते हैं कि क्या जनता उनकी सेवाओं की कद्र करती है या नहीं। वे ऐसा समझते हैं कि जनता उनकी सेवाओं की कम कद्र करती है क्योंकि उनके पास जनता की ओर से बहुत कम उपहार जाते हैं। यद्यपि बात ऐसी नहीं है लेकिन उनका ऐसा समझना स्वाभाविक है। अतः जनता से अनुरोध है कि वह उनके पास कोई भी वस्तु उपहार के रूप में पार्सल से भेजे। सैनिक उपहारों को सदा के लिए यादगार के रूप में रखते हैं। एक बार ऐसा हुआ कि एक कम्पनी को ४-६

बनिआइन और २-४ मौजे भेजे गये। इस कम्पनी के सभी सैनिक जनता के उपहार को लेने के लिए उत्सुक थे लेकिन सबों के लिए तो पर्याप्त नहीं थीं अतः सर्दी की रात में उन चीजों को अलग अलग स्थानों पर बाहर फेंक दिया गया और सवेरे बताया गया कि जो उन चीजों को ढूंढ लेगा वे चीज उसकी ही होजायेंगी सवेरे तक बाहर१-२ फुट बर्फ जम गया था फिर भी उस कम्पनी के सभी सैनिक उन चीजों को ढूंढने निकले। बर्फ को फोड़ फोड़ कर वे उन चीजों को ढूंढते रहे और अन्त में जिन सैनिकों को वे चीज मिलीं वे बहुत भाग्यशाली समझा गया। वे उन चीजों को अब तक यादगार के रूप में रखे हुये हैं।

भारतीय सैनिकों को काश्मीर की लड़ाई में एक बहुत बड़ी कठिनाई थी वहां कोई भी पक्की सड़क और मजबूत पुल न होने के कारण बड़े ट्रकों से रसद तोपें तथा टैंकों को वहां ले जाने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। काश्मीर में भारतीय सेना प्रथम बार २७ अक्टूबर को विमान से कर्नल राय के नेतृत्व में उतरी थी। यह सेना अपने साथ मामूली अस्त्र-शस्त्र लेकर उतरी और उतरते ही कबाइली आक्रमणकारी तथा पाकिस्तानी सेना पर टूट पड़ी जो हवाई अड्डे से मुश्किल से १००० गज की दूरी पर थी। हमारी सेना के इस छोटे से दल ने जिसमें बताया जाता है कि केवल ६० सैनिक थे कुछ ही घण्टों में शत्रु के आक्रमणकारी घबरा गए और बढ़ने का उनका साहस टूट गया। यदि आक्रमणकारी जिनकी संख्या हमारे सैनिकों से कई गुना अधिक थी, हिम्मत कर हवाई अड्डे की ओर बढ़े होते तो कम से कम उस समय कुछ मास के लिए श्रीनगर उनके अधि-

कार में आ जाता। लेकिन हमारे सैनिकों के साहस ने स्थिति को एकदम बदल दिया। अब प्रश्न यह था कि हम श्रीनगर को को भारी अस्त्र कैसे ले जांय क्योंकि पठानकोट से जम्मू व श्रीनगर जाने वाली सड़क जो हमारे लिए केवल एक मात्र मार्ग था बहुत कमजोर थी और कई स्थानों पर पुल ही नहीं थे और जो थे भी वह इतने कमजोर थे कि ८ टन से ज्यादा वजन की लारियों को सह नहीं सकते थे। अतः पहले पुल बनाने और सड़क को कई स्थानों पर चौड़ी करने का काम प्रारम्भ किया गया भारत सरकार ने पठानकोट के पास बहुत मजबूत पुल बनाने का काम बहुत तेजी से शुरु कर दिया था और कुछ ही महीनोंमें बनाकर तैय्यार कर लिया। इससे भी अधिक कठिनाई श्रीनगर से उन चीजों को विभिन्न मोर्चों पर पहुँचाना था। कठिनाई इतनी ही नहीं थी। काश्मीर की पहाड़ियों के निचले भाग की मिट्टी ऐसी है कि थोड़ी ही वर्षा या बर्फ के पिघलने से बहुत बड़ी तादाद में मिट्टी और उसके साथ छोटे छोटे पत्थर सड़क पर गिर जाते हैं जिससे अचानक सड़क बन्द होजाती है। ग्रीष्म काल में इस मिट्टी को हटाना तथा शरद ऋतु में सड़क पर से बर्फ को हटाने के लिए समूचे सड़क पर कुछ ही दूर दूर में बहुत मजदूर रखने पड़ते हैं जिससे ये बाधाएं जल्दी से दूर की जा सकें। अब जम्मू से श्रीनगर तक की सड़क जो बनिहाल दर्रे से होकर जाती है, पक्की बना ली गई है और चौड़ी भी कर ली गई है। अब करीब ३० मील की सड़क ही ऐसी रह गई है जहां से ट्रक एक साथ नहीं गुजर सकतीं—पहले तो दो ट्रकें इस सड़क पर कहीं नहीं आ जा सकती थीं। कई स्थानों पर पुल भी मजबूत बना लिए गए। ये कठिनाइयां पाकिस्तान की सेना और कबाइली आक्रमणकारियों

के सामने नहीं थी क्योंकि उनके पास रावलपिण्डी से श्रीनगर तक आने के लिये पहले की बहुत चौड़ी और पक्की सड़क थी जिससे वे सरलता से भारी से भारी अस्त्र सस्त्र अधिकांश मोर्चों तक ले जा सकते थे।

भारतीय सेना के सामने अस्त्र शस्त्र के सिवा रसद ले जाने की भी समस्या थी—ऊंची से ऊंची पहाड़ियों तक भारतीय सेना अपनी रसद ले जाती थी लेकिन आक्रमणकारी कबाइली तथा पाकिस्तानी सेना जहां जाती थी स्थानीय लोगों से जबरदस्ती अन्न वस्त्र ले लेती थी। यहां तक कि स्थानीय लोगों की भेड़ बकरियों को जबरदस्ती ले जाती थी और इस तरह अपना गुजारा करती थी। इसके विपरीत यदि भारतीय सेना स्थानीय लोगों से कोई चीज लेती थी तो ड्योढ़ा दाम तक देती थी।

भारतीय सेना ने तरह-तरह की कठिनाइयों को प्रसन्नता पूर्वक झेलकर ईमानदार व चरित्रवान होने तथा स्थानीय लोगों से अपने सगे भाई की तरह व्यवहार कर जो आदर्श प्रस्तुत किया वैसा इस युग की लड़ाई में कहीं नहीं पाया गया है। इस पर हम भारतीयों को गर्व है।

आज भारत व काश्मीर की जनता यह जानने के लिए बहुत उत्सुक है कि काश्मीर में जनमत-संग्रह कब होगा और अब कितने ही लोगों का विश्वास दृढ़ होता जा रहा है कि निकट भविष्य में सीधा जनमत-संग्रह होना संभव नहीं है। लोग यह भी जानने के लिए उत्सुक हैं कि यदि जनमत-संग्रह हुआ तो काश्मीर भारत या पाकिस्तान किसके साथ मिलने के पक्ष में मत देगा ?

हाल ही में काश्मीर के प्रधान मन्त्री शेख अब्दुल्ला ने श्रीनगर में पत्रकारों को बताया कि जब तक लड़ाई के दिनों में तितर-बितर हुए सभी काश्मीरी पुनः बसा नहीं लिये जाते, पाकिस्तान नियन्त्रित काश्मीर के इलाकों की शासन-व्यवस्था में परिवर्तन नहीं हो जायगा और पूर्ववत स्थिति कायम नहीं हो जाती तब तक जनमत-संग्रह के लिए मत दाताओं की सूची तैयार करने का कार्य प्रारम्भ नहीं हो सकता। मत दाताओं की सूची तैयार करते समय प्रत्येक की व्यक्तिगत जांच करनी होगी कि वह वस्तुतः काश्मीरी है या नहीं। चूंकि काश्मीर के कितने ही गांव पहाड़ियों पर बसे हैं और छोटी-छोटी आबादी के गांव बहुत दूर-दूर तक फैले हैं जहां सड़क तक नहीं है, मतदाताओं की सूची तैयार करने तथा अन्य तैयारियां करने के लिए काफी समय लगेगा। ऐसी हालत में निकट भविष्य में जनमत-संग्रह होने पर संदेह करना स्वाभाविक है।

तब क्या होगा? संयुक्त राष्ट्रीय काश्मीर कमीशन कब तक दोनों देशों के बीच समझौता कराने की चेष्टा करता रहेगा? युद्ध बन्दी रेखा पर दोनों देशों की सेनाएं कब तक इसी तरह रहेंगी? क्या पुनः युद्ध होगा? आम जनता ऐसे प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए उत्सुक है लेकिन ये प्रश्न ऐसे हैं जिनका देश का सर्वोच्च अधिकारी भी उत्तर नहीं दे सकता। ज्यों ज्यों समय बीतता जायगा त्यों त्यों स्थिति स्पष्ट होती जायगी।

एक प्रश्न यह भी है कि अगर जनमत-संग्रह हुआ तो काश्मीर किसके साथ मिलने के पक्ष में मत देगा? काश्मीर के राजनीतिज्ञों का मत है कि लगभग ६५ या ७० प्रतिशत मत भारत

के साथ मिलने के पक्ष में होगा। उनका कहना है कि ४० लाख आबादी में से लगभग ११ लाख आबादी पाकिस्तान नियंत्रित क्षेत्र में है और शेष काश्मीर सरकार के क्षेत्र में। २९ लाख में से ८ लाख हिन्दू सिख, काश्मीर घाटी के १६॥ लाख मुसलमानों में से १४ लाख मुसलमान, जम्मू प्रांत के लगभग २ लाख मुसलमान और पाकिस्तान नियंत्रित क्षेत्र के लगभग ३ लाख काश्मीरी मुसलमान और लद्दाख क्षेत्र के लगभग १ लाख व्यक्ति भारत के पक्ष में मत देंगे।

काश्मीर सरकार पर आरोप का स्पष्टीकरण

काश्मीर के सरकारी भवनों पर भारतीय संघ के झण्डे के बदले एक नये किस्म का झण्डा, जिसका रंग लाल और मध्य में हल बना हुआ है, देखकर कितने ही लोगों को काश्मीर सरकार पर संदेह होता है कि क्या वहां की सरकार अपनी रियासत को एक अलग स्वतन्त्र देश के रूप में तो नहीं रखना चाहती है, या कम्युनिस्टों से तो नहीं मिली हुई है? शेख अब्दुल्ला ने हाल ही में में इसका स्पष्टीकरण करते हुए बताया कि काश्मीर सरकार ने अभी झण्डे के प्रश्न पर कोई निर्णय नहीं किया है और सरकारी समारोह के समय अभी रियासत का पुराना ही झण्डा फहराया जाता है। अभी सरकारी भवनों में कहीं कहीं जो लाल झण्डा दिखाई देता है वह नेशनल कान्फ्रेन्स का पुराना झंडा है। नेशनल कान्फ्रेन्स ने अपने झंडे पर हल का निशान इसलिए रखा है क्योंकि काश्मीर कृषि-प्रधान रियासत है।

शेख अब्दुल्ला की सरकार कैसे बनी?

शेख अब्दुल्ला की सरकार कैसे बनी, और कब बनी? यह भी एक विचित्र घटना है। १९४७ के अक्तूबर के तीसरे सप्ताह में

जब आक्रमणकारी कबाइली और पाकिस्तानी सेना काश्मीर की राजधानी श्रीनगर से कुछ ही मील दूर पर रह गई तब काश्मीर के महाराजा जम्मू चले गये और प्रायः सभी सरकारी कर्मचारी, पुलिस तथा फौजी अधिकारी भी जम्मू तथा अन्य स्थानों को चले गये और श्रीनगर में कोई सरकार नहीं रह गई ऐसी स्थिति उत्पन्न होने के कारण कुछ ही दिन पहले शेख अब्दुल्ला जेल से छूटे थे। वे जेल से छूटने के एक दो दिन बाद ही पण्डित नेहरू से मिलने भारत आये। इसी बीच में स्थिति और भी अधिक गंभीर हो चुकी थी। शेख अब्दुल्ला ने नेशनल कान्फ्रेन्स की ओर से काश्मीर की रक्षा के लिये भारत सरकार से सहायता मांगी और भारतीय सेना के श्रीनगर आने तक श्रीनगर में गृह-रक्षक दल तैयार करना प्रारम्भ कर दिया। गृह-रक्षक दल बना कर नेशनल कान्फ्रेन्स शहर की रक्षा करने लगी और सारी शासन व्यवस्था अपने हाथ में ले ली। इस तरह बिना किसी के सौंपे हुए शासन व्यवस्था नेशनल कान्फ्रेन्स के, जिसके वे अध्यक्ष थे और अब भी हैं, हाथ में आगई और तब से अब तक नेशनल कान्फ्रेन्स व्यवस्था चला रही है।

सरकार की सफलताएं

इस २६ मास के अन्दर, जबकि काश्मीर में युद्ध जारी ही रहा शेख अब्दुल्ला की सरकार ने शासन-व्यवस्था कृषि भूमि सुधार, बसयातायात के राष्ट्रीय-करण रेशम उद्योग तथा कई अन्य क्षेत्रों में आशा से अधिक सफलता प्राप्त की है। जब नेशनल कान्फ्रेन्स ने रियासत की शासन व्यवस्था अपने हाथ में ली तब उसके सामने आक्रमणकारियों से रियासत की रक्षा करने और

आक्रमणकारियों के भयसे भाग कर आये हुए शरणार्थियों के लिए भोजन कपड़ा तथा रहने का स्थान प्राप्त कराना सब से बड़ा काम था। नेशनल कान्फ्रेन्स के स्वयं सेवकों तथा गृह-रक्षादल ने भारतीय सेना को कबाइली आक्रमणकारियों तथा पाकिस्तानी सेना पर आक्रमण करने में काफी सहायता दी। जब शत्रु, श्रीनगर से कुछ मील दूर भगा दिये, तब शेख अब्दुल्ला की सरकार शरणार्थियों को जमीन देने तथा रियासत की आर्थिक व्यवस्था में सुधार करने जुट गई। इस काम का हाथ में लिया ही था कि अधिक बर्षा के कारण काश्मीर की घाटी में अकाल पड़ गया जिसके कारण सरकार सबसे पहले किसानों को उचित मूल्य पर कपड़ा, नमक, मिट्टी का तेल, खाने का तेल और चीनी दिलाने की ओर ध्यान देना पड़ा। सरकार ने किसानों को उक्त आवश्यक चीजें पहुँचाने के लिए काश्मीरी घाटी के ४४० पटवारी हल्कों में गत मार्च मास में सोसाइटी की ओर से ४४० सहकारी दूकानें खोली। सरकार ने किसानों को ५-५) का एक हिस्सा बेंच कर सहकारी सोसाइटी का सदस्य बनाया जिससे दूकाने चलाने लिए रुपये भी आगये। प्रत्येक केन्द्र में दो नौकर होते हैं। और प्रत्येक को ३०) वेतन मिलता है। दुकानों के नौकरों का वेतन सौसाइटी देती है। अब ये दुकाने अच्छी तरह चल रही हैं जिस से किसानों को सरलता से वे चीजें मिल जाती हैं। यदि खरीददार दुकानों के नौकरों के विरुद्ध कोई शिकायत करते हैं तो उनके विरुद्ध फौरन कार्रवाई की जाती है।

किसानों की भलाई

स्थायी रूप से किसानों की आर्थिक हालत सुधारने के लिए सरकार ने गत सितम्बर १९४८ में ही बिल पास कर, किसानों का

शोषणकरनेवाली पुरानी प्रथा को जिसके अनुसार जमीन जोतने वाले काश्तकार को अपने बीज बैल से बोने तथा अपनी मेहनत से फसल काटने आदि के पश्चात जागीरदार को उसकी जमीन के लिये उत्पादन का आधा भाग देना पड़ता था, बदल दिया। नये कानून के अनुसार काश्तकार को अब चावल, गेहूँ तथा अलसी व तिल पैदा करने वाली भूमी के लिए जागीरदार को उत्पादन का एक चौथाई हिस्सा और कपास, दाल आदि पैदा करने वाली भूमी के लिये उत्पादन का एक तिहाई हिस्सा देना पड़ता है। इस नये कानून में इस बात की भी व्यवस्था कर दी गई है कि जो काश्तकार कम से कम ७ मास से किसी जमीन को जोत रहा हो उस जमीन से जागीर दार उसे नहीं हटा सकता—केवल एक शर्त पर जागीरदार उस काश्तकार को भी हटा सकता है वह शर्त यह है कि जागीरदार स्वतः इस जमीन को अपने हाथ से जोते व बोये। यह कानून उसी जागीरदार पर लागू होता है जिसके पास १०० कनाल (७ कनाल एकड़) से अधिक भूमी है।

सरकार ने काश्मीर में जागीरदारी प्रथा समाप्त कर किसानों की हालत में और भी सुधार कर दिया है और रियासत की आय भी बढ़ गई है क्योंकि तब लगान पहले जागीरदार को मिलता था अब वह सरकार को मिलता है। इस प्रथा को समाप्त करने से खेतों में काम करने वाले मजदूर को जमीन मिल गई है और पड़ती जमीन में भी खेती होने लगी है। इस से दो लाभ हुए—एक तो यह कि इस से अन्न के उत्पादन में वृद्धि होगी और दूसरा यह कि किसानों को यह महसूस होने लगा कि सरकार वस्तुतः उनकी भलाई कर रही

है। बताया जाता है कि पाकिस्तान भागे हुए काश्तकार व खेतों में काम करने वाले मजदूर काश्मीर सरकार के क्षेत्र को लौटने के लिए उतावले हो रहे हैं। इस कार्यवाई से नेशनल कान्फ्रेन्स किसानों में बहुत लोक प्रिय बन गयी है।



भारतीय फौज का स्वागत

सरकार ने श्रीनगर के पास गोपालपुर में सामूहिक खेती का भी परीक्षण प्रारम्भ कर दिया है। इस वर्ष बहुत सी पड़ती भूमि में भी खेती की गई है और किसानों को चीन से नई तरह का धान का बीज मंगा कर दिया गया।

शेख अब्दुल्ला की सरकार ने किसानों की हालत सुधारने के लिये जो साहस पूर्ण कदम उठाया है वह काश्मीर के इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना है। इससे अब वहां कम्युनिस्टों का प्रचार सफल नहीं हो सकता। भारत में कम्युनिज्म को सफल होने देने से रोकने का यह सर्व श्रेष्ठ उपाय है।

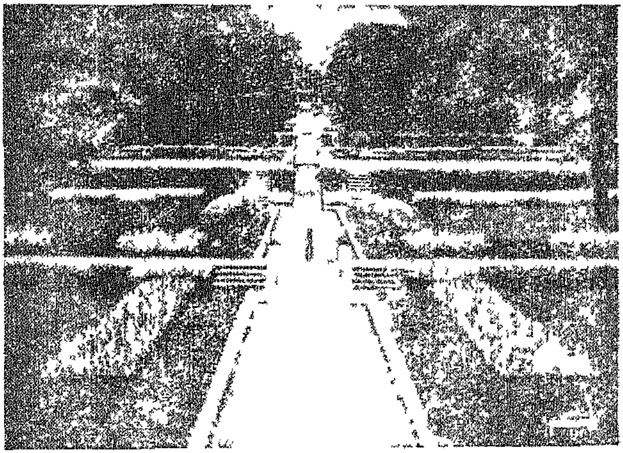
रेशम उद्योग की उन्नति

कृषि के बाद रेशम उद्योग काश्मीर का सबसे बड़ा उद्योग है और इससे वहां लाखों आदमियों का जीवन निर्वाह होता है। गत एक वर्ष में इस उद्योग ने काफी प्रगति की है-रेशम का अच्छा और बारीक तागा तैयार करने में बहुत सफलता मिली है अच्छी किस्म की रेशम तैयार करने के लिए विदेशों से बहुत बड़ी तादाद में रेशम कीड़े मंगाये गये हैं। रेशम तैयार करते समय पहले जो चीज रद्दी समझ कर फेंक दी जाती थी अब उससे बढ़िया किस्म का कपड़ा तैयार किया जाता है जिससे इस उद्योग की आय बहुत बढ़ गयी है।

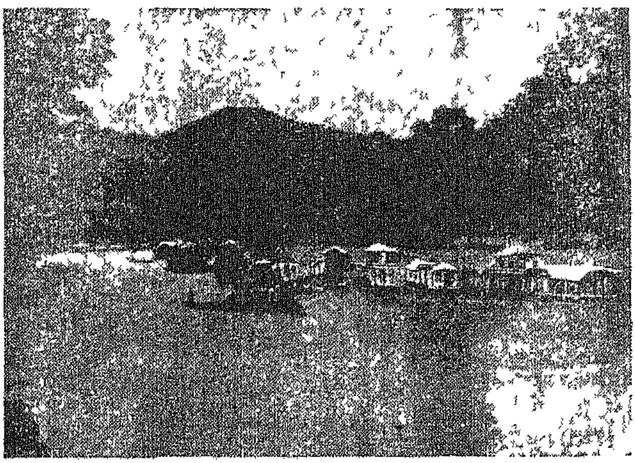
सरकार ने खास तरह की दवाई तैयार करने, बांध बनाकर बिजली तैयार करने और उससे नहर निकाल कर सिंचाई करने की भी योजना बनाई है और इन योजनाओं को शीघ्र कार्यान्वित करने के लिये कार्रवाई की जा रही है। रियासत में कोयले की कई खानें हैं और पेट्रोल के कूप भी हैं लेकिन इनका उपयोग करने के लिए पहले काफी बड़ी रकम लगाने की आवश्यकता है जो अभी रियासत के पास नहीं है।

बस सर्विस का राष्ट्रीयकरण

आक्रमणकारियों के हमले के दिनों में सरकार को विभिन्न क्षेत्रों में शरणार्थियों को लाने के लिए काफी बड़ी तादाद में बसों



निशात बाग



पानी के ऊपर घर

व ट्रकों की आवश्यकता हुई अतः उस समय सरकार ने कुछ समय के लिए रियासत की सभी बसों तथा ट्रकों को अपने हाथ में ले लिया। रियासत में बसों और ट्रकों की कमी हो ही चुकी थी क्योंकि कितनी ही बसों और ट्रकों को आक्रमणकारियों ने अपने अधिकार में कर लिया था। काश्मीर की वर्तमान सरकार ने महसूस किया कि जितनी बसें और ट्रकें रियासत में रहगई हैं वे रियासत की आवश्यकताओं-शरणार्थियों को एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाने, भारत से आवश्यक चीजें लाने तथा काश्मीर से फल, रेशम आदि भेजने के लिए पर्याप्त नहीं है अतः सरकार ने ट्रकों व बस सर्विस का राष्ट्रीयकरण करने का निर्णय किया और निजी बसों व ट्रकों को खरीदने के सिवा लगभग २०० नई बसें और खरीदीं। इससे अब रियासत में चीजों के आने जाने पर पूर्ण नियंत्रण है। ऐसा होने से सरकार को पता रहता है कि कौनसी चीज की रियासत में कमी है और कौनसी चीज की कमी नहीं है। रियासत में जिस चीज की कमी होती है उसी चीज को रियासत में लाने की प्राथमिकता दी जाती है।

कला व दस्तकारी को प्रोत्साहन

लड़ाई के कारण गत दो वर्ष से वहां लोग भ्रमण करने नहीं जा रहे हैं अतः वहां लकड़ी तथा कागज पर कढ़ाई करने वालों की रोजी मारी गई। अतः सरकार ने उनकी चीजों को दिल्ली, बम्बई और शिमला में बेचने के लिए दूकान खोल दी हैं। उन चीजो के तैयार कराने वाले व्यक्तियों को सरकार ने इतनी सुविधा दे दी है कि वह अपने ट्रकों से उन स्थानों को

चीजें पहुँचा देती है और उन स्थानों में दूकानें दे देती हैं। इससे ऐसा काम करने वाले मजदूरों को कुछ सहायता मिल गई है।

शरणार्थियों को बसाने का काम

काश्मीर की घाटी के सब शरणार्थी बसाये जा चुके हैं लेकिन जम्मू में लगभग ३० हजार शरणार्थी शिविरों में रह रहे हैं जिन्हें बसाने की ओर सरकार को अब अधिक ध्यान देना चाहिये।

भारत और लद्दाख

गत वर्ष लद्दाख की जनता का एक प्रतिनिधि-मंडल प्रधान मन्त्री प०जवाहरलाल नेहरू से मिला था। नेहरू ने शिष्टमंडल को आश्वासन दिया कि भारत सरकार की हार्दिक इच्छा है कि जम्मू तथा काश्मीर राज्य की प्रादेशिक अखंडता कायम रखी जाय और सारे राज्य को भारतीय संघ में सम्मिलित किया जाय। प्रधान मन्त्री ने कहा कि लद्दाख तो काश्मीर राज्य का अविभाज्य अंग है अतएव वह अवश्य ही भारत का अङ्ग रहेगा।

प्रतिनिधि-मंडल के नेता पाइटोक मठ के प्रधान लामा (कुशुक) थे और उनके साथ लद्दाख के अन्य ७ लोकप्रिय नेता थे।

नेहरूजी के सामने उपस्थित होने पर प्रधान लामा ने एक छोटी प्रार्थना पढ़ी और प्रधान मंत्री की गर्दन पर एक प्रकार का धार्मिक दुपट्टा डाला। शिष्टमंडल के सदस्यों ने भी इसी

प्रकार अपनी भेंट प्रस्तुत की। इसके बाद प्रधान लामा तथा शिष्टमंडल ने अपनी यात्रा का उद्देश्य बताया। उन्होंने कहा कि लद्दाख के सब लोग भारत सरकार तथा भारतीय जनता के प्रति कृतज्ञ हैं कि लद्दाख को अविलम्ब फौजी सहायता भेजी गई।

इस सहायता के फलस्वरूप देश सुरक्षित रह सका और पाकिस्तानी हमलावर मठों को विध्वंस नहीं कर सके प्रतिनिधि-मंडल ने कहा कि भारतीय सहायता के कारण हमारे घर तथा हमारी महिलाओं की इज्जत आबरू की रक्षा हो सकी।

शिष्टमंडल ने आगे चलकर कहा कि हम सब लोगों की हार्दिक इच्छा है कि लद्दाख भारत का अङ्ग रहे। चूंकि यह प्रदेश जम्मू तथा काश्मीर राज्य का एक अङ्ग है अतएव इस रियासत की अखंडता कायम रहनी चाहिए तथा उसे भारत में सम्मिलित होना चाहिये।

नेहरूजी का आश्वासन

लिखित आवेदनपत्र के उत्तर में नेहरू जी ने विश्वास दिलाया कि भारत चाहता है कि सारी जम्मू तथा काश्मीर रियासत भारतीय संघ में सम्मिलित हो। चूंकि लद्दाख उस रियासत का एक अविभाज्य भाग है अतएव वह भारत में ही रहेगा।

नेहरूजी ने इस बात पर सन्तोष प्रकट किया कि लद्दाख के बौद्ध बड़ी संख्या में काश्मीर की राष्ट्रीय सेना में सम्मिलित हो रहे हैं। युद्ध के समय इस सेना ने महत्वपूर्ण कार्य किया था और अब शांतिकालीन कामों में लगी हुई है।

शिष्टमंडल ने अपनी यह इच्छा भी प्रकट की कि पं० जवाहरलाल नेहरू लेह से २४ मील दक्षिण हेमिस मठ में पधारे और अच्छा यह होगा कि वह आगामी वार्षिकोत्सव के अवसर पर आयें। प्रधान मन्त्री ने कहा कि मै निश्चित रूप से वचन तो नही दे सकता किन्तु आशा है कि मै यात्रा कर सकूंगा।



नेहरू जी लद्दाख में

अन्त में प्रधान लामा ने भगवान बुद्ध के शिष्यों के अवशेषों को लद्दाख ले जाने की भी अनुमति मांगी। नेहरू जी ने कहा कि इस मामले पर महाबोधि सोसाइटी विचार कर सकती है, लेकिन भविष्य में कभी लद्दाख की जनता को भी इन अवशेषों के दर्शन का सुयोग मिल सकता है।

लद्दाख

श्रीनगर से आगे १ घंटे २० मिनट की उड़ान के बाद ११ हजार फिट की ऊंचाइ पर एक नया संसार बसा हुआ है। हिच्छादित शैल शिखरों और नंगी चट्टानों से घिरी हुई यह घाटी श्रीनगर की फूलों से लहलहाती घाटी से कितनी भिन्न है! यह लद्दाख है। हिमालय की ऊंची पर्वतमालाओं ने जिन पर बनस्पति का नाम निशान भी नहीं दिखाई देता है, तथा बर्फ से ढकी हुई गगनचुम्बी चोटियों ने इस घाटी को समस्त संसार से इस कठोरता से पृथक रखा है कि यहां संसारिक अपराधों और पापों का अभी प्रवेश भी नहीं हो पाया है।

गत वर्ष प्रधान मन्त्री की लद्दाख यात्रा के समय उनके साथ रहने वाले प्रेस ट्रस्ट के एक संवाददाता ने लिखा था कि अधिकारियों के लिए इस घाटी में जेल बनाने की भी आवश्यकता नहीं पड़ी है।

अभी तक लद्दाख एक विस्मृत देश-सा रहा है। यात्रियों खोज करने वालों और भारत तथा मध्य एशिया, यारकन्द और तिब्बत के बीच आने जाने वाले कारवानों को छोड़कर अन्य कोई बाहरी व्यक्ति शायद ही कभी यहां आया हो। लेकिन भारतीय वायुसेना के वायुयानों ने, जो हिमालय की २३ या २४ हजार फीट ऊंची पर्वतमालाओं को पार करके लद्दाख पहुँचते हैं, श्रीनगर से लद्दाख तक का मार्ग १ घन्टे २० मिनट का कर दिया गया है।

लद्दाख की राजधानी लेह श्रीनगर से प्रायः २४५ मील है और खच्चरों द्वारा पैदल यात्रा में प्रायः १५ दिन लगते थे। यारकन्द प्रायः ५०० मील दूर है और लेह से वहां तक पहुँचने में

२२ दिन लगते, और तिब्बत पहुँचने में ४० दिन लगते थे। लेह यद्यपि ११,५०० फीट की ऊंचाई पर है फिर भी उसका जलवायु सुहावना है। आज कल लेह अन्य भारतीय पहाड़ी स्वास्थ्यप्रद स्थानों की तरह ही मालूम पड़ता है।

लद्दाख की बोली रहन-सहन और वेशभूषा में बड़ा भेद होने पर भी यहां पहुँच कर कोई भी भारतीय अपनापन-सा अनुभव करता है। शहर में हर जगह ऐसे प्राचीन चिन्ह दिखाई पड़ते हैं जो इस सुदूर प्रदेश के साथ भारत का सम्बन्ध प्रकट करते हैं। लद्दाख बौद्धों का केन्द्र है। भगवान बुद्ध की जन्म भूमि भारत के साथ लद्दाखी अपना नैसर्गिक संबन्ध समझते हैं। अनेक सिरों वाले-देवी देवताओं, कांसे की मूर्तियों और प्राचीन हस्तलेखों से मालूम होता है कि लद्दाख पर भारत का बड़ा प्रबल प्रभाव रहा है! लद्दाखी लिपि भी देवनागरी लिपि से सबसे ज्यादा मिलती-जुलती है। लद्दाखियों के लम्बे कोटों चूड़ीदार पाजामों और फ़ंनी जूतों में तथा भारत के कुशान कालीन राजाओं की वेशभूषा में आश्चर्यजनक सादृश्य है उनकी टोपी भारत के साधुओं के टोपे से बहुत कुछ मिलती है। लद्दाखी नृत्यों में भारतीय नृत्य-मुद्राओं की झलक दिखाई पड़ती है, यहां तक कि गांववालों के घर भी पूर्वी पंजाब के लोगों के घरों के से ही होते हैं। आभूषणों, चित्रों नक्काशी के कामों तथा मन्दिर की चित्र-कारी आदि में भी लद्दाख पर भारतीय प्रभाव स्पष्ट प्रकट है।

साधारणतया लद्दाखी अपनी सुरक्षित घाटी में प्राचीन परम्पराओं का अनुसरण करते हुए संतोष के साथ जीवन व्यतीत

करते रहते हैं। लेकिन पाकिस्तानी आक्रमण ने उनके सम्मुख अनेकों कठिनाइयां उपस्थित कर दी थीं। किसानों को अपने खेत जोतना बोना भी कठिन होगया था। कारबार व्यापार बन्द होगया और लद्दाख में प्रत्येक वस्तु के दाम बेहद बढ़ गये थे। एक समय तो शत्रु आगे बढ़ता हुआ लद्दाख के पास १२ मील तक पहुँच गया था। भारतीय सेना ने लद्दाख की भी रक्षा की। अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए लद्दाखी भारतीय सेना में प्रविष्ट हुए। भारतीय सेना ने लद्दाख पर शत्रु का तात्कालिक खतरा देखकर राष्ट्र रक्षक सेना भरती की थी। इनमें भरती होने वाले लद्दाखियों की वीरता देख कर भारतीय सेना के एक अनुभवी योद्धा ने कहा है कि लद्दाखी सैनिक बड़ा कठोर होता है। बर्फ से ऊंची चोटियों पर तो वह इतना कुशल है कि उसकी टक्कर का सैनिक और कहीं नहीं मिलेगा। अब भारतीय सेना मध्य एशिया और यारकंद आदि जाने वाले व्यापारिक मार्गों की दृढ़ता से रक्षा कर रही है और शीघ्र ही व्यापारिक माल से लदे कारवां पहले की तरह फिर आने जाने लगेंगे। कुछ माल वहां पहुँच चुका है और शीघ्र ही यारकन्द से एक कारवां आने वाला है।

साम्प्रदायिक एकता के सम्बन्ध में लद्दाखी सारे संसार को पाठ पढ़ा सकते हैं। लद्दाख में यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि एक ही परिवार में विभिन्न लोग बौद्ध मुसलमान तथा ईसाई हों। धर्म परिवर्तन को वहां आन्तरिक भावना का विषय समझा जाता है।

लद्दाख में हर प्रकार की अंग्रेजी सब्जियां पैदा की जा सकती हैं। लेकिन यहां के लोगों का मुख्य भोजन सत्तू है।

यह एक प्रकार के जौ से बनता है। गेहूँ भी यहां पैदा होता है।

खनिजों की दृष्टि से भी लद्दाख की भूमि सम्पन्न है। सिंचाई की भी बड़ी सद् व्यवस्था है। यदि लद्दाख में स्कूल और कालेज खुल जायें, यदि कपड़ा बुनने के लिए करघे वहां के लोगों को दिये जा सकें और यदि वहां से काश्मीर और भारत तक सड़क बन जाय तो लद्दाख एक धनी और सम्पन्न प्रदेश बन सकता है।

लद्दाखी राजनीति की उलझनों से दूर रहते हैं, परन्तु वे एक बात अवश्य समझते हैं। वे चाहते हैं कि उनका प्रदेश जो जम्मू और काश्मीर राज्य का अखंड भाग है, सर्वदा भारत में सम्मिलित रहे।

लद्दाख के निवासी और उनका सामाजिक जीवन

किम्वदन्तियों और अप्रसिद्धि के धुन्ध से घिरे हुए लद्दाख की वास्तविकता का पता बहुत थोड़े से लोगों को है। इसे बहुधा छोटा तिब्बत भी कहा जाता है। सिन्धु के कछार के ऊपरी अर्द्ध-भाग में यह बसा हुआ है। एक तरफ हिमालय और कुन्नां पर्वतों के बीच तथा दूसरी ओर बालतिस्तान और तिब्बत के बीच, लद्दाख, काश्मीर के पूर्व की ओर स्थित है। काश्मीर की हरीतिमा का यहां सर्वथा अभाव है—केवल नग्न और विशाल शिलाखंड इसे संसार के एक सर्वोच्च पर्वतीय क्षेत्र का स्थान प्रदान करते हैं। यहां के निवासी १२,०००से १५,०००फुट तक की ऊंचाई पर

रहते हैं। इसके पर्वतकी चोटियों की औसतऊंचाई १७,०००और २१,००० फुट के बीच है। कई तो २५,००० फुट तक पहुँच जाती है। इस प्रांत का कुल क्षेत्रफल ३०,००० वर्गमील है।

जलवायु

लद्दाख का जलवायु ग्रीष्मकाल में बहुत गरम तथा शीतकाल में बहुत ठण्डा है। वर्षा की कमी के कारण हरियाली कहीं ही दिखाई देती है। हां नालों और पर्वत कन्दराओं में जंगली पेड़-पौधे उग आते हैं। लद्दाख का समस्त क्षेत्र वनस्पति-विहीन तथा रूक्ष है और बीच में कहीं-कहीं खेत तथा साफ पानी की झीलें दिखाई देती हैं।

लद्दाख साधारण कृषि प्रधान क्षेत्र है। किन्तु बंजर भूमि होने के कारण वहां की उपज से केवल कुछ लोगों का ही भरण-पोषण हो सकता है। रूपशू के पहाड़ी क्षेत्र में लोग साधारणतया भेड़ पालते हैं और भ्रमणशील लोगों का, जो "चांग-पास" कहलाते हैं, जीविका-उपार्जन का यही प्रधान साधन है। वे लोग भेड़ बकरियों के झुण्डों के साथ घूमते फिरते हैं और प्रधानतया दूध-चाय और जौ का आहार करते हैं।

खेतीबाड़ी

लद्दाख में खेती-बाड़ी नहरी सिंचाई पर आश्रित है। खेतों में स्त्रियां भी पुरुषों के साथ काम करती हैं। फसल पकने के समय कुटुम्ब के सारे लोग खेती के काम में जुट जाते हैं। बीच में सब लोग एक साथ बैठकर चाय पीते हैं और भोजन करते हैं। काम करते हुए ये लोग नाच-गाने का क्रम भी जारी रखते हैं। सायंकाल अपने पशुओं को लेकर लद्दाखी अपने घर आजाते

हैं। इस समय स्त्रियां तो भोजन बनाती हैं और पुरुष आमोद-प्रमोद में लिप्त हो जाते हैं जिसमें सुरा का भी दौर चलता है।

जंगली बैल से मिलता-जुलता यहां एक पशु होता है जिसे 'भ्जो' कहते हैं। इससे खेत जोतनेका काम लिया जाता है जो, गेहूँ, मटर, मेथी, तिल, फलियां, शलजम आदि यहां की मुख्य पैदावार हैं। १४,००० फुट की ऊंचाई पर जो और ६,००० फुट से नीचे क्षेत्रों में सेब और खूबानी इत्यादि पैदा होते हैं।

व्यापार केन्द्र

लद्दाख का महत्व उसकी भौगोलिक तथा सैन्य स्थिति के कारण है। प्राचीनकाल से ही एशिया में यह व्यापार-मार्गों का संगम रहा है। तिब्बत और पश्चिमी एशिया तक मध्य एशिया और भारत के बीच व्यापार के मार्ग गुजरते हैं। लद्दाख की राजधानी लेह इन मार्गों का संगम है। प्राचीन काल के समान अब भी विभिन्न राष्ट्रों के व्यापारी लेह की सरायों में इकट्ठे होते हैं और सामान की अदला-बदली करते हैं। यहां पर सिक्यांग से यारकन्दी, कुल्लू और काश्मीर से भारतीय और पुरीग से मुसलमान व्यापार के लिए आते हैं। ईसा से पूर्व भारतीय व्यापार के साथ-साथ भारतीय कला और संस्कृति ने भी इन्हीं मार्गों द्वारा मध्य एशिया और चीन में प्रवेश किया था। वास्तव में बौद्ध धर्म ने लद्दाख के मार्गों से ही तिब्बत में प्रवेश किया था।

मध्य और पूर्वी एशिया के महत्वपूर्ण व्यापार-मार्गों के कारण ही लद्दाख को इतना महत्व प्राप्त है। किन्तु इसकी भौगोलिक स्थिति के कारण इस क्षेत्र को जो सैनिक महत्व प्राप्त हो गया है उसे नहीं भुलाया जा सकता।

आयात-निर्यात

लद्दाख में नमक बहुत अधिक होता है। किन्तु यहां की प्रधान व्यापारिक वस्तु ऊन है जो बहुत बढ़िया किस्म की होती है। इसी ऊन से प्रसिद्ध काश्मीरी दुशाले बनाये जाते हैं। लद्दाख से नमक, ऊन, नौसादर और मेवा का निर्यात तथा चाय, तम्बाकू अनाज, चीनी, दियासलाई का आयात होता है। धर्म-प्रधान क्षेत्र होने के कारण लद्दाख में मूर्तियों तथा पूजा-पाठ की की सामग्री का भी खूब व्यापार होता है।

प्रयत्न करने पर लद्दाख में खानों से सोना, ताम्बा तथा जवाहरात निकाले जा सकते हैं। खिलाड़ियों के लिए भी यहां अच्छे स्थान पाये जाते हैं।

स्वदेश प्रेम

महत्वपूर्ण घटनाओं के कारण लद्दाख के लोगों को लम्बी नींद से जागना पड़ा है। काश्मीर पर पाकिस्तान के आक्रमण से वे सचेत होगये हैं। कितनी ही संख्या में लद्दाखी काश्मीर की राष्ट्रीय सेना में भरती होगये हैं। आज लद्दाख के पास अपनी एक छोटी-सी सेना भी है। प्रधान लामा के नेतृत्व में हाल ही में जो लद्दाखी मण्डल भारत आया था और जो भारत के प्रधान मन्त्री से मिला था। उसने लद्दाख और काश्मीर की एकता पर जोर दिया और अश्वासन दिया कि लद्दाख के बौद्ध काश्मीर रियासत की अखण्डता को अक्षुण्ण बनाये रखने में पूरी शक्ति लगा देंगे।

संसार में मनुष्य के निवासयोग्य अधिक ऊंचे जितने स्थान हैं, उनमें लद्दाख भी एक है। लद्दाख प्रान्त का कोई स्थान ८,००० फुट से कम ऊंचा नहीं है, यद्यपि लद्दाख प्रकृति की

उस छटा से वंचित है, जो काश्मीर में दृष्टि गोचर होती है, फिर भी वहां के उन्नत रेतीले मैदानों और श्वेत प्रस्तरमयी चटटानों की शोभा देखने योग्य है।

लद्दाख विरोधाभासों का देश है। यद्यपि यह असाधारण रूप से ऊंचा है, फिर भी गर्मियों में अत्यन्त गर्म और जाड़ों में अत्यन्त सर्द रहता है। यहां आने जाने के आधुनिक साधन बहुत कम हैं, पर इसकी राजधानी लेह में कई महत्वपूर्ण व्यापारमार्ग मिलते हैं, जो भारत को तिब्बत, यारकन्द और पूर्वी तुर्किस्तान से मिलाते हैं। यद्यपि यह हिम-नदियों का देश है- और सिन्ध नदी इसमें होकर २०० मील तक बहती है, फिर भी इतना सूखा है कि पानी की कमी सदा बनी ही रहती है। यह संसार के एक ऐसे कोने में पड़ा हुआ है, जिसका लोगों को ध्यान भी नहीं आता, वर्ष में लगभग ६ मास तक यह संसार से कटा-सा रहता है, फिर भी यह आश्चर्य की बात है कि यहां के ६० प्रतिशत लोग पढ़े-लिखे हैं।

वेशभूषा, रीतिरिवाज और धर्म

लद्दाख की प्राकृतिक छटा के अनुरूप ही यहां के निवासियों की वेशभूषा है। लद्दाखवासी सीधे सादे, परिश्रमी, अत्यन्त धर्मपरायण, और प्रसन्नचित्त होते हैं। उत्सवों और भोजों के अवसरों पर स्त्रियां सुन्दर वस्त्राभूषण पहनकर नृत्य करती हैं और अपने हावभावों से दर्शकों का मनोरंजन करती हैं।

लद्दाख का धार्मिक और सामाजिक जीवन वहां की आर्थिक स्थिति पर आधारित है यहां की भूमि न तो उपजाऊ है, और न खेतीबाड़ी के योग्य। इसलिए जनसंख्या की वृद्धि पर नियंत्रण

रखना बहुत आवश्यक है। भिक्षु और बहुपति प्रथा से यह उद्देश्य भली भांति पूरा हो जाता है। यद्यपि भिक्षु और भिक्षुणियों का विवाह वर्जित नहीं, फिर भी वे अविवाहित ही रहते हैं।

लद्दाख में विवाह की ऐसी प्रथा है कि सब से बड़े भाई का विवाह होता है, और उसकी पत्नी उससे छोटे सब भाइयों की पत्नी मानी जाती है। उससे जो बच्चे पैदा होते हैं, वे अपने बड़े पिता को 'बड़े पिताजी और छोटे पिता या पिताओं को 'छोटे पिताजी' कहते हैं। लद्दाख में यह प्रथा अनेक शताब्दियों से बनी आ रही है। इसलिए यहां के लोग ऐसे पारिवारिक जीवन को ही सब से अच्छा समझते हैं। इस प्रथा के कारण लद्दाख में जनसंख्या बढ़ने नहीं पाती।

लगभग सभी लद्दाखी बौद्ध हैं। भारत का यही एक ऐसा भाग है, जहां की जनताका प्रधान धर्म बौद्धहै। लद्दाखमें घुसते ही बौद्ध मठों और बौद्ध भिक्षुओं का दृश्य दिखाई देने लगता है। है। गांवों में लड़के और लड़कियां सभी बौद्ध लामा की टोपी पहने हुए दिखाई देते हैं। एक-एक मठ में सैकड़ों लामा (भिक्षु) रहते हैं। कुछ मठ तो गांवों से भी बड़े हैं। कोई गांव ऐसा नहीं जिसमें मठ या बिहार न हो। सम्पन्न लोग अपने घरों में व्यक्तिगत मठ बनवा लेते हैं। लामाओं की संख्या अधिक होते हुए भी लोग उनका आदर करते हैं।

लद्दाख के बौद्ध धर्म और भगवान् बुद्ध द्वारा उपदिष्ट बौद्ध धर्म में तनिक भी समानता नहीं है। लद्दाख का बौद्ध धर्म बहुदेव पूजा का एक काल्पनिक रूप है। जिस प्रकार हिन्दुओं के मन्दिरों में मूर्तियांऔर प्रतिमाएं होती हैं, उसी प्रकार यहां के

बौद्ध भी रखते हैं। उत्सवों के अवसरों पर लोग मठों और विहारों में एकत्र होते हैं और प्रार्थना करते हैं। मठों में कभी कभी नाच गाने और तमाशे भी होते हैं।

स्त्री-स्वातन्त्र्य

लद्दाख में स्त्रियों को काफी स्वतन्त्रता है। परन्तु पारिवारिक पैतृक सम्पत्ति में उनका भाग बहुत कम होता है। इसका कारण यह है कि एक ही उत्तराधिकारी होने से पैतृक सम्पति का बंटवारा कभी होता ही नहीं, और पारिवारिक सम्पत्ति सदा अपरिवर्तित रूप में बनी रहती हैं। स्त्रियां जीवन की समस्त जिम्मेदारियों को अपने पतियों के साथ वहन करती हैं और व्यापार आदि में सहायता देती हैं।

लद्दाखवासियों की, जो 'बोटी' कहलाते हैं, कुछ ऐसी परम्पराएं हैं, जो उनको अपने पड़ोसियों से पृथक करती हैं। इन परम्पराओं पर बौद्ध धर्म की इतनी गहरी छाप पड़ी है कि उनके सामाजिक रीति-रिवाजों, उत्सवों, मनोरंजनों और रहन-सहन के ढंगों में सर्वत्र धार्मिक भावना मौजूद रहती है। बाल्टियों से, जो कि बोटियों के पड़ोसी हैं, बोटियों का जीवन-मान अधिक ऊंचा है। बोटी बड़े सन्तोषी होते हैं, इसीलिए वे सदा प्रसन्न, हंसमुख और हर काम के लिए तैयार रहते हैं। वे बड़े विनोदप्रिय होते हैं। विनोद उनके दैनिक जीवन का एक अंग है।

भारतीय सेना लद्दाख में

—:★:—

भारतीय सेना ने लद्दाख सीमान्त को दृढ़ता पूर्वक दो युद्ध क्षेत्रों से घेरा था जिनमें पहिला क्षेत्र सिन्धु नदी का था और दूसरा सेवक नदी का। यह दोनों नदियां ही काश्मीर के पूर्वी सीमान्त लद्दाख की मुख्य नदियां हैं और लद्दाख में घुसने और उससे बाहर निकलने अथवा लद्दाख से दूसरे प्रान्तों के साथ सम्बन्ध जोड़ने और यात्रा करने के साधन हैं। दोनों ही युद्ध क्षेत्रों पर भारतीय सेना की अग्रिम पंक्ति लद्दाख की राजधानी लेह ऊंचाई लग-भग १२००० हजार फुट समुद्र धरातल से १०० मील से कम नहीं है। पाठकों को यह कल्पना करके भी आश्चर्य होगा कि राजधानी से दूर १६००० हजार और कभी २ १८००० फीट ऊंचाई के पर्वतों पर किस प्रकार सेना को उसकी आवश्यक सामग्री भेजी जाती रही है जबकि सारी पहाड़ियां वर्ष के सम्पूर्ण दिनों में बरफ से लगातार घिरी रहती है फिर भी यह सारा कार्य भारतीय सेना के उत्साह एवं लद्दाखी मजदूरों के परिश्रमी स्वभाव तथा अपने प्रदेश की रक्षाकी लगन ने इस महत्व पूर्ण कार्य को बड़ी योग्यता से पूरा किया। लद्दाख में भारी सामान को इधर उधर ले जाने के लिये विशेष रूप से याक (जोकि गौ और याक एक पुंस्त्व जाति के संयोग से उत्पन्न बड़े बालों का एक बड़ा मजबूत जानवर होता है। तथा गदहे और ऊंटों से काम लिया जाता है। लद्दाख के इन दोनों युद्ध क्षेत्रों पर रहने

वाली भारतीय सेना की जितनी भी प्रशंसा की जावे थोड़ी है। क्योंकि केवल थोड़े से स्थान को छोड़कर जिसमें सिन्ध एवं उसकी सहायक नदियों का पानी प्राप्त है सारा २,३ भाग सूखा उजाड़ और नंगे पहाड़ों की तरह है। शीत ऋतु में शीत का अनुमान करने के लिए यही पर्याप्त होगा कि बरतनों में रखा हुआ पानी तक जम जाता है। पानी की आवश्यकता में बरफ को आग के सहारे से पिघला कर ही पानी को काम में लाया जाता है। और ठन्ड एक अपरिचित व्यक्ति के लिए तो उसकी हड्डियों तक को निष्क्रिय बना देने का समर्थ रखती है। लद्दाख की ग्रीष्म ऋतु यद्यपि सुहावनी होती है परन्तु सेना के लिए वहां किसी प्रकार का मनोरंजन प्राप्त नहीं हो सकता न तो वहाँ कोई सिनेमा को जानता है और न अखबार को जबकि मैदानों में वह दोनों सुविधाएं सेना को प्राप्त होजाती हैं। लद्दाख में गरमी की ऋतु में भी ईंधन को प्राप्त करना कितना कठिन है यह वहां पर गये हुए दर्शकों को पहली बार में ही अनुभव हो सकता है दो २ तीन २ मील नीचे सिन्ध नदी के किनारे से लकड़ियां लाकर ही वहां के निवासी बड़ी मितव्ययिता से कार्य चलाते हैं फिर शीत ऋतु में तो लकड़ी के मूल्य का अनुमान करना भी कठिन है।

इन उपर्युक्त सारी कठिनाइयों की क्षति पूर्ति भी इस प्रकार होते देख भारतीय जवान को हर्ष होता है कि सारे लद्दाख के रहने वाले लोगों का वह मेहमान बना रहता है सभी लोग भारतीय सैनिक का स्वागत करके अपने को कृत कृत्य समझते हैं। प्रत्येक भारतीय सिपाही को उसकी आशा से अधिक अव-

घरों पर निमन्त्रण प्राप्त होते रहते हैं बल्कि फौजी अनुशासन की कठिनाई के कारण उन प्राप्त हुए सभी निमन्त्रणों में सम्मिलित होना उसके लिए कठिन पड़ता है। परिणाम यह होता है कि वह अपने को आतिथ्य देने वाले सभी व्यक्तियों को सन्तुष्ट नहीं कर पाता जिस कारण उसे कभी २ लज्जित तक होना पड़ता है। लद्दाख के निवासी केवल भोजन को ही अतिथी सत्कार नहीं समझते वह उसकेसाथ संगीत तथा नृत्यको भी एक आवश्यक अङ्ग समझते हैं। लद्दाखी लोगों की अपनी निजी भाषा है जोकि भारतीय तो क्या स्वयं काश्मीर घाटी के लोग तक भी भली भांति नहीं समझ सकते परन्तु बहुत से लद्दाखी टूटी फूटी हिन्दुस्तानी समझ लेते हैं इसका प्रधान कारण है कि कुछ पञ्जाब के व्यापारी वहां प्रतिवर्ष व्यापार के लिए जाते हैं जिनके सम्पर्क से वह साधारण बोल चाल समझ ही लेते हैं इसी प्रकार बहुत से भारतीय सैनिकों ने पर्याप्त समय से यहां के व्यक्तियों के सम्पर्क में रहने के कारण लद्दाखी भाषा का अच्छा अभ्यास कर लिया है। जबतक १६४८ के नवम्बर मास में भारतीय शाही हवाई सेना के द्वारा दुर्गम पर्वतों में सहायता नहीं पहुँच सकी थी तब तक थोड़े से मुट्ठी भर भारतीय सैनिकों को जिन कठिनाइयों का उस दूर प्रदेश में सामना करना पड़ा वह इतनी ज्यादा हैं कि उनका गिनना कठिन है। लद्दाख प्रान्त की दुर्गम पहाड़ियों के मार्गों की कठिनाइयां इसमें कारण हैं कि हम आज वहां पर किये गये भारतीय सेना के कार्य से अपरिचित हैं और उसकी प्रशंसा नहीं करते। हमारी किसी प्रकार की आवाज भी हिमालय की ऊंची चोटियों के पार लद्दाख में नहीं पहुँच पाती। जिन्होंने कि लद्दाख को सारे संसार से अलग कर रखा है।

लद्दाख में भारतीय सेना के पहुँचने की कहानी काश्मीर आक्रमण के दो महीने बाद से शुरू होती है अर्थात १९४८ के आरम्भ में जब स्कर्दू (लद्दाख की एक उत्तरी सीमा की तहसील आक्रमणकारियों द्वारा घेर ली गई थी और द्रास व कर्गिल भी करीब २ हाथ से निकल चुके थे उस समय कर्नल पृथ्वीचन्द्र की अध्यक्षता में केवल २० डोगरा सिपाहियों को लेह (लद्दाख की) राजधानी में भेजा गया था ताकि वह स्वयं लद्दाखी लोगों की एक फौज वहां पर तय्यार करलें। कर्नल पृथ्वीचन्द्र वहां की भाषा और रीतिरिवाजों से भली भांति परिचित था उसने वहां के शान्तिप्रिय बुद्ध धर्मावलम्बी नौजवानों को भर्ती करके राइफल की ट्रेनिंग देनी शुरू करदी थी। यह ऐसा कठिन समय था जबकि शत्रु लद्दाख के दरवाजे पर नहीं उसके घर में भी घुस चुका था। कर्नल पृथ्वीचन्द्र ने बड़े साहस के साथ इधर उधर से सैनिक सामग्री संग्रह करके ८० सैनिकों का संगठन कर लिया जिसके द्वारा अब उसको ३०००० हजार मील के क्षेत्र की रक्षा करनी थी। साथ ही शीत ऋतु की प्रधानता के कारण भारतसे यातायात की असुविधा के कारण सामग्री का आना जाना भी बन्द हो चुका था कर्नल पृथ्वीचन्द्र को सैन्य सामग्री के अतिरिक्त खाने तक के लिए लद्दाखी जनता की छोटी-मोटी अन्न सामग्री पर ही आश्रय लेना पड़ा। उस समय तक हवाई मार्ग तो निश्चित नहीं था। और भूमिमार्ग शत्रु ने काट दिया था केवल एक कुल्लू मनाली वाला सैकड़ों मीलका गैर आबाद उजाड़ रास्ता शेष था जो कि बरफ से बन्द हो चुका था।

हां कई महीने की प्रार्थना और आशाओं के बाद मई १९४८ में हवाई सेना के अफसर मेहरचन्द्र जम्मू काश्मीर में भारतीय सेना के अध्यक्ष मेजर जरनल के० एस० थिमय्या के साथ अपने विशेष उपायों द्वारा एक मार्ग निश्चित करके शीघ्रतासे बने हुए एक अस्थायी हवाई स्टेसन जो कि समुद्रतल से ११५५४ फुट ऊंचा था कुछ सामग्री लेकर अपना हवाई जहाज उतारने में सफल हो सके थे। यही हवाई जहाज था जिसने लद्दाख में भारतीय सेनाओं का यश और लद्दाख के निवासियों का भविष्य बना दिया। यहां पर यह एक कहानी सी बन गई है कि मेहरसिंह के हवाई जहाज लेकर उतरने से २ दिन पूर्व से सारे लद्दाख के धर्म गुरु लामाओं और जनता ने दिन रात निरन्तर भारतीय सेना की विजय के लिए अखण्ड प्रार्थनाएं और जप व्रत अनुष्ठान तक करने शुरू कर दिये थे। बहुतसों ने तो पुरानी कहावतों के आधार पर भारतीय आकाश सेना के हवाई जहाज को पहिले समय का पंखों वाला घोड़ा समझ कर घास और दाने तक का प्रबन्ध किया यह भी सुनाजाता है।

मेजर जनरल थिमय्या ने जब लद्दाख में जाकर स्थिती का अध्ययन किया तो उन्होंने आकाशमार्ग द्वारा बहुत सी गुरखा सेना को वहां की सेनाशक्ति बढ़ाने के लिए भेजा। उस समय तक भारतीय सेना के पास किसी प्रकार की चिकित्सा की सहा, यता तो क्या गर्म कपड़े तक न थे और वह केवल लद्दाखी जौ से बने हुए सत्तू खाकर दिन बिताते थे जो कि उनके स्वभाव के लिए एक बिल्कुल नई चीज थी। कर्नल पृथ्वीचन्द के लिए यह बड़ा कठिन काम था कि वह एक साथ युद्ध क्षेत्र को भी

सम्भाले और वहां से फौज भर्ती करके उसे शिक्षित भी करे। ऐसे समय में भारतीय सेना के अफसरों ने यह विचार किया था कि वह एक बहुत बड़ी गोरखासेना मनाली के रास्ते लेहको भेजें। यह सेना लगातार २५ दिन का मार्ग तै करके उसी गैर आबाद उजाड़ मैदान को पार करके १० जुलाई ४८ को मेजर हरिचन्द्र की अध्यक्षता में लेह पहुँची। इस समय भारतीय सेना को दो युद्ध क्षेत्रों पर शत्रु का सामना करना पड़ रहा था। एक तरफ तो वह सिन्ध नदी को घाटी में दूसरी तरफ सेवक नदी की घाटी में शत्रु सेना को आगे न बढ़ने देने के लिये प्रयत्न में लगे हुए थे। शत्रु सेना की सामग्री स्कर्दू से प्राप्त होने पर लड़ाई ने कुछ उग्ररूप धारण करलिया जिसका परिणाम यह निकला कि सेनाको बड़ी योग्यतासे उसे पीछे हटाना पड़ा। क्योंकि स्कर्दू तो पहिले ही काश्मीर राज्य के सेनाध्यक्ष कर्नल शेर जंग की अध्यक्षता में बड़ी बहादुरी से रक्षा करने पर भी शत्रुओं के हाथ में जा चुका था।

शत्रु सेना की बढ़ती हुई शक्ति और अपनी सामग्री की प्राप्ति का कोई साधन न देख भारतीय सेना सिन्ध युद्धक्षेत्र में ५० मील पीछे की तरफ घूमकर सेथारू को चली आई। और इसी प्रकार उसने सेवक नदी के युद्ध क्षेत्र में भी अपनी स्थिति को ठीक किया। इसका परिणाम यह निकला कि शत्रु सेना सिन्ध नदी के युद्ध क्षेत्र में लेह से केवल १२ मील और सेवक नदी के युद्धक्षेत्र में लेह से ६० मील पर रह गई थी। इस गम्भीर अवस्था को दृष्टि में रखकर कर्नल एच० एस० परब की अध्यक्षता में एक और कम्पनी जिसका कुछ भाग आकाश मार्ग से

और शेष मनाली के रास्ते से लेह को भेजदिया गया इस प्रकार सारी फौज का १० सितम्बर १९४८ तक लेह में केन्द्रीकरण किया गया। इस समय तक शत्रु सेना को आगे बढ़ने से रोकने के लिए यद्यपि पर्याप्त सैन्य शक्ति लद्दाख पहुँच गई थी तथापि सामग्री के भेजने की व्यवस्था अबतक भी न हो पाई थी आकाश मार्ग से हवाई जहाज को २५००० फीट ऊंचाई पर उड़कर जाना पड़ता था, इस प्रकार शीत ऋतु के आठ महीनों के लिए पर्याप्त सामग्री का पहुँचाना किसी भूमि मार्गके अभावमें एक बहुत कठिन काम था। मनाली के मार्ग से भेजी हुई सामग्री मार्गकी कठिनाई और दूर होने के कारण केवल १ मास के लिए भी पर्याप्त होना कठिन था शत्रु सेना ने इस कठिन अवस्था से लाभ उठाने के बहुत से व्यर्थ प्रयत्न किये जिससे कि वह भारतीय सेना की पंक्ति में आकर घुस सके परन्तु भारतीय सेनाओं ने बड़ी बहादुरी के साथ न केवल अपनी रक्षा की अपितु शत्रुओं को पीछे तक हटा दिया। इस प्रकार की सफलता को देख मेजर हरिचन्द ने अपनी एक गुरिल्ला फौज की टुकड़ी के द्वारा थारू से ९ मील आगे बारगो पर जहां कि शत्रु सेना के ६ सिपाही एक पर्वतीय बन्दूक को भारतीय सेना के हवाई मार्ग को नष्ट करने के लिए ठीक स्थान पर लगा रहे थे चढ़ाई करदी केवल एक छोटे से लद्दाखी बच्चे की सहायता से मेजर हरिचन्द ने उस घर पर छापा मारा और ६ में से ५ शत्रुओं को मौत के घाट उतार कर एक को घायल अवस्था में यह सारी कहानी के वर्णन के लिए छोड़ दिया। आज की भयानक ठंड में लगातार तीन दिन भूखे रहकर मेजर जनरल हरिचन्द अन्तिम में अपने लक्ष्य स्थान पर पहुँच ही गये। इसके बाद अब इधर में तो हरिचन्द का नाम

हरएक आदमी की जबान पर चढ़ गया था। अबकी बार उसने अपनी विजय का केन्द्रस्थल लेह से ६० मील दूर श्रीनगर लेह-रोड पर स्थित लामायारू नामक स्थान को बनाया था। ६० मील का मार्ग भी हरिचन्द के सैनिकों को शत्रु सेना से बचकर जाने के कारण लगभग ९० मील ले करना पड़ा। इसी समय हरिचन्द ने एक बहुत बड़ी युद्ध सामग्री को ले जाता हुआ खिच्चरों का समूह सात सिपाहियों के सहित नष्ट कर दिया। जिसके द्वारा कुछ ही देर बाद यह सामग्री शत्रु सेना के हाथ में पहुंचने से स्वयं हरिचन्द के सिपाहियों पर हमला किया जाना था। इस प्रकार की अनेकों घटनायें लद्दाख की युद्ध भूमि में भारतीय सेना के साथ हुईं। साधारणतया विद्वानों का यह मत था कि लद्दाख में भयंकर युद्ध नहीं होगा परन्तु फिर भी इस प्रकार के सैकड़ों संघर्ष निरन्तर होते रहे जिनके ऊपर लद्दाख का भविष्य निर्भर था। साथ ही साथ लद्दाख के रहने वालों की अमूल्य सहायता ने ऐसे बहुत से कठिन समयों में शत्रु सेना की योग्यता को मात कर देने के लिए भारतीय सेना का साथ दिया।

युद्ध भूमि की कठिनाई का यह दौर तब ही दूर हो सका जब कि ब्रिगेडियर अटल ने अपने टैंकों की सहायता से नवम्बर ४८ में जोजीला दर्रे के रास्ते से लद्दाख का काश्मीर से फिर सम्बन्ध स्थापित कर दिया। इसी समय चार सौ शत्रु सैनिक सिन्ध के क्षेत्र में और ३०० सैनिक रोबक के क्षेत्र में भारतीय सेना का मुकाबला करते हुए भाग खड़े हुए क्योंकि पीछे से उन्हें घिर जाने का खतरा पैदा हो चुका था। नवम्बर में ही यह कार्य पूरा होने पाया था कि दिसम्बर के अन्त में ३१ और एक

जनवरी ४९ की रात्रि को युद्ध विराम सम्बन्धी सुरक्षापरिषद् के प्रस्ताव ने लद्दाख सूबे की लद्दाख तहसील जिसका क्षेत्र फल ३०००० हजार वर्ग मील और जन संख्या ३६ हजार एवं कर्गिल तहसील जिसका क्षेत्र फल ७३९२ वर्ग मील और जन संख्या ५२८४३ है भारतीय सैनिकों के हाथ छोड़ा और केवल स्कर्दू की तहसील को जिसका क्षेत्रफल ८५२२ वर्ग मील एवं जनसख्या १ लाख ६ हजार दो सौ ७१ है शत्रु सेना के हाथ में छोड़ा है। इसी समय से सुना जाता है कि शत्रु सेना ने एक मोटर जीप के चलने के योग्य मार्ग भी पाकिस्तान से सिन्ध नदी की घाटी में होकर गिलगित और वहां से स्कर्दू तक बना लिया है।

भारतीय सेना के मोर्चे

लद्दाख की रक्षा के लिए इसकी राजधानी लेह से १०० मील आगे १५ या १६ हजार फुट की ऊंचाई पर भारतीय सैनिकों ने मोर्चे जमा रखे हैं। भारतीय सैनिकों को रसद सामग्री पहुँचाने के लिये प्रायः १८ हजार फुट ऊंचे निरन्तर बर्फ से ढके पहाड़ी दर्रों के मार्ग से जाना पड़ता है। परन्तु कर्त्तव्यपरायण लद्दाखी कुलियों और विभिन्न पहाड़ी पशुओं (टट्टू, याक आदि) की सहायता से रसद पहुँचाने की समस्या हल हो गई है। इस समय सिंधु और सेवक दोनों नदियों के मोर्चों पर डटे हुए भारतीय सैनिकों के कारण लद्दाख पूरी तरह सुरक्षित है।

सैनिकों की कठिनाइयां

लद्दाख के वनस्पति शून्य नंगे पहाड़ों पर भारतीय सैनिक बड़ा कठोर जीवन व्यतीत करते हैं। सिंधु तथा अन्य नदियों के

पास के थोड़े से क्षेत्र को छोड़ कर सारा प्रदेश नंगी चट्टानों से भरा है। शीतकाल में तापमान शून्य से भी नीचे रहता है। भयंकर सर्दी के कारण भारतीय सैनिक कुड़कुड़ा जाते हैं। जलाने के लिए लकड़ी कठिनता से मिलती है। गर्मी के दिनों में मौसम कठोर नहीं होता लेकिन सर्दी हो या गर्मी, भारतीय सैनिक को वहां किसी की भी प्रकार सुविधा कहां है। वहां न सिनेमा है, न भोजनालय और न समाचार पत्र, न विनोद के अन्य साधन। लेकिन उसे सन्तोष है कि वह अपने मित्रों के बीच में है। लद्दाखी लोग भारतीय सैनिकों से बड़ा प्रेम करते हैं। उन्हें भोजन, संगीत और नृत्य आदि के लिये लद्दाखियों से इतने निमन्त्रण मिलते हैं कि वे सब को स्वीकार भी नहीं कर पाते। कितने ही लद्दाखी हिन्दुस्तानी बोल लेते हैं और बहुत से भारतीय सैनिकों ने लद्दाखी सीख ली है।

लद्दाख कैसे बचाया गया

लद्दाख की रक्षा के लिये भारतीय सैनिकों की वीरता का अध्याय १९४८के प्रारम्भिक कालसे आरम्भ होता है। स्कर्दू को शत्रु ने घेरलिया था। और द्रास तथा करगिल का पतन हो चुका था। इन घटनाओं के ठीक पहले ही लेफ्टिनेंट कर्नल पृथ्वीचन्द २० डोगरा सैनिकों को साथ लेकर लद्दाखियों को अधिक से अधिक संख्या में भर्ती करने के उद्देश्य से लेह गये थे। उन्होंने अहिंसक बौद्धों को राइफल चलाना सिखाना आरम्भ किया। शत्रु, लद्दाख के द्वार तक पहुँच चुका था। अपने थोड़े से सैनिकों और द्रास तथा करगिल की रियासती सेना के बचे खुचे सिपाहियों सहित उनके पास कुल ८० सैनिक थे, जिनकी सहायता और वीरता के

बल पर उन्हें ३० हजार वर्गमील भूमि की रक्षा करनी थी। इन सिपाहियों को भारत से या काश्मीर से रसद नहीं पहुँचाई जा सकती थी। हवाई मार्ग कोई था ही नही और स्थल मार्ग शत्रु ने अवरुद्ध कर रखे थे। मनाली मार्ग बर्फ से ढका पड़ा था। उनके पास गोलाबारूद भी बहुत थोड़ा था। भोजन सामग्री में जो रोटी कुछ स्थानीय लोग बचा खुचा कर उन्हें देते थे, वही उन्हें प्राप्त होती थी।

हवाई मार्ग निकाला

मई १९४८ में काश्मीर और लद्दाख की भारतीय सेनाओं के कमांडर मेजर जनरल थिमय्या को लेकर एयर कमांडर मेहर-सिंह ने एक हवाई मार्ग निकाला। वे लेह में समुद्रतल से ११, ५५४ फुट ऊंचाई पर शीघ्रता के साथ तयार किये गए हवाई उतरण स्थल पर उतरे। लद्दाख के इतिहास में यह घटना क्रांति-कारी थी।

स्थानीय किंवदन्तियों के अनुसार जब लद्दाख के सारे लामाओं ने भारतीय सेना की विजय के लिये अनवरत प्रार्थना और उपवास शुरू कर दिया, उसके तीसरे ही दिन श्री मेहरसिंह लेह में उतरे।

स्थानीय परिस्थितियों का अध्ययन करके जनरल थिमय्या ने गुर्खों की एक टुकड़ी वायुयान द्वारा लेह भेजी। इसके बाद शत्रु का खतरा बढ़ता देख कर भारतीय सेना के अधिकारियों ने निश्चय किया कि लेह में और बड़ी टुकड़ी भेजनी चाहिये।

इसलिए मनाली के मार्ग से गुर्खों की एक और टुकड़ी भेजी गई। २५ दिन की यात्रा के बाद १० जुलाई को यह लेह पहुँची।

स्कर्दू का पतन

भारतीय सेना को सिन्धु नदी के तथा सेवक नदी के मोर्चों पर लड़ना पड़ रहा था। शत्रुओं ने भी और सेना मंगाई और लद्दाख पर और भी जोरों से आक्रमण किया अगस्त में स्कार्दू पर भी शत्रु ने कब्जा कर लिया। सिन्धु नदी के मोर्चे पर भारतीय सेना ५० मील पीछे हट आई। सेवक के मोर्चे पर भी उसे कुछ पीछे हटना पड़ा। सिन्धु मोर्चे पर शत्रु लेह से १२ तथा सेवक मोर्चे पर ६० मील दूर रह गया था।

लेफ्टिनेंट एच० एस० परब के तत्वाविधान में गुर्खों की एक टुकड़ी फिर वायुयान द्वारा लद्दाख भेजी गई और बाकी बटालियन मनाली के मार्ग से गई। १७ सितम्बर १९४८ तक सारे सैनिक लेह पहुंच गए उन्हें रसद पहुँचाने के लिये वायुयानों को समुद्रतल से २५ हजार फुट ऊंची उड़ान करनी पड़ती थी जाड़े के सात महीनों के लिये सामग्री जमा करना महा कठिन कार्य था।

शत्रु ने भारतीय सेना की इन कठिनाइयों से लाभ उठा कर आगे बढ़ने की बहुत कोशिश की पर उसे सफलता नहीं मिली भारतीय सेनाओं ने न केवल शत्रु के आक्रमण विफल कर दिये बल्कि कितने ही बार सफल आक्रमण भी किये। मेजर जनरल हरिचन्द्र ने शत्रु के एक दल पर आक्रमण कर दिया जो लेह पर गोला बारी करने और हवाई अड्डे को नष्ट करने के लिए एक तोप लिए जा रहा था। मेजर हरिचन्द्र ने तोप चलाने वाले ६ में से ५ व्यक्तियों को मार दिया और तोप को नष्ट कर दिया। इसके बाद वहां की कड़ाके की सर्दी में तीन दिन भूखे रह कर अपने छापा मार सैनिकों सहित वे अपने केन्द्र में वापस आ

गये अक्तूबर में भी मेजर हरिचन्द्र ने इसी प्रकार कुछ छापामार सैनिकों के साथ शत्रु के एक दल पर आक्रमण करके उसे नष्ट कर दिया। यह दल रसद और गोला बारूद टट्टूओं पर लाद कर ले जा रहा था। लद्दाख में कोई बड़ी लड़ाई तो हो नहीं सकती थी लेकिन वहां बराबर ऐसी मुठभेड़ें होती रहीं जिन पर लद्दाख का भविष्य निर्भर था। नवम्बर में ब्रिगेडियर के० एल० अटल की सहायता से आगे बढ़ते हुए सैनिक लेह स्थित सैनिकों से आ मिले। शत्रु को सिन्धु और रोंवक दोनों मोर्चों पर पीछे हटना पड़ा।

जब १ जनवरी १९४९ का युद्ध बन्दी आदेश जारी हुआ उस समय लद्दाख तहसील जिसका क्षेत्र फल प्रायः ३०,००० वर्ग-मील तथा जन संख्या प्रायः ३६,००० है और करगिल तहसील जिसका क्षेत्रफल ७,३९२ वर्गमील और जनसंख्या ५२,८५३ है भारतीय सेना के अधिकार में थी। स्कर्दू तहसील जिसका क्षेत्र-फल ८५२२ वर्गमील और जनसंख्या १,०६,२७१ है, शत्रु के अधिकार में थी।

गिलगित और वहाँ की प्रजा

❀ जहां लोग २८० वर्ष पुराना घी खाना पसन्द करते हैं,

❀ जहां मस्जिदों पर मीनारें नहीं होतीं,

❀ जहां भाषा लिखी नहीं जाती, केवल बोली जाती है

❀ जहां केवल एक गर्ल-स्कूल है और एकही जूनियर हाई स्कूल है

❀ जहां अधिकांश लोगों को दोनों समय रोटी नहीं मिलती,

—सभ्य जगत की रोशनी से दूर उस गिलगित प्रदेश और वहां के लोगों का मनोरंजक वर्णन इस लेख में पढ़िये।

आर्यों और सीथियनों के वंशज यशकुन और शीन की मातृ-भूमि, जिसे इतिहास दर्दिस्तान के नाम से जानता है, शासन के निमित्त गिलगित एजेंसी तथा बाल्टिस्तान कहलाती है। कराकोरम, हिमालय तथा हिन्दूकुश की पर्वत मालाओं से यह स्थान घिरा हुआ है। गगनचुम्बी नंगा पर्वत की हिमाच्छादित चोटियों का इसके मस्तक पर वरद हस्त रखा है। प्राकृतिक झरनों से प्राप्त जल को पीने वाले इसी ही घाटी के नागरिकों को २०० वर्ष पुराने घी को स्वाद से खाना पसन्द है।

सामरिक दृष्टि से यह स्थान अति महत्वपूर्ण है। रूस, चीन तथा अफगानिस्तान का यह सीमान्त है।

शांति प्रिय लोग

दर्दिस्तान के कबाइली पठानों की भांति यहां के लोग युद्ध-प्रिय नहीं है। ये शांति प्रिय हैं और थोड़ा बहुत यदि कोई तंग भी करे तो वे विचलित नहीं होते। यहां के लोगों में तीन संस्कृतियों का समावेश है। बौद्ध, चीनी तथा ईरानी। यहां पर मन्दिर और मस्जिदों को दर्शन मात्र से पहचानना सम्भव नहीं है क्यों कि यहां की मस्जिदों पर मीनारें नहीं होतीं और रहने के घर तथा देवालय एक से ही लगते हैं। उनकी भाषा लिखी नहीं जाती और एक जिले से दूसरे जिले में बोली बदल जाती है। किन्तु हिन्दी या हिन्दुस्तानी यहां पर साधारण भाषा के रूप में है, उसे काफी लोग समझते हैं।

प्राचीन आदतें

भारत से इस्लाम का प्रचार यहां भी हुआ और काफी संख्या में लोग मुसलमान बन गये। किन्तु भारत के तास्सुबी (मतान्ध) मुसलमान का यहां पता भी नहीं है। जिस प्रकार भारत के मुसलमान को देखकर ही पहचाना जासकता है, यहां के बौद्ध, चीनी, और ईरानियों में कौन मुसलमान है कौन नहीं, यह नहीं पहचाना जा सकता। यहां पर इस्लाम के आने से पूर्व, जिसे सम्भवत: २०० वर्ष से अधिक नहीं हुए, जो रीति रिवाज थे उनमें अब भी कोई विशेष अन्तर नहीं आया है। यहां के निवासियों की प्राचीन आदतों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। जो स्थानीय विशेष त्योहार मनाये जाते हैं, उनमें देहाती नृत्य विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

शिक्षा और राजनीति में यह प्रदेश शेष संसार से बहुत ही पिछड़ा हुआ है। आश्चर्य नहीं होगा यदि आज दुनियां के बहुत से नवीन आविष्कारों की कल्पना भी यहां के लोग न कर पायें।

वर्ष में लगभग ७ मास तक शेष संसार से दर्दिस्तान का सम्बन्ध टूट जाता है, क्योंकि यहां पहुँचाने वाले सिर्फ दो ही मार्ग हैं। एक बुर्जिल दर्रे से श्रीनगर घाटी को और दूसरा बाबूसार दर्रे से पेशावर को, और वे भी बर्फ से रुक जाते हैं। जब तक वायुमार्ग चालू नहीं हुआ था, श्रीनगर से गिलगित पहुँचने में १२ दिन लगते थे। इतना ही समय पेशावर से यहां पहुँचने में लगता था।

इस प्रकार दुनिया से दूर यहां के लोग दुनियां के साथ आगे नहीं बढ़ सके। बहुत कम लोग ऐसे होंगे जो बाहरी संसार के बारे में कुछ भी ज्ञान रखते हों। जो कुछ भी ज्ञान इन लोगों को प्राप्त होता है वह सिन्क्यांग तथा भारत से जाने वाले यात्रियों द्वारा ही होता है। डोगरा राज्य के शासी पुराने काल में शिक्षा की प्रगति इतनी ही हुई कि कतिपय प्रारम्भिक स्कूल खुल गये। ब्रिटेन की छत्रछाया का भी कोई विशेष लाभ नहीं हुआ था। आज भी समस्त गिलगित एजेंसी में कुल प्रारम्भिक स्कूलों की संख्या ६० है। दो मिडिल स्कूल भी हैं और सिर्फ एक जूनियर हाई स्कूल है। एक कन्या विद्यालय है गिलगित खास में।

निर्धनता सर्वव्यापक

गिलगित निवासियों की आर्थिक स्थिति और भी हीन है। निर्धनता का रूप सर्वव्यापी है। २ लाख में से अधिकांश व्यक्तियों को एक जून पेटभर रोटी मिल जाय, यह भी प्रसन्नता की बात है। सर्दियों के छः मास में तो स्थिति और भी शोचनीय हो जाती है। यहां के लोग शीत के कारण घर से बाहर तो निकल नहीं सकते, इस लिए मिट्टी और पत्थर से बनी झोपड़ियों में ही रहना पड़ता है। आमतौर पर एक परिवार के पास एक ही कम्बल होता है जिसमें गर्मी प्राप्त करने के लिए पति, पत्नी तथा बच्चे सिकुड़-सिकुड़ कर अन्दर बने रहने के प्रयत्न में रात काट देते हैं।

मई मास में जब शीत की कमी हो जाती है तो सूर्य की भली किरणों के आगमन के साथ वे अपने खेतोंपर कार्य करने निकल पड़ते हैं। आजकल पाकिस्तानी कठोर शासन में भयातुर लोग आगामी शीत काल के लिए सामान एकत्र करने में छः मास निकाल देते हैं।

शोषित किसान

इस क्षेत्र का आर्थिक आधार कृषि है। किन्तु सामन्तवादी समाज में सब स्थानों की भांति यहां भी अधिकांश भूमि पर राजाओं और जागीरदारों का स्वत्व है! किसानों के पास छोटी-छोटी भूमि के टुकड़े हैं। डोगरा शासकों के बाद इन दिनों के पाकिस्तानी पिट्ठुओं के राज में भी किसान जीवन और जगत में उत्साह खो बैठा है। वह प्रवीणता से खेती का काम नहीं कर सकता। उसके बाहुओं में शैथिल्य व्याप्त हो गया है। कृषि से इतना खाद्यान्न उत्पन्न नहीं हो पाता कि वर्ष भर वहां के लोग घर में बैठ कर खा सकें। इस लिए खुराक पूरी करने में फलों का का काफी भाग रहता है। फिर भी यदि बाहरी सहायता नहीं मिलती, जैसा कि अब दो वर्ष से हो रहा है, तो उनके परिवार हिमाच्छादित टेकड़ियों के नीचे दब कर सदा के लिए शान्ति से सो जाते हैं

गरीबी की अति

गरीबी की अति के सम्बन्ध में एक मनोरंजक कहानी प्रसिद्ध है। गुरेज घाटी में निर्धनता के कारण हर छः मास पीछे मुसलमान लोग अपना धर्म परिवर्त्तन कर लेते हैं। गर्मियों में एक अमरीकी ईसाई मिशन यहां आता है वह अपने साथ खाने का सामान भी लाता है तो वह मुसलमानों को ईसाई पाता है। किन्तु ज्योंही शीत आरम्भ होता है वे पुनः मुसलमान हो जाते हैं।

डोगरा शासन के अन्त होने पर भी आज यहां का गरीब किसान दुःखी है। उनमें के कुछ पढ़े-लिखे अब यह समझने लगे

हैं कि खाना प्राप्त करना पहला काम है और उन्हें वही शासन पसन्द होगा जो खाना, कपड़ा और रहने को घर देगा। उन्हें राजनीतिक चक्करों से कोई मतलब नहीं। आज पाकिस्तानी छाया में वे भूखे हैं, नङ्गे हैं। वे परिवर्त्तन चाहते हैं, किन्तु सतर्कता से।

खनिज धन

यह कहना बड़ा कठिन है कि कब तक यह प्रदेश आत्म-भरित बनेगा, अथवा बन भी पायेगा या नहीं ? किन्तु किसी भी सरकार के लिये भागीरथ प्रयत्न किये बगैर यहां की गरीबी और भुखमरी दूर करना असम्भव है। काश्मीर घाटी से विच्छिन्न होकर तो शायद यह कभी भी आत्मनिर्भर नहीं बन पायेगा। उस स्थिति में पाकिस्तान के लिए वह सदैव खर्च की मद बना और जबरदस्त सिरदर्द रहेगा।

यहां के खनिज धन का पर्यवेक्षण अभी तक नहीं हो पाया है। अतः समस्त आशाएं इसी पर आधारित हैं। किन्तु यहां के लोगों का ख्याल है कि यह प्रदेश खनिज धन में अति सम्पन्न है। कुछ स्थानों पर, कहते हैं, सोने की खानें भी विद्यमान हैं।

जब कभी यह भाग भारत से मिलेगा तभी यहां के पारंगत पर्यवेक्षक इस छिपी दौलत का पता लगा सकेंगे।

फल भी यहां काफी तादाद में होते हैं। यदि व्यापार की दृष्टि से पड़ोसी देश के बाजारों में फल भेजे जायें तो वह उद्योग भी बढ़ सकता है।

इसके अतिरिक्त दर्दिस्तान का जवान युद्ध-कौशल में बड़ा चतुर होता है। उसे बहका कर पाकिस्तान ने उससे अब तक

भारत के विरुद्ध युद्ध कराने का काम लिया है। किन्तु यदि उसे एक बार भी ज्ञात करा दिया जाय कि भारत उसका वास्तविक मित्र है तो वह जवान अपने मित्र के विरुद्ध कदापि शस्त्र न उठायेगा।

पाकिस्तानी अफसर इन दिनों यहां नौकर शाही का राज स्थापित किये हैं। पाकिस्तान के कुछ पत्रों ने उनके अत्याचारों की कहानियां छापी हैं। उनमें कहा गया है कि इस प्रकार के व्यवहार से यहांकी शांतिप्रिय जनता विद्रोह करके शत्रु (भारत) से मिल जायगी।

वैसे भी स्वर्गपुरी से होड़ लेने वाली काश्मीर घाटी का यह भाग यहां की जनता की भलाई के लिए अवश्य भारत में मिल जाना चाहिये।

अमरीका में काश्मीर

नीचे श्री एमेन्युएल एस० लारेसन के उस पत्र का आशय दिया जाता है, जो २६ सितम्बर १९४९ के 'न्यूयार्क टाइम्स' में प्रकाशित हुआ था। पत्र के सम्पादक को सम्बोधित करके श्री इमैन्युअल ने लिखा था—

'आपने १६ सितम्बर को काश्मीर के सम्बन्ध में जो सम्पादकीय लेख लिखा है, उसे पढ़ने से ऐसा मालूम पड़ता है, मानों पाकिस्तान ने तो संयुक्त राष्ट्र संघ की मध्यस्थता सम्बन्धी शर्तें प्रसन्नता पूर्वक मान ली हों, और भारत इस गंभीर विवाद के शाँतिपूर्ण हल में रोड़े अटका रहा हो।

उन्हों ने आगे लिखा है—'आपने जो चित्र खींचा है, उसमें भारत के साथ न्याय नहीं किया गया। उपलब्ध रिकार्ड देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत आरम्भ से ही संयुक्त-राष्ट्र संघ के प्रस्तावों के अनुसार कार्य करता रहा है। यह जानकर आश्चर्य होता है कि पाकिस्तान द्वारा टालमटोली की नीति अपनाये जाने पर भी भारत उसको अनेक प्रकार की रियायतें देता रहा।

संयुक्तराष्ट्र संघ के कई प्रस्तावों में अव्यक्त रूप से इस बात को स्वीकार कर लिया गया है कि विवाद का आरम्भ पाकिस्तान ने किया और वह आक्रमणात्मक कार्रवाई की श्रेणी में आजाता है। इसीलिए काश्मीर कमीशन ने अपने १३ अगस्त १९४८ के प्रस्ताव में यह स्पष्ट कर दिया था कि पाकिस्तान सरकार ने सुरक्षा परिषद् के सामने जो परिस्थिति उपस्थित की थी, उसमें और वस्तु स्थिति में आकाश पाताल का अन्तर है, और यह अन्तर इसलिए है कि काश्मीर में पाकिस्तान की सेनाएं और आक्रमणकारी मौजूद हैं, जबकि पाकिस्तान के अधिकारी यह कह चुके थे कि काश्मीर में पाकिस्तान की कोई सेना नहीं है। और इसीलिये संयुक्तराष्ट्र संघ की संस्थाओं ने यह निश्चय किया है कि निष्पक्ष मतसंग्रह से पहले पाकिस्तानी आक्रमणकारियों को काश्मीर की सीमा से हटा देना चाहिये।

सुदूर पूर्व के मामलों के एक विश्लेषक के नाते मैं यह उचित ही समझता हूँ कि आपके उत्तम प्रकाशन के पाठक संयुक्त राष्ट्रों के साथ देर से रही पाकिस्तान की टालमटोल की बातों की सच्ची कहानी जान लें। उनका स्पष्टतः यह उद्देश्य है कि

काश्मीर की भूमि से पाकिस्तानी आक्रांताओं को हटा देने सम्बन्धी कमीशन के प्रस्ताव की उपेक्षा कर वे स्वतन्त्र और निष्पक्ष रूप से मत संग्रह न होने दें। इस सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त है कि संयुक्तराष्ट्रीय काश्मीर कमीशन के १३ अगस्त १९४८ के प्रस्ताव के विषय में पाकिस्तान के विदेश मन्त्री श्री जफरुल्ला खां का उत्तर दुतरफी बातों का बढ़िया नमूना था। यह कहकर कि उन्होंने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया, उन्होंने इतनी अधिक शर्तें लगाई थीं कि कमीशन ने उसे अस्वीकृति का पत्र समझा। समझौते की सारी बातचीतों में वस्तुतः पाकिस्तान की मनोवृत्ति ऐसी ही रही है।

पंचायती फैसले के लिये अभी हाल के संयुक्त राष्ट्रों के प्रस्तावों से यह प्रतीत होता है कि उनमें पाकिस्तान के आक्रमणात्मक कार्यों को छिपाने का प्रयत्न किया गया है। इसलिए वर्तमान परिस्थितियों, अर्थात कमीशन द्वारा निर्णीत प्रश्नों पर पुनः विचार करने की अवस्था में भारत द्वारा पंचायती फैसले को अस्वीकार करना स्वाभाविक ही है। कई उत्तेजनात्मक पाकिस्तानी आक्रांताओं द्वारा किए गये अत्याचारों की पहले से ही योजना बनाई गई थी और बाहर से पाकिस्तानी नेताओं ने उत्तेजना दी थी और वे अत्याचार भारत के साथ मिलने के विरुद्ध अचानक काश्मीर में हुए विद्रोह का परिणाम नहीं थे। एफ० के० खां दुर्रानी की पुस्तक 'दी मीनिंग आफ पाकिस्तान' में इन बातों का एक उदाहरण मिलता है। इस पुस्तक का लेखक पाकिस्तान का एक प्रसिद्ध नेता है। उसने लिखा है—

'भारत में एक इन्च भूमि भी ऐसी नहीं है जिसे हमारे पूर्वजों ने कभी न कभी अपने रक्त से न खरीदा हो। हम अपने पूर्वजों के रक्त के प्रति कृतघ्न नहीं हो सकते। इसलिये भारत, सारा भारत हमारी पैतृक सम्पत्ति है और इसे इस्लाम के लिये जीत लेना चाहिए।'

आजकल पाकिस्तान में एक लोकप्रिय नारा यह है कि 'पहले काश्मीर, फिर पटियाला और उसके बाद दिल्ली।'

काश्मीर कमीशन का पत्र व्यवहार

संयुक्त राष्ट्रीय काश्मीर-कमीशन ने २९ और ३० अगस्त को भारत-सरकार और पाकिस्तान सरकार को एक आवेदन पत्र प्रस्तुत किया था। इसके सम्बन्ध में कमीशन का दोनों देशों की सरकारों से जो पत्र-व्यवहार हुआ है वह प्रकाशित कर दिया गया है। कमीशन ने २६ अगस्त को यह आवेदन पत्र तैयार किया था और इसमें यह सुझाव रखा था कि दोनों देश काश्मीरके मामले में एड-मिरल निमित्ज को पंच स्वीकार कर लें। निमित्ज इन प्रश्नों का निर्णय न्यायपूर्वक करेंगे और उनका निर्णय दोनों पक्षों को मान्य होगा। आवेदनपत्र भी ११ सितम्बर को प्रकाशित किया जा चुका है।

भारत सरकार ने अपने उत्तर में कमीशन को कहा है-भारत ने १३ अगस्त १९४८ के प्रस्ताव को इसी शर्त पर स्वीकार किया

था कि आजाद काश्मीर फौजें बड़े पैमाने पर भंग और निश्शस्त्र की जायेंगी। इस प्रश्न पर पंच—फैसला नहीं लिया जा सकता क्योंकि पंच इसके निर्णय को भारतीय सेना के बड़े भाग के राज्य से हटने तक टाल सकता है। उस अवस्था में रियासत की सुरक्षितता खतरे में पड़ जायेगी। भारत सरकार के लिए यह खतरा मोल लेना सम्भव नहीं है। इससे आक्रमणकारी को लाभ हो जायेगा। अतः पंच के चुनाव के लिए यह स्थिति भी ठीक नहीं समझती।

इसके उत्तर में पाकिस्तान सरकार की ओर से ७ सितम्बर को काश्मीर-मामलात के मंत्री एम० ए० गुरमानी ने कमीशन के अध्यक्ष को यह पत्र लिखा—

'आपने कमीशन की ओर से २६ अगस्त १६४६ को पाकिस्तान के विदेशमन्त्री को जो आवेदन पत्र दिया था, उसके बाद में मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि कमीशन ने आवेदनपत्र के ५ वें पैरे में १३ अगस्त १६४८ के प्रस्ताव के दूसरे भाग की पूर्ति के लिए जो कार्य-विधि सुझाई है, यह पाकिस्तान सरकार को स्वीकार है।"

भारत सरकार का उत्तर

८ सितम्बर १६४६ को भारत सरकार के सेक्रेटरी-जनरल ने पंचफैसले के बारे में कमीशन के अध्यक्ष को लिखा—

१—'आपने संयुक्तराष्ट्रीय काश्मीर-कमीशन की ओर से ३० अगस्त को जो आवेदनपत्र मुझे दिया था उसके अन्तिम पैरे में की गई प्रार्थना के उत्तर में मैं लिखित रूप में काश्मीर के प्रश्न पर पंच-फैसले के सम्बन्ध में भारत-सरकार के विचार सूचित करता हूँ।

२—पांचवें पैरे में दिये गये उप पैरा (१) (अ) के अनुसार दोनों सरकारों से प्रार्थना की गई है कि १३ अगस्त १६४८ के प्रस्ताव के दूसरे भाग की पूर्ति के सम्बन्ध में उनके बीच में जो भी मत-भेद है उन पर पंच-फैसले की बात मान ली जाये। पंच इन प्रश्नों का निर्णय—न्याय के अनुसार करेगा और वह दोनों पक्षों को मान्य होगा। मैंने ३० अगस्त को आप से और राजदूत कोलकान से जो बातचीत की थी उसमें ये प्रश्न पूछे थे—

(क) क्या कमीशन पंच को वे मुद्दे बतायेगा जिन पर पंच-फैसला लेना है?

(ख) क्या कमीशन पंच को उन स्थितियों को खोलकर बतायेंगे जिनके कारण वर्तमान स्थिति पैदा हुई और यह भी बतलायेगा कि आजाद काश्मीर फौजों को भंग और निश्शस्त्र करने के लिये बारे में वह किन परिणामों पर पहुँचा है।

पहले प्रश्न के उत्तर में आपने कहा है कि कमीशन यह पसन्द करेगा कि दोनों पक्ष ५ (१) की शब्द रचना को स्वीकार कर लें और पंच को मुद्दे प्रस्तुत करें जिन पर आप उनका फैसला चाहते हैं। तब पंच आपने आप यह निर्णय करेगा कि प्रत्येक पक्ष ने जो मुद्दे उठाये हैं, वे सन्धि स्थापित कराने में सहायक है या नहीं। दूसरे प्रश्न के उत्तर में आपने लिखा है कि कमीशन इस समस्या को अब बिलकुल नये दृष्टिकोण और बिलकुल नये सिरे से सुलझा रहा है, इसलिए वह भूत काल की बातों में नहीं जाना चाहता। प्रत्येक पक्ष को निज का दृष्टिकोण प्रस्तुत करना चाहिये कि वे किन मुद्दों पर पञ्च फैसला चाहते हैं।

३, मेरे पहले प्रश्न के उत्तर में आपको जो स्पष्टीकरण दिया गया है, उसका तात्पर्य यह है कि पंच को यह फैसला करने की स्वाधीनता होगी, किन मुद्दों पर उसे अपना निर्णय देना चाहिये जहां तक भारत सरकार का सम्बन्ध है, उसके लिए यह कार्य-विधि बिलकुल नयी, अभूतपूर्व और अश्रुतपूर्व है, जो न्याय्य नहीं हो सकती।

४, दूसरे प्रश्न के उत्तर में भारत सरकार कमीशन के रवैये पर केवल आश्चर्य और निराशा ही प्रकट कर सकती है। बजाय इसके कि दोनों पक्ष भूतकालीन घटनाओं का अपना २ विवरण दें, यह अच्छा था कि कमीशन ही भूतकालीन तथ्यों और हमको दिए गये आश्वासनों का निष्पक्ष और अधिकृत विवरण देता। काश्मीर कमीशन के १३ अगस्त के प्रस्ताव के ११ वें हिस्से में जो सन्धि-प्रस्ताव हैं, उन्हें न तो भारत सरकार की स्वीकृति से पूर्व की बातचीत और घटनाओं से और न ही उसके बाद की घटनाओं और बातचीत से अलग किया जा सकता है।

जम्मू और काश्मीर की भूमि पर पाकिस्तानी सेनाओं की उपस्थिति (जिसे काश्मीर कमीशन ने सुरक्षा परिषद में पाकिस्तान द्वारा काश्मीरके मामले को प्रस्तुत किये जाने के बाद स्थिति में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन बताया है) जम्मू और काश्मीर पर पाकिस्तान के हमले का केवल एक उदाहरण है, जो अपने वैधानिक प्रवेश के कारण अब भारत का एक हिस्सा है। हमला कबाइलियों और उन पाकिस्तानी नागरिकों ने शुरू किया, जिनको पाकिस्तान ने सहायता दी और उकसाया। तब से यह हमला जम्मू और काश्मीर में पाकिस्तान की नियमित सेनाओं के घुस

जाने, भारतीय काश्मीर की रियासती सेनाओं के विरुद्ध लड़ाई लड़ने से पाकिस्तानी सेना के नेतृत्व में तथा कथित आजाद काश्मीर सेनाओं की वृद्धि से तथा रियासत के उत्तर में विजय और पहाड़ी इलाकों में पाकिस्तानी सेनाओं के घुस आने के कारण बराबर जारी है।

पाकिस्तान की आक्रमणात्मक दुर्भावना इससे और अधिक स्पष्ट हो जाती है, कि उसने आजाद काश्मीर सेनाओं के भंग पर विचार तक करना अस्वीकार कर दिया जिसकी ताकत जम्मू और काश्मीर की सुरक्षा के लिए एक खतरा बनी हुई है तथा निष्पक्ष और स्वतन्त्र जनमत में बहुत बाधक है। प्रधान मन्त्री ने दिसम्बर में डा० लोजानो को यह बिल्कुल स्पष्ट कर दिया था।

पाकिस्तान का यही आक्रमणात्मक इरादा इससे भी स्पष्ट होता है कि काश्मीर कमीशन ने दिल्ली में २२ अगस्त को प्रस्तावित संयुक्त सम्मेलन के लिये दोनों देशों से जो विचार-सूची मांगी थी, उसके उत्तर में पाकिस्तान ने यह लिखा था कि उत्तर के पहाड़ी इलाकों के साथ भी आजाद काश्मीर के इलाकों के समान ही व्यवहार किया जाय। कमीशन यह देखेगा कि पाकिस्तान के इस दावे से अगस्त, १९४८ को प्रधान मन्त्री को कमीशन द्वारा दिया गया यह अश्वासन निरर्थक हो जाता है कि उत्तर के विस्तृत इलाकों के शासन की समस्या के प्रश्न पर अगस्त-प्रस्ताव को कर्यान्वित करते समय विचार किया जा सकता है।

५ भारत सरकार ने कमीशन के सामने बार-बार इस बात पर जोर डाला है कि जम्मू और काश्मीर पर भारत और पाकिस्तान के झगड़े का तब तक कोई न्याय और स्थिर फैसला नहीं

हो सकता- जब तक कि आक्रमण के नैतिक पहलू को ध्यान में न रखा जाय। सन्धि की शर्तों को तय करने में भी यही बात सत्य है कि सब संगत तथ्यों, तथा कमीशन के उद्देश्यात्मक वक्तव्य के अभाव में पंच के सामने सारे मामले पर फिर से बहस करना एक बड़ी लम्बी कार्यविधि है जिससे १४ अगस्त १९४८ के प्रस्ताव के ११ वें हिस्से को कार्यान्वित करने के लिए वह 'शीघ्र और निश्चित कार्रवाई' अनिश्चित काल के लिए स्थगित हो जायगी, जिसे कमीशन और भारत दोनों चाहते हैं।

६—भारत सरकार के विचार से आजाद काश्मीर फौज को बड़े पैमाने पर भंग और निश्शस्त्र करने के बारे में पाकिस्तान का रुख जनमत के योग्य वैसी शान्तिपूर्ण अवस्था में उत्पन्न करने में एक घातक बाधा है जैसी हमारे समझौते में तय हुई थी पाकिस्तान सरकार का तर्क यह है कि चूंकि १३ अगस्त के प्रस्ताव के दूसरे भाग में इन फौजों का भंग और निश्शस्त्र करने का कोई उल्लेख नहीं हैं, किन्तु पाकिस्तान सरकार यह भूल जाती है कि इस प्रस्ताव को स्वीकार करने से पूर्व हमने इस मामले में कमीशन से बातचीत की थी और हमको कमीशन की ओर से इस बात का निश्चित आश्वासन दिया गया था कि आजाद काश्मीर फौजों का भंग और निश्शस्त्रीकरण बड़े पैमाने पर किया जायगा।

कमीशन द्वारा भारत और पाकिस्तान को ११ दिसम्बर को दी गई तजवीजों पर २० और २२ दिसम्बर को डा० लोजानो से पेरिस में बातचीत करते हुए प्रधानमंत्री ने इस बात की ओर ध्यान खींचा था कि आजाद काश्मीर फौज जिसे पाकिस्तान ने हथियारबन्द किया है और जो पाकिस्तानी सेना की कमान में

है, बीसियों हजार की संख्या में है उनकी उपस्थिति की ओर १३ अगस्त के प्रस्ताव के दूसरे भाग के अ ३ में संकेत है। यह फौज भंग करने के बाद भी भारतीय और रियासती सेना के नियन्त्रण के लिए खतरा पैदा करती रहेगी। वह शरणार्थियों को वहां न लौटने देगी और इस प्रकार राज्य के भविष्य के बारे में राय देने में ऐसे बहुत से लोगों को रोकेगी जो साधारणतः वहां के निवासी थे।

इसलिए राज्य की सुरक्षितता को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से कमीशन के साथ सारी बातचीत में ही भारत सरकार ने अपनी फौजों की काश्मीर से वापिसी इसी शर्त पर निर्भर रखी है कि कमीशन आजाद काश्मीर फौजों को किस पैमाने पर भंग और निश्शस्त्र करेगा। आजाद काश्मीर सेना का भंग और निश्शस्त्रीकरण उन कारणों से भी आवश्यक है जिनका उल्लेख प्रधानमंत्री ने डा० लोजानो से बातचीत में किया था। डा० ने स्वीकार किया था कि प्रधानमंत्री के तर्क में बल है और यह कहा था कि आजाद काश्मीर फौज को बड़े पैमाने पर भंग और निश्शस्त्र किया जाना चाहिये। यदि इस आश्वासन पर फिर विचार करने की अनुमति दी जाय या आजाद काश्मीर फौज के भंग और राज्य में बची हुई भारतीय सेना को भौगोलिक दृष्टि से रखने के प्रश्न को एक ही धरातल पर रखा जाय तो यह भारत और कमीशन के बीच निर्धारित स्थिति से पिछे हटना होगा।

खतरनाक स्थिति

यदि पंच यह तय करने के लिए स्वतन्त्र हों कि आजाद काश्मीर फौज भंग न की जाय तो निष्पक्ष जनमत सम्भव ही नहीं

हो सकता। आजाद काश्मीर फौज को भंग और निश्शस्त्र करने की आवश्यकता स्वीकार करते हुए भी पंच इस बातके लिए स्वतन्त्र है कि वह इस प्रश्न को तब तक तय न करे जब तक भारतीय सेनाओं का अधिकांश राज्य से हट न जाय। उस स्थिति में भारतीय सेना के अधिकांश की वापिसी और आजाद काश्मीर सेना के भंग और निश्शस्त्री-करण के बीच के समय में रियासत की सुरक्षितता खतरे में पड़ जायेगी जैसा कमीशन को बार-बार कहा जाचुका है। भारत सरकार के लिए इस खतरे को मोल लेना संभव नहीं है। भारत सरकार ने नियन्त्रण द्वारा रियासतकी रक्षा का जो दायित्व अपने ऊपर लिया है यह बात उसके विपरीत भी है उसे उन भयंकर आक्रमणों की पुनरावृत्ति से रियासत की रक्षा करनी है जैसे अक्तूबर १९४७ में हुये थे।

नई, स्थिति

जब कमीशन की ओर से भारत सरकार को यह आश्वासन दिया गया था कि आजाद काश्मीर फौज भंग और निश्शस्त्र की जायगी, तब से यह फौज बहुत बढ़ गई है। इस प्रकार एक नई स्थिति पैदा कर दी गई है जिसमें रियासत को पहिले की अपेक्षा खतरा बहुत बढ़ गया है इसलिये उसको भंग करना और भी आवश्यक होगया है। ये फौज पूर्णतः पाकिस्तान सेना का अंग है। उसी ने उनको शिक्षित किया है और वे उसी के द्वारा संचालित है। जो आक्रमणकारी पीछे हट गया है वह अपने पीछे ३२ पल्टन छोड़ जाने का दावा नहीं कर सकता? जिनको उसने सिखाया और जो लड़ने के लिये तैयार है।

७—इसलिये भारत सरकार का विश्वास है कि आजाद काश्मीर सेनाओं को विशाल पैमाने पर भंग करने का महत्वपूर्ण प्रश्न पंच-फैसले का विषय नहीं है, उस पर तो तुरन्त ही कोई मत निर्णय होना चाहिये। अगर आजाद काश्मीर सेनाओं का भंग करने के तरीके पर एक बार समझौता हो जाय, तो फिर १३ अगस्त के प्रस्ताव के दूसरे हिस्से को जिसमें भारतीय व पाकिस्तानी सेनाओं की वापसी का उल्लेख है, पूरा करने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

८—युक्तिशः मेरी सरकार से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह एक ऐसे पंच फैसले के सुझाव को स्वीकार कर ले जिसमें विचारणीय प्रश्नों का निर्धारण पञ्च पर छोड़ दिया गया हो और जिसमें कमीशन द्वारा वर्तमान स्थिति को पैदा करने वाले तथ्यों और उसके द्वारा दिये गये आश्वासनों के पालन का उल्लेख न हो। तथापि पंच-फैसले के सुझाव पर भारत सरकार की मुख्य आपत्ति यह कि इस पत्र के ६ठें और ७ वें पैराग्राफ में जिस मुद्दे को स्पष्ट किया गया है, वह पंच-फैसले का विषय ही नहीं है। इसका अभिप्राय है कि वह उस सुझाव को भी नहीं मान सकती जिसका ३० अगस्त के स्मरणपत्र में उल्लेख किया गया है क्योंकि जब मुख्य सुझाव ही मान्य नहीं तो उससे सम्बन्धित गौण सुझावों का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

९—स्मरण पत्र के पांचवे पैरा ग्राफ में बताई गई कार्यविधि से सहमत न होने के कारण मेरी सरकार यह स्पष्ट कर देना चाहती है कि वह सिद्धान्तः पंचफैसले के विरुद्ध नहीं है। क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा को खतरे में डालने वाले झगड़ों को

निबटाने के लिये संयुक्तराष्ट्र संघ के घोषणा पत्र की ३३ वीं धारा में पंच फैसला भी एक उपाय बताया गया है और घोषणापत्र के सिद्धान्तों में भारत का अटूट विश्वास है। लेकिन यह पंच-फैसला किन्हीं निश्चित मुद्दों पर होना चाहिये। भारत किसी भी अवस्था में यह नहीं चाहता कि कोई झगड़ा तलवार से तय किया जाय, वह हर समय ऐसे किसी भी तरीके पर विचार करने को उद्यत है। जो सारे झगड़े को शान्ति से हल करदे।

१०—अन्त में मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि भारत सरकार का अब भी यही मत है कि जम्मू और काश्मीर के लोगों को अपने भविष्य का निर्णय स्वयं करना चाहिये। स्वतन्त्र और निष्पक्ष जनमत के प्रजातन्त्रीय तरीके से यह निश्चय करना चाहिये कि वे भारत में ही शामिल रहना चाहते हैं या नहीं, बशर्ते कि स्वतन्त्र और निष्पक्ष जनमत के लिए आवश्यक अवस्थायें पैदा करदी जायें।

यह कार्य जैसा कि उन्होंने बार-बार और अनेक अवसरों पर स्पष्ट कर दिया है, असम्भव होगा, अगर इस विषय में दिये गये आश्वासनों को कमीशन पूरा नहीं करता है।

१० सितम्बर को पंच-फैसले पर कमीशन के स्मरणपत्र के विषय में काश्मीर कमीशन द्वारा भारत सरकार के सेक्रेटरी जनरल को लिखा गया पत्र।

मुझको आपका ८ सितम्बर १६४६ का पत्र मिला, जिसमें आपने कमीशन के पंच-फैसले के सुझाव पर भारत सरकार के विचार प्रकट किये हैं।

कमीशन का ख्याल है कि आपकी सरकार ने उन दो प्रश्नों को ध्यान में रखकर अपना उत्तर भेजा है, जिनके विषय

में कुछ गलतफहमी मालूम देती है। १—क्या कमीशन पंच को वे मुद्दे बतायेगा, जिनपर उसको फैसला देना है। २. क्या कमीशन पंच को उन घटनाओं का पूरा ब्योरा देगा, जिनके कारण वर्तमान स्थिति पैदा हुई है और क्या कमीशन आजाद काश्मीर सेना को भंग करने जैसे मुद्दों के विषय में जिन परिणामों पर पहुँचा है, उन्हें वह पंच के सामने रखेगा ?

३—चूंकि कमीशन इस परिणाम पर पहुँचा है कि आपकी सरकार का स्पष्टीकरण कमीशन की इच्छाओं का प्रतिबिम्ब नहीं है इसलिये वह आपकी सरकार के उत्तर को अन्तिम नहीं समझता और अपना कुछ और स्पष्टी करण देना चाहेगा। जिससे उसका दृष्टि कोण अधिक अच्छी तरह से समझ में आ सकेगा।

४—पहले प्रश्न के विषय में आप यह देखेंगे कि पूरे पैराग्राफ के (१) (डी) और (२) विभागों में कार्यविधि का उल्लेख है और वहां पर कहा गया है कि इस प्रश्न पर बाद में निर्णय किया जाना चाहिये। कमीशन का ख्याल है कि पहले प्रस्तुत कार्यविधि पर सरकारों की स्वीकृति लेना अधिक अच्छा है और फिर आगे की कार्यविधि के लिये अपनाये गये अनेक तरीकों पर विचार किया जाय। आपकी जिज्ञासा में निहित कार्यविधि इन्हीं में से एक है, इसीलिये वह शामिल नहीं की गई।

५—जहां तक आपके दूसरे प्रश्न का सम्बन्ध है, कमीशन आपको यह विश्वास दिलाना चाहता है कि वह सदैव पंच की सेवा में रहेगा, और उसे जिन तथ्यों का पता है, उनका पूरा ब्योरा प्रस्तुत करेगा।

६—सन्धि को अतिशीघ्र कार्यान्वित करने के लिये पंच-फैसले का सुझाव करने में कमीशन का कभी यह इरादा नहीं रहा कि समस्या के शान्तिपूर्ण हल के लिये जो आश्वासन दिये गये हैं उन्हें ताक पर उठा कर रख दिया जाये। स्वतन्त्र और निष्पक्ष जनमत का उद्देश्य तथा उसके लिये आवश्यक अवस्थाओं से संबन्धित सिद्धान्त ज्यों के त्यों कायम हैं।

७—इस सिलसिले में आपने आजाद काश्मीर सेनाओं को भंग करने के प्रश्न का जिक्र किया है। कमीशन यह बता देना चाहता है कि आजाद काश्मीर सेनाओं को भंग करना भी जनमत लेने की शर्त पर है इस बातको दोनों सरकारोंने स्वीकार कर लिया है। इसके तत्व या सार के विषय में दोनों सरकारों में कोई मतभेद नहीं है। मतभेद केवल उसके क्षेत्र तरीके और समय पर है। पच-फैसला केवल इन्हीं तीन विषयों तक सीमित रहेगा।

८—कमीशन इस समय आपके पत्र पर अधिक टिप्पणी करना आवश्यक नहीं समझता।

९—कमीशन को आशा है कि उपरोक्त स्पष्टीकरण के प्रकाश में आपकी सरकार ३० अगस्त १९४९ के स्मरणपत्र पर पुनः विचार करेगी।

हस्ताक्षर—राबर्ट बी. मैकरी चेयरमेन

श्री बाजपेयी का दूसरा उत्तर

भारत सरकार के सेक्रेटरी जनरल श्री गिरिजाशंकर बाजपेयी ने १५ सितम्बर को कमीशन के अध्यक्ष को फिर यह पत्र लिखा।—

१—यह पत्र आपके १० सितम्बर के पत्र के उत्तर में है जो आप मुझे १२ सितम्बर को दे गये थे।

२—भारत सरकार ने यह बात ध्यान में रखली है कि कमीशनके विचारसे भेजे हुए ८ सितम्बरके पत्र से मुद्दा (१) और (२) के बारे में कमीशन का ठीक विचार प्रकट नहीं होता इसका उल्लेख आपके १० सितम्बर के पैरा १ और ३ में है। हम कमीशन को यह विश्वास दिलाते हैं कि हमने ३ अगस्त के आवेदन पत्र को योग्यता के अनुसार समझने का पूरा प्रयत्न किया है।

३—भारत सरकार ने कमीशन के आवेदनपत्र पर आपके पत्र को ध्यान में रखकर पूरा विचार किया है और उसने उसका जो उत्तर दिया है वह इस बुनियादी शर्त को ध्यान में रखकर दिया है कि जनमत के लिये लोगों में विश्वास और शांतिपूर्ण वातावरण पैदा करना पहली शर्त है। यह शर्त दोनों सरकारों और कमीशन ने स्वीकार की और इसीलिये इसे पंच के सिपुर्द नहीं किया जा सकता।

अब मैं आपके पत्र के सातवें पैरे का उत्तर देता हूँ जो आजाद काश्मीर फौज को भंग और निश्शस्त्र करने के बारे में है। यह प्रश्न भी पंच तय नहीं कर सकता जैसा मैंने अपने पहले पत्र के छठे पैरे में लिखा था।

आपने अपने पत्र के ७ वें पैरे में लिखा है कि दोनों सरकारों ने जनमत से पूर्व इन फौजों को बड़े पैमाने पर भंग और निश्शस्त्र करना स्वीकार किया है। इस प्रश्न पर मतभेद स्थान विधि और समय के बारे में है। पंच-फैसला इन्हीं बातों पर होगा।

इसके उत्तर में मैं ८ सितम्बर के अपने पत्र में प्रकट किये गये भारत सरकार के इस विचार की ओर आपका ध्यान दिलाता हूँ जो छठे पैरे में दिया गया है। वह यह है–'पंच के इन फौजों को भंग और निशस्त्र करने की आवश्यकता को स्वीकार करने पर भी इस प्रश्न पर निर्णय भारतीय सेना के बड़े भाग के काश्मीर से हटने तक टाल सकता है, इस अवस्था में रियासत की सुरक्षा भारतीय सेना के बड़े भाग के हटने और आजाद काश्मीर फौज के भंग और निशस्त्रीकरण के बीच के समय में खतरे में पड़ जायगी। भारत सरकार के लिये ऐसा खतरा मोल लेना सम्भव नहीं है। यह सन् १९४७ के अक्तूबर में किये गये आक्रमण की भयंकरताओं से रियासत के लोगों की रक्षा करने के बारे में भारत सरकार का जो दायित्व है उसके भी विपरीत है मुख्यतः उस अवस्था में जब उन सेनाओं की संख्या बहुत बढ़गई है। इसलिये भारत सरकार मानती है कि इन फौजों का भंग और निशस्त्रीकरण पंच फैसले की बात नहीं है। इसी की पूर्ति पर भारतीय सेनाओं की राज्य से वापसी निर्भर है। इस बारे में अनिश्चितता रहने से आक्रमणकारी को लाभ होगा।

५—आपके पत्र के चौथे पैरे में कमीशन के पैरा ५ के उप पैरा (१) (द) और (२) का उल्लेख है। आपने कहा है कि पञ्च फैसला किन बातों पर हो यह दोनों सरकारों से बातचीत करके तय किया जायगा। इस सम्बन्ध में कमीशन के इरादों के बारे में आपने कहा है कि इन पञ्च फैसले के मुद्दों के बारे में दोनों सरकार सहमत नहीं हुईं तो समझा जायगा कि पंच फैसले की बात असफल रही है।

पहले मुद्दे तय हों

भारत सरकार का दृष्टिकोण यह है कि क्या बात पंच फैसले के लिए रखी जायगी पहले यह तय होजाना चाहिये पीछे नहीं। पंचायत की बात तभी स्वीकार की जा सकती है। चूंकि पंच फैसला इन मुद्दों के बारे में सहमति पर ही निर्भर है इस लिये मूल प्रश्न यह है और उसके लिये उचित विधि भी यही है।

५—भारत सरकार इस स्थिति में पञ्च के चुनाव के संबंध में भी मत प्रकट करना वांछनीय नहीं समझती। उसके लिये समय वह उपयुक्त होगा जब पंचफैसला जिन मुद्दों पर होगा यह निश्चित् रूप में तय हो जाय और उसे भारत और पाकिस्तान मानलें।

ह० गिरजाशंकर वाजपेयी

पञ्च फैसले के विषय में १६ सितम्बर १६४६ का काश्मीर कमीशन के चैयरमैन द्वारा भारत सरकार के जनरल सेक्रेटरी तथा पाकिस्तान के काश्मीर मंत्री को लिखा गया पत्र।

भारत को पत्र

कमीशन को अपने १० सितम्बर, के पत्र के उत्तर के रूप में आपका १५ सितम्बर का पत्र मिला।

उस पत्र तथा ८ सितम्बर के पत्र के प्रकाश में कमीशन का ख्याल है कि भारत सरकार स्मरणपत्र में सुझाई गई कार्यविधि को स्वीकार करने में असमर्थ है।

इन अवस्थाओं में कमीशन ने निर्णय किया है कि वह अपनी पिछली आन्तरिक रिपोर्ट के बाद समस्त हलचलोंकी रिपोर्ट सुरक्षा समिति को प्रस्तुत करेगा। निकट भविष्य में कमीशन

का इस अर्ध महाद्वीप से चले जाने का इरादा है। तथापि सैनिक सलाहकार तथा प्रेक्षक यहीं पर रह कर अपना अपना काम करते रहेंगे।

कमीशन को यह आशा है कि जाने से पूर्व वह आपके व्यवहार के प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित करने के लिये आप से मिलेगा।

हस्ताक्षर—राबर्ट बी० मेकरी चेयरमैन

पाकिस्तान को पत्र

कमीशन को आपका ७ सितम्बर का पत्र मिला। उसे यह जानकर संतोष है कि आपने कमीशन के स्मरणपत्र में प्रस्तावित कार्यविधि (पंच फैसले) को स्वीकार कर लिया है।

पंच फैसले के प्रस्ताव पर कमीशन को भारत सरकार से भी उत्तर मिल गया है। उस उत्तर से यही विदित होता है कि भारत इस कार्य-विधि को अपनाने में असमर्थ है।

इन परिस्थितियों में कमीशन ने निर्णय किया है कि वह अपनी अन्तरिम रिपोर्ट से बाद की हल चलों की रिपोर्ट सुरक्षा परिषद् में प्रस्तुत करे।

कमीशन ने निकट भविष्य में इस अर्धमहाद्वीप से जाने का निर्णय किया है। लेकिन सैनिक सलाहकार व प्रेक्षक यहीं पर ठहर कर अपना २ काम करते रहेंगे।

कमीशन यह आशा करता है कि जाने से पूर्व वह आपके व्यवहार के प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित करने के लिये आपसे मिल सकेगा।

हस्ताक्षर—राबर्ट बी० मैकरी चेयरमैन

पाकिस्तान सरकार के भूतपूर्व काश्मीर मंत्री और अब उस देश के भ्रमणकारी राजदूत मुश्ताक अहमद गुरमानी ने काहिरा में एक प्रेस-सम्मेलन में जो हस्त-पत्र वितरित किया था उससे स्पष्ट प्रमाणित हो जाता है कि काश्मीर के संबन्ध में पाकिस्तान अपना अपराध किस प्रकार छिपाने का प्रयत्न कर रहा है।

भारत ने जनवरी १६४८ में काश्मीर की स्थिति के सम्बन्ध में जिन आधारभूत तथ्यों की ओर सुरक्षापरिषद् का ध्यान आकर्षित किया था और जिन्हें पाकिस्तान सरकार ने पहले अस्वीकार किन्तु बाद में स्वीकार किया, उनका इस हस्तपत्र में जिक्र तक नहीं है।

वे तथ्य ये हैं—

कबाइलियों तथा पाकिस्तानियों का काश्मीर पर आक्रमण

उत्तर पश्चिमी सीमाप्रान्त के गवर्नर सर ए० डुंडास ने २१ जुलाई को कराची में काश्मीर-कमीशन के सामने जो वक्तव्य दिया था, उसका कमीशन की पेरिस वाली रिपोर्ट के पृष्ठ २२, पैरा ६० में इस प्रकार विवरण दिया गया है :

पाकिस्तान के क्षेत्र में युद्ध होने के भारी खतरे से बचने के लिये कबाइलियों को उनके प्रांत से होकर काश्मीर जाने देना आवश्यक हो गया था। आगे चल कर उन्होंने कहा कि कबाइलियों ने पाकिस्तान में स्थानीय साधनों से पैट्रोल प्राप्त किया और रेलों तथा स्थानीय मोटर यातायात का उपयोग किया। श्री मुहम्मद अली (पाकिस्तान सरकार के सेक्रेटरी जनरल) ने कहा कि

यदि इन लोगों को पट्रोल नहीं दिया जाता तो आर्थिक नाकेबन्दी की स्थिति उत्पन्न हो जाती और संभवतः पाकिस्तान को इसका गम्भीर दुष्परिणाम उठाना पड़ता।'

पैरा ६६ में लिखा है: 'सर जफरुल्ला ने इस बात की पुष्टी की कि कबाइलियों ने पेट्रोल स्थानीय साधनों से प्राप्त किया था और इस तर्क को दोहराया कि यदि उन्हें पेट्रोल न देने का प्रयत्न किया जाता तो उसका पाकिस्तान को गम्भीर दुष्परिणाम उठाना पड़ता।'

पैरा ११६, १२० और १२२ में कहा गया है: 'कबीले वालों के...झुंड के झुंड पर्वतों से जम्मू और काश्मीर की रियासत में घुस गये और पूर्व में रियासत की दक्षिणी सीमा तक जा पहुँचे। साथ ही वे लोग रियासत के दक्षिणी पश्चिमी क्षेत्रों में घुस गए और श्रीनगर की सीमा तक पहुँच गये।

जम्मू और काश्मीर में लड़ने के लिए पाकिस्तान के लोग रियासत की सीमा में घुस गये।

कमीशन को आशा थी कि वह पाकिस्तान सरकार को इस बात के लिए राजी कर लेगा कि वह जम्मू और काश्मीर की रियासत से कबाइलियों तथा पाकिस्तान के लोगों को वापस बुलाने में अपना प्रभाव काम में लाये।'

काश्मीर में पाकिस्तानी सैनिकों की मौजूदगी पर पर्दा

पृष्ठ ५६ पर पैरा १२७ और १२८ में कमीशन ने लिखा है 'पाकिस्तान के सैनिक जम्मू और काश्मीर की रियासत में जा घुसे थे और बाद में कमीशन की प्रश्नावली के उत्तर में उनके इस बयान ने कि आजाद काश्मीर के पक्ष में जो सारी सेना लड़

रही है यह पाकिस्तानी सेना की सर्वोपरि कमान में है और पाकिस्तानी सेना ही उसका संचालन कर रही है, कमीशन के सम्मुख एक अदृष्ट और बिल्कुल नयी स्थिति उत्पन्न कर दी।

'सुरक्षा परिषद के १७ जनवरी के प्रस्ताव के अनुसार पाकिस्तान सरकार से यह प्रार्थना की गयी थी कि यदि परिस्थिति में कोई विशेष परिवर्तन हो तो उसकी सुरक्षा परिषद को तत्काल सूचना दी जाय। सुरक्षा परिषद को भेजे गये एक पत्र में पाकिस्तान ने इस प्रार्थना को स्वीकार कर लिया था किन्तु जम्मू और काश्मीर रियासत में पाकिस्तानी सैनिकों की उपस्थिति के संबन्ध में पाकिस्तान सरकार ने सुरक्षा परिषद को सूचित नहीं किया।

पृष्ठ २४, पैरा ६४ में कमीशन ने लिखा है : 'विदेश मन्त्री सर मुहम्मद जफरुल्ला खां के मतानुसार काश्मीर में पकिस्तानी सैनिकों की उपस्थिति से अन्तर्राष्ट्रीय दायित्व का कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं हुआ, क्योंकि काश्मीर में हस्तक्षेप न करना पाकिस्तान ने कभी स्वीकार नहीं किया था।'

काश्मीर कमीशन का अगस्त प्रस्ताव भारत को मान्य किन्तु पाकिस्तान द्वारा अस्वीकृत

तेरह अगस्त १९४८ को काश्मीर कमीशन ने एक प्रस्ताव पास किया। इसका उद्देश्य तत्काल युद्ध-विराम के लिए तथा उस परिस्थिति में सुधार करने के लिए, जिसके जारी रहने से अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति तथा सुरक्षा को खतरा उत्पन्न होने की संभावना थी, भारत और पाकिस्तान की सरकारों की स्वीकृति प्राप्त करना था।

भारत द्वारा कमीशन के प्रस्ताव की स्वीकृति की सूचना, भारत के प्रधान मन्त्री ने २० अगस्त १९४८ को दे दी। इस पर कमीशन ने अपना हार्दिक सन्तोष प्रकट किया और भारत की सराहना की।

कमीशन के इस प्रस्ताव का उत्तर पाकिस्तान सरकार की ओर से उसके विदेश मन्त्री सर जफरुल्ला खां ने ६ सितम्बर को भेजा। इसके उत्तर में कमीशन के अध्यक्ष ने लिखा था! 'कमीशन के १३ अगस्त १९४८ वाले प्रस्ताव में जो सुझाव रखे गये थे, उन्हें ज्यों का त्यों स्वीकार करने में आपकी सरकार असमर्थ है, यह कमीशन को ज्ञात हो गया है।'

युद्धविराम के बाद आजाद काश्मीर सेना का पुनर्गठन

पाकिस्तान की सरकार यह अस्वीकार करती है कि '५ जनवरी १९४९ के बाद से आजाद काश्मीर सेना में वृद्धि हुई है।' किन्तु इस सेना का पूरी तरह से पुनः संगठन हुआ, ऐसे चुने हुए व्यक्तियों और पाकिस्तानी सेना के सैनिकों के दस्ते बनाये गये जो इस रियासत के ही निवासी थे, साज-समान तथा संगठन की दृष्टि से इन दस्तों को नियमित पाकिस्तानी सेना के स्तर पर संगठित किया गया, पाकिस्तानी सेना के अफसरों को आजाद सैन्य दस्तों में खपाया गया और उसके लिए अलग सिग्नल तथा डाक्टरी दस्ते तैयार किये गये। युद्ध-विराम के बाद गिलगित तथा स्कर्दू में हवाई अड्डे बनाये गये और इनसे इस सेना की क्षमता बहुत बढ़ गयी। तथा कथित आजाद काश्मीर सेना के प्रेसीडेंट सरदार इब्राहीम खान द्वारा १० अक्तूबर १९४९

को दिये गये भाषण की पाकिस्तान टाइम्स में जो रिपोर्ट प्रकाशित हुई उससे इस विषय की ओर अधिक पुष्टि हो जाती है। 'सरदार इब्राहीम ने बताया कि काश्मीर में युद्ध-विराम के बाद ६ महीनों के भीतर आजाद काश्मीर सरकार ने अपनी सेनाओं को पुनः-संगठित कर लिया है और डोगरा राज्य के विरुद्ध हथियार उठाने के समय की अपेक्षा अब वे सेनायें सौगुनी अधिक अच्छी हैं।'

भारत सरकार ने इस बात पर हमेशा जोर दिया कि रियासत से अधिकांश भारतीय सेनाओं को हटानेके कार्यक्रम को कार्यान्वित करते समय रियासत की सुरक्षा का भी ध्यान रखा जाय। २० अगस्त १९४८ को कमीशन के नाम भेजे गये पत्र में प्रधान मंत्री ने कहा था। हमारे दृष्टिकोण से बाहरी आक्रमण से, जिससे पिछले दस मास में काश्मीर को बहुत हानि उठानी पड़ी है, रियासत की सुचारु रूप से सुरक्षा अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है और इसका महत्व आंतरिक सुरक्षा तथा शांति स्थापना के महत्व से कम नहीं हैं, अतः काश्मीर-स्थित भारतीय सेनाओं को हटाने तथा उनकी शक्ति कम करने की व्यवस्था इस महत्वपूर्ण बात को ध्यान में रखकर ही करनी चाहिए। इसलिए, काश्मीर में रखी जाने वाली भारतीय सेना की शक्ति हर समय इतनी होनी चाहिए जो किसी भी प्रकार के बाहरी आक्रमण अथवा आंतरिक अव्यवस्था के निराकरण के लिए पर्याप्त हो।'

जब उन सुझावों पर, जो अन्त में कमीशन के ५ जनवरी १९४९ के प्रस्ताव में सम्मलित कर लिये गये थे, विचार विमर्श हो रहा था, प्रधान मंत्री ने इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित कराया था कि 'पाकिस्तानी सेना की आपरेशनल कमान के अन्तर्गत और उन्हीं द्वारा लैस की गई आजाद काश्मीर सेना की

संख्या दसियों हजार है। १३ अगस्त १९४८ के प्रस्ताव के द्वितीय भाग के ए-३ में वर्णित क्षेत्रों में, विघटित अवस्था में भी उनकी उपस्थिति से भारतीय तथा रियासती सेना के आधीन इलाकों के लिये लगातार भय बना ही रहेगा।' उत्तर में डाक्टर लोजानो ने कहा कि कमीशन की यह इच्छा है कि इन सेनाओं का बड़े पैमाने पर निरस्त्रीकरण हो।'

इस सम्बन्ध में स्मृतिपत्र संख्या २ के दूसरे पैरे पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए जिसमें इसके तत्काल बाद के वार्तालाप का आशय संकलित है। प्रधान मंत्री ने पुनः यह कहा, 'सेना को भंग करना और उसका निरस्त्रीकरण करना एक ही बात नहीं है। पाकिस्तान ने २८,००० से ३०, ००० सैनिकों की ३५ बटालियनें संघटित की है जो अब आजाद काश्मीर सेना की अंग है। इतनी विशाल संख्या में सशस्त्र सैनिकों की उपस्थिति चाहे उनका नियमित सैन्य रूप भंग हो चुका हो, जम्मू तथा काश्मीर के उस भाग की सुरक्षा के हित में ठीक नहीं है जो भारतीय तथा रियासती सेना के नियन्त्रण में है। १३ अगस्त १९४८ के प्रस्ताव के दूसरे भाग में के ए (३) में वर्णित क्षेत्रों के उन निवासियों की सुरक्षा के हित में भी यह ठीक नहीं है जो पाकिस्तानी पक्ष के लोगों की राजनीतिक विचारधारा से सहमत नहीं है। इनके अतिरिक्त रियासत के जो नागरिक वर्तमान झगड़े के कारण इन इलाकों से चले गये थे उनके पुनः प्रवेश के प्रश्न को भी ध्यान में रखना है। इतनी बड़ी संख्या में आजाद काश्मीर सेना के सशस्त्र सदस्यों की उपस्थिति के कारण इन क्षेत्रों के भिन्न राजनीतिक मतों वाले पुराने निवासी पुनः आने का साहस नहीं कर

सकेंगे और इस प्रकार वे स्वतन्त्र तथा निष्पक्ष जनमत-गणना में भाग लेने से वंचित रह जाएंगे।' इस स्पष्टीकरण को ध्यान में रखते हुए डा० लोजानो ने यह स्वीकार किया कि बड़े पैमाने पर निश्शस्त्रीकरण वाक्य खंड को ठीक रूप से कमीशन की इच्छा व्यक्त करने वाला वाक्यखंड मानना चाहिए।

इन उद्धरणों से यह स्पष्ट है कि जब भारत सरकार ने ५ जनवरी १९४९ का प्रस्ताव स्वीकार किया था तो निश्चित रूप से उसने यह समझा था कि रियासत की सुरक्षा के सम्बन्ध में तथा आज़ाद काश्मीर सरकार के अधिकार में रहे हुए क्षेत्र में शरणार्थियों के वापस लौटने के लिए अनुकूल परिस्थितियां तैयार करने के लिए इस सेना को भंग करना तथा उसका निश्शस्त्रीकरण इस समझौते का एक अविभाज्य तथा आवश्यक अंग है। भारत सरकार ने यह भी समझा था कि आजाद सेना की ३२ सुसंगठित बटालियनों से सुरक्षा को जो खतरा है वह स्वीकार कर लिया गया है तथा यह भी मान लिया गया है कि इन सेनाओं के विगठन पर ही काश्मीर से भारतीय सेना की वापसी का प्रश्न आवश्यक रूप से निर्भर करेगा।

भारत के संकेत पर युद्ध विराम

पाकिस्तान द्वारा १३ अगस्त का निश्चय अस्वीकार कर दिये जाने के फलस्वरूप जब कमीशन ने समझौते के लिये और प्रयास करने के उद्देश्य से नवम्बर १९४८ में आपसी तौर पर फिर बातचीत चलाने की तजवीज की, तो भारत उसके लिये राजी हो गया। ११ दिसम्बर को कमीशन ने पेरिस में भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों के सम्मुख कुछ प्रस्ताव पेश किये।

काश्मीर के झगड़े के शांतिपूर्ण निपटारे की कामना से प्रेरित होकर भारत सरकार ने २३ दिसम्बर को ये प्रस्ताव स्वीकार कर लिये। पाकिस्तान ने अपनी स्वीकृति की सूचना २५ दिसम्बर को दी। इस मौके पर भारत ने अपनी ओर से युद्ध-विराम का संकेत किया, जो १ जनवरी १९४९ से, अर्थात् कमीशन के ५ जनवरी के निश्चय में उसके प्रस्तावों के नियमित रूप से सम्मिलित होने से चार दिन पहले लागू हो गया।

आजाद काश्मीर सरकार अमान्य

अपनी पेरिस रिपोर्ट के पृष्ठ ६१ पैरा १३२ में कमीशन ने लिखा है 'पाकिस्तानी परराष्ट्र मन्त्री को स्पष्ट रूप से बता दिया था कि 'आजाद काश्मीर' की स्वीकृति की नियमित प्रार्थना का अर्थ होगा उस आन्दोलन की वास्तविक मान्यता, जिसे करने में कमीशन असमर्थ है। अन्य जटिलताएं पैदा हो जाने के खयाल से स्वयं उनकी सरकार ने भी 'आजाद आन्दोलन को कोई कानूनी स्वीकृति नहीं प्रदान की थी'

पाकिस्तान ने जनमत संग्रह का प्रस्ताव ठुकराया

यह सुझाव भारत का ही था, पाकिस्तान का नहीं कि काश्मीरी जनता की इच्छा अन्तर्राष्ट्रीय तत्वावधान में कराये गये जनमत संग्रह के द्वारा मालूम कर ली जाय। १ और २ नवम्बर के बीच की रात को जब रियासत पर हुए आक्रमण को विफल करने के लिए भारतीय सैनिक भेजे गये, तो भारत के प्रधान मंत्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने रियासत की रक्षा करने और उसके बाद संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्तर्राष्ट्रीय तत्वावधान में जनमत संग्रह कराने की स्पष्ट प्रतिज्ञा की। दूसरे ही दिन नेहरूजी ने पाकिस्तान

के प्रधान मन्त्री को निम्नलिखित तार भेज कर अपने इस प्रस्ताव को दोहराया 'मैंने भारत सरकार की नीति बता दी है और यह स्पष्ट कर दिया है कि हमारा इरादा काश्मीर की इच्छा के विरुद्ध कोई काम करने का नहीं है, बल्कि हम तो प्रश्न का अन्तिम निर्णय काश्मीर की जनता पर ही छोड़ देना चाहते हैं। मैंने यह भी बता दिया है कि हम जनमत संग्रह की देख भाल संयुक्त राष्ट्र संघ जैसी एक निष्पक्ष अन्तर्राष्ट्रीय संस्था द्वारा कराने को राजी हैं।'

पाकिस्तानी प्रधान मन्त्री श्री लियाकत अली खां ने यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया और ४ नवम्बर १६४६ के अपने ब्राडकास्ट में कहा 'जनमत संग्रह से इस समय लाभ ही क्या है, जब निर्वाचक अपने घरों से भगा दिये गये हों या मौत उन्हें खामोश कर चुकी हो।'

८ नवम्बर १६४७ को भारत के प्रधान मन्त्री ने पाकिस्तान के प्रधान मन्त्री के पास एक और तार भेजकर उनसे अनुरोध किया कि भारत तथा पाकिस्तान की सरकार को मिलकर संयुक्त राष्ट्र संघ से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह काश्मीर में यथा संभव शीघ्रातिशीघ्र जनमत संग्रह कराने का उद्योग करे। किन्तु इस अनुरोध का कोई उत्तर प्राप्त नहीं हुआ।

उन उद्धृत किये गये वक्तव्यों के बावजूद, मुश्ताक अहमद गुरमानी अब कहते हैं कि 'पाकिस्तान सरकार ने तो बहुत पहले अर्थात् नवम्बर १६४७ में सुझाव रखा था कि काश्मीर का सारा झगड़ा फैसले के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ को सौंप दिया जाय। भारत के प्रधान मन्त्री ने उत्तर में कहा कि संयुक्त सुरक्षा परिषद इस झगड़े का फैसला करने की स्थिति में नही है।

यथापूर्व समझौते का पाकिस्तान द्वारा गलत अर्थ

जनवरी १६४८ में भारत द्वारा सुरक्षा परिषद् में शिकायत पेश किये जाने पर पाकिस्तान सरकार ने जो उत्तर दिया, उसमें यथा पूर्व समझौते का सही विवरण दिया है। किन्तु अब पाकिस्तान सरकार यह व्यर्थ दावा पेश कर रही है कि रक्षा, परराष्ट्र विषय और डाक-तार पाकिस्तान के साथ हुए यथापूर्व समझौते के अन्तर्गत थे। वास्तविकता यह है कि १५ अगस्त, १६४७ से ठीक पहले काश्मीर सरकार के प्रधान मन्त्री ने पाकिस्तान को तार दिया कि 'जम्मू-काश्मीर सरकार पाकिस्तान के साथ उन सभी विषयों के बारे में यथा पूर्व समझौते का स्वागत करेगी, जिनके बारे में इस समय ब्रिटिश-भारतीय सरकार के साथ किये गये इकरार नामे मौजूद हैं। तजवीज यह है कि ब्योरेवार बातों के तय होने तथा समझौता होने तक के लिए मौजूदा व्यवस्था जारी रहे। ठीक इसी प्रकार का एक तार इसी समय भारत सरकार के पास भी भेजा गया। १५ अगस्त १६४७ के अपने उत्तर में, सरकार ने कहा—ब्यौरेवार बातों के तय होने तथा नया समझौता होने तक के लिए मौजूदा व्यवस्था जारी रखने के लिए पाकिस्तान सरकार जम्मू-काश्मीर सरकार से पूर्व समझौता करने को राजी है।' भारत सरकार ने अपने उत्तर में काश्मीर सरकार को अपना एक ऐसा प्रतिनिधि दिल्ली भेजने के लिए निमंत्रित किया, जो इस मामले पर बातचीत कर सके।

काश्मीर सरकार के तार में जिन इकरारनामों का जिक्र किया गया था, वे जकात, संवादवाहन, डाकतार, सिविल सप्लाईज आदि के संबंध में किये गये इकरारनामें थे। इन इकरार-

नामों में परराष्ट्र विषय अथवा रक्षा अर्थात् सेना विभागों को शामिल करने की कोई बात नहीं थी। पाकिस्तान सरकार स्वयं नहीं समझती थी कि उसके और जम्मू व काश्मीर सरकार के बीच यथापूर्व समझौता मौजूद है। यह बात उस तीसरे दस्तावेज के १५ वें पैरा से स्पष्ट हो जाती है, जिसे सर जफरुल्ला खां ने भारत की शिकायत के उत्तर में अपने १५ जनवरी १९४८ के पत्र के साथ सुरक्षा परिषद में पेश किया था। इस पैरा में कहा गया था कि '१५ अगस्त १९४७ को जम्मू व काश्मीर रियासत अन्य रियासतों की ही भांति किसी भी डोमिनियन में सम्मिलित होने या न होने केलिए स्वतन्त्र थी। उसने पाकिस्तान के साथ यथा-पूर्व समझौता किया, जिसके अनुसार अन्य बातों के साथ ही साथ डाक-तार व्यवस्था का शासन- प्रबन्ध पाकिस्तान को सौंप दिया गया। चूंकि रियासत से बाहर के सारे रास्ते पाकिस्तान में पड़ते हैं, इसलिये बाहर से भेजा जानेवाला कोई भी सामान पाकिस्तान होकर ही रियासत में पहुँचता है।' इसके बाद १७ जनवरी १९४८ को फिर सुरक्षा-परिषद के अपने भाषण में सर जफरुल्ला खां ने कहा, 'सुरक्षा परिषद को कल मैं समझा चुका हूँ कि यथापूर्व समझौते का का अर्थ क्या है। काश्मीर ने अपनी संवादवाहन, सप्लाईज और डाक-तार व्यवस्था के सम्बन्ध में पाकिस्तान से यथापूर्व समझौता किया था। यह समझौता १५ अगस्त को लागू हो गया था।

यदि पाकिस्तान ने वास्तव में यह समझ रखा था कि तारों के आदान-प्रदान का मतलब परराष्ट्र विषयों तथा रक्षा व्यवस्था के सम्बन्ध में यथापूर्व समझौते से है, तो यह उल्लेख-

नीय है कि १५ अगस्त १६४७ के बाद पाकिस्तान, जम्मू काश्मीर तथा भारत की सरकारों के बीच अनेक तारों का जो आदान-प्रदान हुआ, उनमें यथापूर्व समझौते के इस पहलू का कोई जिक्र तक नहीं किया गया।

जिन्ना और लीग द्वारा प्रतिक्रियावादी नरेशों का समर्थन

पाकिस्तान केवल शासक की इच्छा को ही किसी रियासत के भारत या पाकिस्तान में मिलने की कसौटी समझता था, परन्तु भारत जनता की इच्छा को प्रधान मानता था। काश्मीर के भारत में सम्मिलित होने से सम्बन्धित घटनाओं पर प्रकाश डालते हुए बजमी नामक एक प्रसिद्ध लेखक ने लाहोर के एक दैनिक पत्र 'अहसान' में लिखा था:—'१५ अगस्त को सत्ताहस्तान्तरण के समय, काश्मीर में ऐसी स्थिति थी कि कांग्रेस का तो वहां के राजनीतिक आंदोलन से सीधा सम्बन्ध था, परन्तु मुस्लिम लीग का सम्बन्ध सर्वथा टूट चुका था और वह रियासत के भविष्य का निर्णय करने के संबन्ध में जनता के अधिकार का समर्थन न करके वहां के शासक के अधिकार का समर्थन कर रही थी। जब महाराजा ने काश्मीर के भारत में सम्मिलित होने की घोषणा की, तो पाकिस्तान पर वज्रपात सा हो गया। पर चूंकि मि० जिन्ना स्वयं लीग का यह सिद्धांत बता चुके थे कि रियासत के भविष्य के निर्णय का अधिकार केवल राजा को है, पाकिस्तान इस प्रश्न को उठाने में असमर्थ रहा इसके बाद पठान मुजाहिदों के रियासत में घुस जाने से स्थिति

और भी बिगड़ गई, क्योंकि उन्होंने बिना किसी प्रकार के विचार के सभी जातियों के लोगों को लूटा और मारा। महाराज के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष करते रहने के कारण, काश्मीर की जनता में महाराज के प्रति एक प्रकार की घृणा सी उत्पन्न होगई थी। जब उसे यह विदित हुआ कि महाराजा के विरुद्ध पाकिस्तान उसकी सहायता करने के लिये तैयार नहीं है, तो उसने भी काश्मीर का भारत में मिलना स्वीकार कर लिया। उसको यह विश्वास था कि कांग्रेश महाराजा के विरुद्ध उसकी सहायता करेगी।'

अन्त में बज्मी ने लिखा है कि भारतको पूर्ण समर्थन महाराजा की ओर से नहीं, शेख अब्दुल्ला की नेशनल कान्फ्रेन्स और उसके नेताओं की ओर से मिला है। नेशनल कान्फ्रेन्स काश्मीर में १९३० से राजनीतिक आंदोलन का संचालन कर रही है और उसके नेता अत्यन्त लोकप्रिय बन गये हैं। यह सब कुछ होते हुए भी, लीग ने शेख अब्दुल्ला से समझौता करने के बजाय, केवल उन्हीं विद्रोहियों की सहायता पर निर्भर रहना अधिक उचित समझा, जिनको न तो किसी प्रकार का समर्थन प्राप्त था और न जिन्हें काश्मीर में कोई जानता ही था।

काश्मीर में साम्प्रदायिक दंगों का अभाव

४ अक्तूबर १९४७ को श्रीनगर में एक विशाल सभा में भाषण देते हुए शेख मुहम्मद अब्दुल्ला ने कहा था 'मैं यहां के हिन्दुओं और सिखों को विश्वास दिलाता हूँ कि जब तक मैं जीवित हूँ, उनका जीवन और सम्मान बिलकुल सुरक्षित है। इस संकट काल में काश्मीर ने प्रकाश दिखाया है। जब हमारे चारों

और भाई भाई एक दूसरे का गला काट रहे हैं, काश्मीर हिन्दू-मुसलिम एक्य के लिये आवाज उठा रहा है। परमात्मा एक है। जब मैं यह सुनता हूँ कि धर्म के नाम पर लोगों का बध किया जा रहा है तो मेरी गर्दन शर्म के मारे झुक जाती है।'

१७ अक्तूबर को उन्होंने कहा, मैं परमात्मा को धन्यवाद देता हूँ कि नेशनल कान्फ्रेन्स के कार्यकर्ताओं के अथक प्रयत्नों के कारण रियासत में न तो कोई विक्षोभ है और न कोई कष्ट ही।'

महात्मा गान्धी ने भी काश्मीर में हिन्दू-मुसलिम ऐक्य की सराहना की। २७ नवम्बर को प्रार्थना के अन्त में भाषण देते हुए उन्होंने कहा, 'यदि काश्मीर में ऐसी ही एकता बनी रही, तो वह समस्त भारत के लिये साम्प्रदायिक एकता का उदाहरण बन जायगा।'

हमला वरों की बर्बरता

जम्मू और काश्मीर के प्रधान मन्त्री शेख मुहम्मद अब्दुल्ला ने १८ नवम्बरको एक वक्तव्य देते हुए कहा—जो आक्रामक पाकिस्तान के नाम पर हमें यह विश्वास दिलाने आये थे कि ये इसलाम धर्म के सच्चे सेवक हैं, उन्होंने हमारे देश को भस्मसात् कर दिया, हमारे घरों को बर्बाद कर दिया, स्त्रियों का सतीत्व नष्ट कर दिया और हमारे सैकड़ों गांवों को मिट्टी में मिला दिया। पाकिस्तान के इन भक्तों ने कुरान जैसी पवित्र पुस्तक को भी अपवित्र कर दिया और अपहृत स्त्रियों के साथ अपनी पाशविक विषयेच्छा की तृप्ति के लिये मस्जिदों को व्यभिचार के अड्डों में परिवर्तित कर दिया। मुझे अपने देशवासी उन सिखों और

हिन्दुओं के हाल पर भी तरस आता है, जो उनके अत्याचार के लक्ष्य बने। इसी प्रकार मुझे उन ईसाइयों के साथ भी पूर्ण सहानुभूति है, जो हमलावारों द्वारा मारे गये और बर्बाद हुए।'

बारामूला के ईसाई मठ में हमलावारों ने जो हत्यायें कीं, उनके सम्बन्ध में रावलपिण्डी (पाकिस्तान) में १६ नवम्बर को एक वक्तव्य देते हुए एक प्रत्यक्ष द्रष्टा ने कहा था—

'२७ अक्तूबर को कबीले वालों का एक दल मठ के अन्दर घुस गया। कर्नल डाइक्स ने अपने कमरे से बाहर निकल कर उनसे कहा कि वे उस पवित्र स्थान को न लूटें। हमला वरों ने इसका उत्तर उन्हें गोली मार कर दिया। परन्तु इस बात से उनको बड़ी बेचैनी हुई कि एक अंग्रेज कर्नल मारा गया और उसकी स्त्री यह बात दूसरों से कह देगी। इस लिये उन्होंने उसे भी मार दिया और उन सब को एक कुए में फेंक दिया। पति-पत्नी को मार कर हमलावारों ने उस स्थान को लूटा और लूट के माल को वे लारियों में भर कर ले गये।

मठ को लूट कर हमलावर अस्पताल की ओर गये। डाक और तार के एक अवकाश प्राप्त अफसर श्री ब्रेटो व उनकी पत्नी (एक डाक्टर) और नर्स कमरे के अन्दर थी। जब हमलावरों ने दरवाजा खटखटाया तो सबने आत्म-समर्पण करने और अपना सारा नगदी और जवाहरात हमलावरों को देने का निश्चय कर लिया। दरवाजा खुलने पर हमलावर भीतर घुस गये। सब चीजें उनके सामने रख दी गयीं। परन्तु जब श्री ब्रेटो निकल कर बाहर खड़े हुए, तो हमलावरों ने उन्हें मारने की धमकी दी। श्री ब्रेटो ने कहा कि 'आप हमें मारते क्यों हैं, हम तो आपको सब

कुछ दे चुके इतने में श्री ब्रेटो के तीन गोलियां लगी और वे थोड़ी ही देर में चल बसे। इसके बाद अधिष्ठात्री की जांघ में गोली लगी। दूसरी मठशासिनियों को भी गोली से मार दिया गया। अन्त में हमलावार गिरजाघर पहुँचे और वहां ईसामसीह की समस्त मूर्तियों को तोड़ डाला, समस्त पवित्र स्थानों और वस्त्रों को लूट लिया परन्तु पुजारियों को छोड़ दिया।'

इस विषय में इस बात का उल्लेख करना अप्रासंगिक न होगा कि जिस समय काश्मीर रियासत ने पाकिस्तान से यथा स्थिति समझौता किया था, उसी समय उसने भारत से भी यह समझौता करने को कहा था। भारत सरकार ने इसके लिए काश्मीर सरकार के एक प्रतिनिधि को बात-चीत के लिए बुलाया था, किन्तु काश्मीर की सरकार के बदल जाने और बाद में उस पर हमला होने के कारण कोई प्रतिनिधि भारत नहीं आ सका। जम्मू और काश्मीर की सरकार भारत व पाकिस्तान दोनों से एक साथ ऐसा यथास्थिति समझौता करने के लिए प्रार्थना करती जिसमें विदेश सम्पर्क और रक्षा भी शामिल होते, यह मान सकना नितान्त असम्भव है।

पाकिस्तान की दूसरी व तीसरी आपत्तियों का उत्तर देने के लिए काश्मीर के भारत प्रवेश से पहले की घटनाओं को स्मरण करा देना ही पर्याप्त है।

काश्मीर ने पाकिस्तान के साथ यथा स्थिति समझौता किया था, किन्तु पाकिस्तान ने उसका भंग करके काश्मीर पर पहले तो आर्थिक घेरा डाल दिया। बाद में उसने कबाइलियों को

काश्मीर पर हमला करने के लिए उकसाया और उन्हें सहायता दी। कबाइलियों तथा पाकिस्तान के नियमित सैनिकों ने काश्मीर घाटी पर चढ़ाई कर दी तथा किसी को भी नहीं छोड़ा।

अगर गुरमानी की यह युक्ति ठीक है कि पाकिस्तान के साथ काश्मीर के यथास्थिति समझौते में विदेशी मामले और रक्षा भी शामिल हैं तो भारत सरकार के लिए यह करना बड़ा आसान था कि वह भी उसी दिन जिस दिन पाकिस्तानने काश्मीर के साथ यथास्थिति समझौते को स्वीकार किया, काश्मीर की प्रवेश प्रार्थना स्वीकार कर लेती और तब भारत को जैसा कि पाकिस्तान कहता है, काश्मीर को अपने साथ मिलाने के लिए बल प्रयोग और धोखाधड़ी की आवश्यकता नहीं पड़ती। किन्तु यह पहले ही कहा जा चुका है कि यथास्थिति समझौते में विदेशी मामलों और रक्षा के भी शामिल होने की युक्ति में कोई सार नहीं भारत की सेनायें काश्मीर में केवल हमलावरों की रोकथाम करने के लिए गई, अगर भारत ऐसा न करता, तो उसका परिणाम केवल एक ही हो सकता था—भारत व पाकिस्तान का युद्ध।

अगर किसी ने जम्मू और काश्मीर रियासत को अपने में शामिल कराने के लिये बल का प्रयोग किया है, तो वह पाकिस्तान है, अगर किसी ने उसको अपने साथ मिलाने के लिये दगा किया है, तो वह पाकिस्तान है।

महाराजा को काश्मीर का भाग्य भारत के साथ जोड़ने का कोई अधिकार नहीं, इस आरोप के उत्तर में पत्र में कहा गया है कि भारत के साथ शामिल होने की उनकी प्रार्थना को शेख अब्दुल्ला का समर्थन प्राप्त था, जो काश्मीर के सबसे अधिक लोकप्रिय दल के नेता हैं।

श्री गुरमानी का यह कहना कि अधिकांश काश्मीरी पाकिस्तान के साथ मिलना चाहते हैं, इस तथ्य से झूठा प्रमाणित होता है कि हमलावरों का प्रत्येक काश्मीरी ने यथाशक्ति मुकाबला किया है अगर कुछ भी काश्मीरी पाकिस्तान के साथ मिलने के पक्ष में होते, तो वे उस पहली भारतीय टुकड़ी का श्रीनगर के हवाई अड्डे पर उतरना ही असंभव कर देते, जो काश्मीरियों को बचाने के लिए गई थी।

पाकिस्तान की इस आपत्ति के विषय में कि काश्मीर का भारत में शामिल होना इसलिए अप्रामाणिक है कि उसके साथ एक शर्त लगी हुई है—पत्र में श्री गोपाल स्वामी आयंगर के सुरक्षा परिषद में दिये गये भाषण के इस अंश की ओर ध्यान दिलाया गया है:—

प्रवेश पत्र अपने आप में एक पूर्ण दस्तावेज है। काश्मीर का प्रवेश पत्र किसी शर्त से नहीं बंधा हुआ। उसमें यह नहीं कहा है कि यह प्रवेश अस्थायी है। भारत ने जनमत की इच्छा की जो शर्त रखी है वह प्रवेश पत्र के साथ पृथक रूप में जोड़े हुए एक पत्र में थी। भारत सरकार अपने वचन से अवश्य बंधी हुई है किन्तु प्रवेश को अस्थायी कहना गलत है।

काश्मीर का भारत प्रवेश २६ अक्तूबर, १६४७ को जब उस पर हस्ताक्षर हुए पूर्ण हो गया था और वह तभी से कार्यरूप में भी आगया। काश्मीर के भारत में शामिल होने की वैधानिकता पर न तो काश्मीर कमीशन ने और न सुरक्षा परिषद ने ही कोई आपत्ति उठाई है।

पाकिस्तान ने यह भी शिकायत की है कि भारत सरकार ने अपनी विधान परिषद् में महाराजा को काश्मीर के चार प्रतिनिधि भेजने के लिए कह कर काश्मीर कमीशन के ५ जनवरी १९४९ के प्रस्तावों को स्वीकार करने से अपने ऊपर आई हुई जिम्मेदारियों से बचने का प्रयत्न किया है।

किंतु भारत सरकार की राय में जब तक काश्मीर की जनता विरोधी निर्णय न कर दे तब तक उसे वैधानिक दृष्टि से भारत में शामिल हुआ समझा जायेगा। भारत के विधान में जब कि उसके साथ शामिल होने वाली रियासतों से उसके संबंध का निर्धारण किया जारहा है, तब जम्मू व काश्मीर की रियासत के प्रतिनिधियों को इस विचार-विमर्श में भाग लेने से वञ्चित रखना अन्याय होता। विधान परिषद् में काश्मीर के सदस्यों के बैठने से भारत के इस वचन पर कोई असर नहीं पड़ता कि काश्मीर के भविष्य का निर्णय वहां की जनता की स्वतन्त्र इच्छा से किया जायगा।

शान्ति पूर्ण जनमत में अगर काश्मीरियों ने भारत में शामिल रहने के निर्णय को पलट दिया तो भारत की लोक-सभा में काश्मीर का प्रतिनिधित्व स्वतः ही समाप्त हो जायगा और भारत व काश्मीर के सम्बन्धों का नियमन करने वाली व्यवस्थाएं भी स्वतः ही बेकार हो जायेंगी।

आज़ाद काश्मीर सेनाओं की स्थिति

पाकिस्तान का कहना है कि भारत ने काश्मीर कमीशन के १३ अगस्त के प्रस्ताव को स्वीकार करने के बाद आज़ाद-काश्मीर सेनाओं को भंग करने की शर्त पीछे से जोड़ी है।

कमीशन के साथ भारतीय प्रतिनिधियों की जो बात चीत हुई है उससे कमीशन को भारत के पक्ष की सही जानकारी होगी १३ अगस्त, १६४८ के प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए भारत सरकार ने यह स्पष्ट कर दिया था कि काश्मीर की सुरक्षा भारत का प्रमुख कर्तव्य है। किन्तु आजाद काश्मीर सेनाओं की संख्या ३२ बटालियन तक पहुच जाने की वजह से काश्मीर की रक्षा के अपने दायित्व को निभाने के लिये यह आवश्यक हो गया कि वह आजाद काश्मीर सेनाओं के विघटन की मांग करे। भारत सरकार ने एक बार कमीशन को जब यह स्पष्ट कर दिया कि काश्मीर की सुरक्षा का पूरा दायित्व उस पर है तब उसकी सुरक्षा पर अगर कोई खतरा आता है, तो उसके कर्तव्य का तकाजा है कि पहले वह उस खतरे को दूर करें।

उत्तरी पहाड़ी इलाके

पाकिस्तान के काश्मीर मन्त्री की युक्ति है कि कमीशन के १३ अगस्त, १६४८ के प्रस्ताव में आजाद काश्मीर इलाकों के लिए जैसी व्यवस्था की गई है, वैसी ही व्यवस्था उत्तरी पहाड़ी इलाकों की होनी चाहिए। किन्तु इस युक्ति का श्री कार्बल के २५ अगस्त, १६४८ के पत्र से प्रतिवाद हो जाता है, जो उन्होंने भारत के प्रधान मन्त्री के पत्र के उत्तर में लिखा था। अगर कमीशन का अभिप्राय यह होता कि उत्तरी पहाड़ी इलाकों के खाली किये जाने पर काश्मीर सरकार या भारत सरकार के किसी अधिकारी को वहां नहीं जाने दिया जायगा तो वह स्पष्ट ही वैसा कह देता। किन्तु कमीशन की ओर से श्री कोर्बल ने प्रधान मन्त्री के उत्तर में

लिखा है कि 'आपने अपने पत्र में जो प्रश्न उठाए हैं उन पर प्रस्ताव को क्रियान्वित करते समय विचार किया जा सकता है।

अन्त में श्री वाजपेयी ने अपने पत्र में लिखा है, कि भारत सरकार ने जो कोई भी वचन दिया हुआ है, उस पर वह कायल है, केवल उन वायदों की पूर्ति मौजूद तथ्यों से सम्बन्धित होनी चाहिए और उनका झूठी और काल्पनिक युक्तियों से हेर-फेर नहीं किया जाना चाहिये।

ह० जी० एस० वाजपेयी

जबकि इसी बीच पाकिस्तान के पर्यटक राजदूत श्री नवाब मुश्ताक गुरमानी ने ओटावा के एक पत्रकार-सम्मेलन में कहा कि हमारे लिए काश्मीर एक राष्ट्रीय जीवनधारा है, किन्तु भारत के लिए वह एक ट्राफी के समान है।

उन्होंने कहा कि भारत की आधी से अधिक सेना काश्मीर में है। पाकिस्तान काश्मीर से किसी भी समय अपनी सेनायें हटाने को तैयार है बशर्ते कि जनमत को संभव बनाने के लिए भारत भी उसी समय अपनी सेनायें हटा ले।

उन्होंने कहा कि विभाजन के बाद पाकिस्तान एक बहुत अच्छी सेना निर्माण करने में कामयाब हुआ है, किन्तु बहुत महंगी कीमत पर।

श्री गुरमानी ने यह भी कहा कि पाकिस्तान अधिकांश हथियार कनाडा से खरीद रहा है। सन् १९४९ के प्रथम १० महीनों में कनाडा ने पाकिस्तान को ७६,००,००० डालर के कारतूस बन्दूकें व रायफलें बेचीं।

पाकिस्तान ने भारत के साथ काश्मीर के विवाद में जो यह नई युक्ति प्रस्तुत की थी कि पाकिस्तान के साथ काश्मीर का यथा स्थिति समझौता होने की वजह से वह भारत में शामिल नहीं हो सकता, उसके उत्तर में कमीशन के नाम लिखे एक पत्र में श्री गिरजाशंकर वाजपेयी ने यह बताया है, कि पाकिस्तान की इस युक्ति में कोई सार नहीं। यह केवल उसकी एक नई पैंतरेबाजी है।

काश्मीरी प्रतिनिधियों के भारतीय विधान परिषद् में शामिल होने के प्रश्न पर पाकिस्तान ने जो आपत्ति उठाई है, उसके उत्तर में श्री बाजपेयी ने कहा है कि काश्मीर का भारत में शामिल होना सर्वथा वैधानिक है। और इस रूप में उसके प्रतिनिधि अवश्य ही भारत की विधान परिषद् में बैठ सकते हैं। उन्हों ने कहा है कि काश्मीर के भारत-प्रवेश की वैधानिकता में न तो काश्मीर कमीशन ने ही और न सुरक्षा परिषद् ने कोई आपत्ति उठाई है।

पाकिस्तान के इस आरोप का उत्तर देते हुए कि भारत ने काश्मीर को बल और धोखाधड़ी से अपने साथ मिलाया है, श्री बाजपेयी ने अपने पत्र में लिखा है, कि काश्मीर पर अगर किसी ने बल प्रयोग किया है, तो वह पाकिस्तान है, अगर किसी ने धोखाधड़ी की है तो वह पाकिस्तान है।

श्री बाजपेयी ने आजाद काश्मीर सेनाओं के विघटन तथा उत्तरी पहाड़ी इलाकों के शासन के प्रश्न पर भी भारत सरकार का दृष्टिकोण स्पष्ट किया है।

श्री गिरजा शंकर का यह पत्र नवाब गुरमानी के उस पत्र के उत्तर में लिखा गया था, जो उन्हों ने काश्मीर कमीशन को १ अक्तूबर १९४९को लिखा था, और जो सुरक्षा परिषद् में काश्मीर कमीशन की रिपोर्ट के साथ प्रकाशित हुआ है।

पत्र इस प्रकार है:—

महोदय,

१२ अक्तूबर को हमें श्री एरिक कोल्बन का पत्र मिला जिस में पाकिस्तान के काश्मीर मामलों के मन्त्री नवाब गुरमानी का कमीशन के नाम लिखा हुआ पत्र भी था। भारत सरकार को खेद है कि प्रधान मन्त्री की अनुपस्थिति के कारण वह श्री गुरमानी के पत्र पर अपने विचार पहले प्रकट नहीं कर सकी। अब यह जो दृष्टिकोण प्रस्तुत किया जारहा है, आशा है, कमीशन उस पर अच्छी तरह विचार करेगा और अगर वह श्री गुरमानी के पत्र को प्रकाशित करे तो उसी समय साथ ही इस पत्र को भी प्रकाशित करेगा।

नवाब गुरमानी का पत्र

पाकिस्तान के काश्मीरी मामलों के मन्त्री नवाब गुरमानी ने अपने पत्र में लिखा है:—

१. पाकिस्तान के साथ यथा स्थिति समझौते की वजह से से काश्मीर भारत के साथ कोई समझौता नहीं कर सकता।

२. महाराजा को काश्मीर व जम्मू सरकार को भारत के साथ मिलाने का कोई हक नहीं है।

३. काश्मीर का भारत में प्रवेश हिंसा और धोखे से किया गया, इसलिए वह शुरू से ही अनुचित है।

४ भारत ने महाराजा के प्रवेशप्रस्ताव को सशर्त स्वीकार किया है, इस लिए कानून में उसका कोई मूल्य नहीं।

पहली आपत्ति का उत्तर

१६४७ के भारतीय स्वाधीनता एक्ट के बनने से पहले भारतीय रियासतें ब्रिटिश ताज के आधिपत्य में थीं, वही उनकी रक्षा और विदेशी सम्बन्धों के लिए उत्तरदायी थी। ब्रिटिश ताज की ओर से रियासतों के प्रति अपने उत्तरदायित्वों का पालन ब्रिटिश भारत में उनके प्रतिनिधि वायसराय करते थे। इसके अतिरिक्त चुंगी, यातायात, व्यापार, सम्वाद, सिक्के, डाक व तारआदि के विषय में रियासतों ने ब्रिटिश भारत के प्रान्तों के साथ विविध व्यवस्थायें की हुई थीं।

१६४७ के भारतीय स्वाधीनता एक्ट के बनने के बाद रियासतों पर से ताज का आधिपत्य खतम हो गया और उसकी रियासतों के साथ जिस प्रकार की जितनी भी संधियां थीं वे सब समाप्त हो गईं। किन्तु इस एक्ट से रियासतों का प्रान्तीय सरकारों के साथ जो सम्बन्ध कायम था, उसपर कोई असर नहीं पड़ा। स्वाधीनता एक्ट में कहा गया है कि प्रान्तों के रियास्तों के साथ जो सम्बन्ध हैं वे तब तक वैसे ही रहेंगे जब तक कि रियासत प्रान्तीय अथवा केन्द्रीय सरकार ही उनको भंग करनेकी घोषणा न करदे, या उनमें कोई नई व्यवस्था कायम होजाये। १२ अगस्त १६४७ को काश्मीर के प्रधान मन्त्री ने पाकिस्तान सरकार को तार दिया था, कि वह उसके साथ यथास्थिति समझौते का स्वागतकरेगी और यह कहा कि कोई नई व्यवस्था

होने तक वर्तमान व्यवस्था ही जारी रहे । १६ अगस्त, १६४७ को पाकिस्तान सरकार काश्मीर के प्रधान मन्त्री की इस बात पर राजी होगई ।

इन तारों में जिन बातों का उल्लेख किया गया है, उसमें चुंगी, यातायात सम्वाद सम्पर्क, डाक व तार तथा रसद आदि शामिल हैं । इन समझौतों का विदेशी मामलों और रक्षा आदि से कोई सम्बंध नहीं ।

पाकिस्तान के विदेश—मन्त्री श्री जफरूल्ला ने १५ जनवरी १६४८ को सुरक्षा परिषद में भारत की शिकायत के उत्तर में जो तीसरा दस्तावेज प्रस्तुत किया था उसके १५वें पैराग्राफ में कहा गया है कि १५ अगस्त १६४७ को जम्मू व काश्मीर रियासत को भी अन्य रियासतों के सदृश किसी भी डोमीनियन में शामिल होने या किसी में भी शामिल न होने की पूरी छूट थी। काश्मीर ने पाकिस्तान के साथ यथा पूर्व समझौता किया, जिसके अन्तर्गत काश्मीर की डाक और तार की व्यवस्था पाकिस्तान को सौंप दी गई ।

इस बात की कल्पना नहीं की जा सकती कि अगर पाकिस्तान सरकार इस यथा स्थिति समझौते में रक्षा और विदेश सम्पर्क को भी शामिल समझती तो सुरक्षा परिषद में जनवरी से अप्रैल १६४८ तक की बहस में यह उस प्रश्न को क्यों नहीं उठा सकी। इस लिए श्री जफरूल्ला ने उस समय रियासत की जो वैधानिक स्थिती चित्रित की है उसके कारण पाकिस्तान का यह नया दावा खतम हो जाता है कि उसके साथ यथा स्थिति समझौते के कारण काश्मीर भारत के साथ सम्मिलित नहीं हो सकता था ।

मैकनाटन के नये प्रस्ताव

जनरल मैकनाटन के प्रस्ताव मुख्यतः संयुक्त राष्ट्र संघ के काश्मीर कमीशन की रिपोर्ट पर आधारित थे, अतः उन्होंने मध्यस्थता के रूप में जो प्रयत्न किया वह असफल प्रमाणित हुआ।

काश्मीर कमीशन में चेक प्रतिनिधि डा० ओल्डरिश चिले ने सुरक्षा परिषद् को जो रिपोर्ट दी थी, उससे एक आधारभूत समस्या और खड़ी हो गई है, जो इस सम्बन्ध में काफी महत्व रखती है।

काश्मीर-कमीशन की मुख्य रिपोर्ट कमीशन के १३ अगस्त १६४८ व ५ जनवरी १६४६ के प्रस्तावों पर आधारित है। परन्तु चिले का विचार है कि ये दोनों प्रस्ताव, जो प्रत्येक वार्त्ता की शुरूआत रहे हैं, जम्मू व काश्मीर रियासत की वास्तविक वर्त्तमान स्थिति से मेल नहीं खाते है। अतएव उनके आधार पर ऐसा समझौता नहीं किया जा सकता, जो दोनों सरकारों को मान्य हो।

काश्मीर कमीशन की रिपोर्ट ने मामलों को बहुत अधिक संक्षिप्त कर दिया था उदाहरण के तौर पर काश्मीर कमीशन ने भारत व पाकिस्तान को तथा जम्मू-काश्मीर सरकार व 'आजाद' सरकार को बराबर कर दिया अतः परिणाम यह हुआ है कि उनकी रियासत के निःशस्त्रीकरण की जो योजना है वह दोनों ओर लागू होती है। इसका अभिप्राय यह है कि यदि 'आजाद'

सेना की ३२ टुकड़ियां निःशस्त्र कर दी जाए तथा पाकिस्तानी सेनाएं हटाली जाएं, तो भारत को भी काश्मीर रियासत की सैन्य शक्ति कम करनी पड़ेगी और उसे अपनी काफी सेना हटानी पड़ेगी।

वास्तविक खतरा

परन्तु ऐसी स्थिति खतरे से परिपूर्ण है और वह भारत-सरकार को मान्य नहीं होसकती। यदि ३२ टुकड़ियों को निःशस्त्र भी कर दिया जाए, फिर भी इन अनियमित सैनिकों की ओर से खतरा हमेशा बना रहेगा। अतः इस स्थिति का सामना करने के लिए भारत के पास काफी सशस्त्र सैन्य शक्ति होनी चाहिये। वास्तव में काश्मीर में पाकिस्तान का कोई अधिकार नहीं है, जबकि भारत पर उसकी सुरक्षा का दायित्व है तथा उस के पास इसकी रक्षा के लिए उचित साधन भी होने जरूरी हैं।

यह खतरा वास्तविक है—उस घटना से इस बात का समाधान हो जाता है, जो कि इस वर्ष अप्रैल मास में हुई थी, जबकि पाकिस्तान ने अपनी अनियमित सेना हिन्दवाड़ा क्षेत्र में कब्जा करने के लिए भेजी थी।

भारत काश्मीर से अपनी सेनाएं हटाने के लिए तैयार है, परन्तु यह उसी समय तक के लिए है, जबतक कि वहां के लोगों को कोई खतरा नहीं होता है। शांति पूर्ण परिस्थितियां, जिनके अन्तर्गत लोग स्वतन्त्रता पूर्वक मत दे सकें, तभी उत्पन्न हो सकती है, जबकि रियासत की सुरक्षा को खतरा न हो।

मैकनाटन द्वारा पाकिस्तान को भारत के समान दर्जा

—:★:—

भारत, जम्मू क्षेत्र से सेनायें हटाने के मैकनाटन के प्रस्ताव को अस्वीकार कर देगा, क्योंकि यह प्रस्ताव भारत की इस स्पष्ट मांग के बिल्कुल विपरीत है कि भारतीय सेनायें राज्य में कम करने से पूर्व रियासत से सब पाकिस्तानी और आजाद काश्मीरी सेनायें हटाली जानी चाहियें।

जनरल मैकनाटन ने यह प्रस्ताव किया बताते हैं कि दोनों सेनायें समान रूप से हटाई जायें।

काश्मीर के पश्चिमी भाग में जो ३२००० आजाद काश्मीरी सैनिक है जिन्हें पाकिस्तान ने शिक्षित किया है वैसे ही समझे जायेंगे जैसे भारतीय नियंत्रण के क्षेत्र में जम्मू और काश्मीरी सेनायें।

जनरल मैकनाटन के प्रस्ताव का यही अर्थ लगाया गया है कि इससे इस मामले में जहां तक सेनाओं की कमी का प्रश्न है पाकिस्तान को भारत के बराबर दर्जा दिया गया है और आजाद काश्मीर सेना को अपने वर्तमान क्षेत्र में सुरक्षा कायम रखने के लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया गया है।

भारत अपनी स्थिति से नहीं हटेगा और चूंकि जम्मू और काश्मीर के महाराजा ने रियासत को विधिवत् भारत में प्रविष्ट कर

दया है, इसलिये पाकिस्तानी सेनायें वहां आक्रमणकारी की स्थिति में हैं, और उन्हें वहां रहने का कोई अधिकार नहीं है।

कनाडी प्रतिनिधि दल के एक प्रवक्ता ने कहा कि भविष्य में जनरल मैकनाटन द्वारा पूरे तथ्य प्रस्तुत किये जायेंगे।

भारतीय प्रतिनिधि श्री बेनेगल नरसिंहराव ने संयुक्त राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् में कहा कि जनरल मैकनाटन के काश्मीर में जनमत संग्रह सम्बन्धी प्रस्तावों में उस प्रश्न के कानूनी और नैतिक पहलुओं की उपेक्षा की गई है।

श्री राव ने कहा इन प्रस्तावों से वे सब आश्वासन व्यर्थ या निर्मूल हो जायेंगे, जिनके आधार पर भारत ने काश्मीर कमीशन के १३ अगस्त, १९४८ और ५ जनवरी, १९४९ के प्रस्ताव स्वीकार किये थे।

श्री राव ने परिषद् के समक्ष ७५ मिनट तक भाषण किया, जिसमें उन्होंने 'कुछ गहरी जमी हुई गलत खयालियों को, जिनके कारण भारत का मामला ठीक तरह से समझा नहीं गया' स्पष्ट करने का प्रयत्न किया।

उन्होंने पाकिस्तान पर दोषारोपण करते हुए कहा, काश्मीर में सैनिक हस्तक्षेप से प्रारम्भ करके जिससे आरम्भ में इन्कार किया गया था, पाकिस्तान जनमत-संग्रह के मार्ग में एक के बाद दूसरी बाधाएं उत्पन्न करता गया। उन्होंने सुरक्षा परिषद् को यह अध्ययन करने की सलाह दी कि किसने एक के बाद दूसरी बाधाएं उत्पन्न कीं और कहा:—'और फिर भी इस अंधी दुनिया में लगातार भारत पर ही विलम्ब आदि का दोष मढ़ा जा रहा है।

श्री राव ने जनरल मैकनाटन के साथ हुए मौखिक तथा लिखित विचार-विमर्श के सम्बन्ध में भारतीय दृष्टिकोण पर प्रकाश डाल रहे थे। यह विचार-विमर्श काश्मीर में विराम-संधि के लिए वार्तायें करने को सुरक्षा परिषद् के आदेश से किया गया था।

नग्न आक्रमण

श्री नरसिंह राव ने कहा—'पाकिस्तान १६४८ में पूरे वर्ष इस हकीकत से इनकार करता रहा कि वह आक्रमणकारियों अथवा 'आजाद काश्मीर फौज' को मदद दे रहा था। आज स्थिति यह है कि वह स्वयं न केवल आक्रमणकारी है, वरन किसी भी जरिये से कानूनी अधिकार प्राप्त किये बिना एक राज्य के लगभग आधे प्रदेश पर अधिकृत है।

'यह नग्न आक्रमण है, जिसे कोई पसन्द नहीं कर सकता। परन्तु मैकनाटन प्रस्तावों में नापसन्दगी का चिन्ह भी नहीं है, बल्कि मामले को उलट दिया गया है। उत्तरी क्षेत्रों को वर्तमान स्थानिक अधिकारियों के शासन में रखना स्वीकार करने का परिणाम यह होता है कि उन पर पाकिस्तान का अधिकार जो गैरकानूनी है, मान लिया जाये और उसे कायम रखा जाये।'

भारतीय प्रतिनिधि ने आगे कहा—२१ अप्रैल, १६४८ के सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव में जिसके द्वारा काश्मीर कमीशन की नियुक्ति की गई थी, यह संकल्प व्यक्त किया गया था। 'जनमत-संग्रह की प्रारम्भिक कार्रवाई के रूप में सबसे पहले युद्ध के लिए काश्मीर में गये हुए कबाइलियों और पाकिस्तानी राष्ट्र-जनों को निकाल कर शांति और व्यवस्था कायम करना' काश्मीर कमीशन का उद्देश्य होगा।

आक्रमण की स्वीकृति

इसके बाद क्या हुआ ? पाकिस्तान के विदेश मन्त्री के ही कथनानुसार पाकिस्तानी सेनाएं मई के प्रारम्भ में राज्य में घुसीं। उसके केवल १५ दिन पूर्व तक पाकिस्तान की ओर से सुरक्षा परिषद की बहसों में बराबर कहा जाता रहा कि पाकिस्तान सरकार आक्रमणकारियों या आजाद काश्मीर फौज को कोई सहायता नहीं देती।

श्री राव ने कहा कि पाकिस्तान ने सुरक्षा परिषद को सूचित किये बिना काश्मीर में अपनी फौजें भेजीं, हालांकि पहले वह सुरक्षा परिषद को लिखित आश्वासन दे चुका था और उसके अनुसार वह सुरक्षा परिषद को 'स्थिति में विशेष परिवर्तनों या संभाव्य परिवर्तनों की सूचना देने के लिये बाध्य था।'

जुलाई १९४८ को जब कमीशन भारत पहुँच गया, उस समय उसे पाकिस्तान सरकार ने पहली बार सूचना दी कि काश्मीर में पाकिस्तानी फौजें मौजूद हैं।

काश्मीर कमीशन ने इसे 'स्थिति में एक भारी परिवर्तन' बताते हुए कहा कि इससे बिना शर्त युद्ध बन्द कराने के मार्ग में बाधा उत्पन्न होती है।

पहली बाधा किसने डाली ?

'आशा है सदस्य भूलेंगे नहीं,' भारतीय प्रतिनिधि ने कहा कि किसने वह पहली बाधा उत्पन्न की थी। यह केवल पहली बाधा नहीं है, वरन दूसरी सब बाधाओं का जो आज हमारी प्रगति को अवरुद्ध कर रही है, प्रत्यक्ष कारण है। पाकिस्तानी

फौजों ने न केवल राज्य पर आक्रमण किया वरन आजादकाश्मीर फौजों का नेतृत्व भी किया।

श्री राव ने पाकिस्तानी ।वदेश मन्त्री के वक्तव्य से उद्धरण देते हुए बताया कि उन्होंने स्वीकार किया था—पाकिस्तानी सेना इस समय आजाद काश्मीर फौजों के संचालन की पूर्णतया उत्तर दायी है और रणभूमि पर उन सेनाओं का नियन्त्रण पाकिस्तानी सेनाओं के हाथ में है।

इस प्रकार भारत की मूल शिकायत जिससे पाकिस्तान बराबर इन्कार करता रहा, अब सत्य सिद्ध हो गई और बढ़े हुए रूप में सिद्ध हुई।

फिर भी इस शिकायत के बारे में कोई कार्रवाई नहीं की गई।

आगे उन्होंने कहा पाकिस्तानी सेना १८ मास से काश्मीर में है और इस कालमें वह राज्य के अनेक हिस्सों में घुस गई है। उसने अराजक स्थानिक शक्तियों और अधिकारियों का संगठन भी किया है।

३२ सुसज्जित बटालियनें

श्री राव ने इसके बाद काश्मीर कमीशन की रिपोर्ट के कुछ अनुच्छेद पढ़े। उनमें कहा गया है कि १३ अगस्त, १६४८ के प्रस्ताव में एक दूसरे पहलू का लेखा नहीं था, जो बाद को एक विषम समस्या का रूप ले बैठा। यह पहलू था, आजाद काश्मीर आंदोलन में पड़ी हुई ३२ सुसज्जित बटालियनों का है।

कमीशन ने यह भी कहा था कि आजाद काश्मीर की फौजों ने पाकिस्तानी नियमित सेना के साथ और अफसरों के नेतृत्व में काम करके अपनी युद्ध-शक्ति बढ़ा ली है।

श्री राव ने काश्मीर कमीशन की रिपोर्ट का उद्धरण दिया, यदि हमने पहले से समझ लिया होता कि पाकिस्तान युद्ध-विरति काल का उपयोग 'आजाद क्षेत्र' में अपनी शक्ति दृढ़ करने में करेगा तो हमने इस प्रश्न को १३ अगस्त के प्रस्ताव में शामिल कर लिया होता।

भयानक शक्ति संगठन

श्री राव ने कमीशन के अल्पमत दल के चकोस्लोवाक सदस्य डा० चिले की रिपोर्ट से भी इसी प्रकार के उद्धरण पढ़ कर सुनायें। उसमें कहा गया था आजाद फौज के भयानक शक्ति के रूप में संगठित हो जाने से स्थिति पूर्णतया बदल गई।

इस प्रकार यह स्पष्ट है भारतीय प्रतिनिधि ने कहा, कि ये आजाद काश्मीर सेनाएं जैसी कि वे आज हैं, १९४८ के अगस्त और बसन्त काल के बीच में संगठित हुईं और यह पाकिस्तान के उस आश्वासन के बावजूद किया गया, जिसके अनुसार वह युद्ध-स्थिति काल में अपनी स्थिति सुदृढ़ न करने और अपनी युद्ध-शक्ति न बढ़ाने के लिये बाध्य था।

'सदस्य देखें कि इस दूसरी बाधा को उत्पन्न करने के लिये कौन उत्तरदायी है।'

सुरक्षा परिषद् ने दिसम्बर के महीने में जनरल मैकनाटन को काश्मीर की समस्या सुलझाने के लिये "मध्यमार्ग" निकालने

का काम सौंपा था। जनरल मैकनाटन स्वयं अपनी रिपोर्ट पढ़ कर सुनाने के लिये उपस्थित नहीं थे, अतएव उसे परिषद् के अध्यक्ष डा० कार्लस ब्लैंको क्यूबा ने पेश किया।

रिपोर्ट में जनरल मैकनाटन ने अपने २२ दिसम्बर, १९४९ के विसैन्यीकरण प्रस्ताव पर भारत और पाकिस्तान की सरकारों के उत्तर, दोनों सरकारों द्वारा सुझाये गये संशोधन और दोनों सरकारों के एक-दूसरी सरकार के संशोधनों पर विचारों को उद्धृत करते हुए दो पृष्ठों में अपना अन्तिम विचार व्यक्त किया है।

पाकिस्तानी संशोधन

पाकिस्तान ने अपने २८ दिसम्बर के उत्तर में प्रस्ताव को 'कुछ संशोधनों के साथ स्वीकार किया। उसका दावा यह था कि 'संशोधनों का उद्देश्य आपके (जनरल मैकनाटन के) लक्ष्य को अधिक स्पष्ट करना है।

पाकिस्तान की ओर से कुल ७ संशोधन पेश किये गये। इनमें से तीन पर भारत ने अपनी 'स्थिति सुरक्षित रखी'। शेष संशोधनों में से एक को छोड़ कर बाकी सब उसने अस्वीकार कर दिये।

एक संशोधन द्वारा पाकिस्तान सरकार ने जम्मू और काश्मीर में भविष्य में होने वाले सब कबाइली हमलों को बिना शर्त रोकने का आश्वासन देना स्वीकार किया, परन्तु वह जनरल मैकनाटन के प्रस्ताव के अनुसार यह आश्वासन भारत को देने के लिए राजी नहीं हुई। संशोधन में यह नहीं बताया गया कि आश्वासन किसे दिया जायेगा।

पाकिस्तान के दूसरे संशोधन में कहा गया था कि काश्मीर के प्रश्न का हल 'काश्मीर कमीशन के १३ अगस्त १९४८ और ५ जनवरी, १९४९ के प्रस्तावों के अनुसार किया जाना चाहिये।

भारतीय संशोधन

भारत के संशोधन मुख्यतः ये थे:

(१) 'आजाद काश्मीर' सेनाओं के विसर्जन या निःशस्त्रीकरण को पाकिस्तान की नियमित और अनियमित सेनाओं को हटाने के बराबर ही महत्व दिया जाये और मैकनाटन प्रस्ताव में 'काश्मीर राज्य की सशस्त्र सेनाओं' का जो उल्लेख किया गया है, उसे रद्द कर दिया जाये।

(२) जहां तक काश्मीर के उत्तरी क्षेत्रों का सम्बन्ध है, उनकी रक्षा का दायित्व भारत सरकार पर और शासन-प्रबन्ध का दायित्व जम्मू काश्मीर सरकार पर रहेगा। मैकनाटन-प्रस्ताव में कहा गया था कि उनका शासन प्रबन्ध' संयुक्त राष्ट्र संघ की देख रेख के अन्तर्गत वर्तमान स्थानिक अधिकारियों के हाथ में रहे।'

जनवरी ३ को पाकिस्तानी विदेश मंत्री श्री जफरूल्ला खां ने जनरल मैकनाटन को सूचित किया कि 'पाकिस्तान प्रतिनिधि मंडल महसूस नहीं करता कि भारतीय प्रस्ताव का विश्लेषण तथा खंडन करने से कोई लाभप्रद परिणाम होगा।

उन्होंने यह कारण बताया : 'भारत के तथा कथित संशोधनों को देखने से पता चलता है कि उन में आपका प्रस्ताव स्पष्टतः अस्वीकार किया गया है और उसके स्थान पर एक नई योजना पेश की गई है, जो उस से सर्वथा बे मेल है।

जनरल मैकनाटन का विचार

रिपोर्ट के अन्तिम भाग में जनरल मैकनाटन ने कहा है 'स्पष्ट प्रमाण के अभाव में मेरे और अधिक हस्तक्षेप करने से भारत और पाकिस्तान की सरकारों को कोई आपसी मार्ग निकाल लेने में सहायता मिलेगी, मेरा विश्वास नहीं रहा है। कि मेरा अधिक प्रयत्न करते रहना उपयोगी होगा।

'मेरा ख्याल है कि इस झगड़े को निबटाने केलिये आगे की कार्रवाई सुरक्षा परिषद ही करे।'

जनरल मैकनाटन ने बताया है कि मेरे प्रस्तावों के प्रेरक विचार दो थे। एक तो यह कि भारत और पाकिस्तान के बीच जो भी समझौता हो गया हो, उसे रद न किया जाये। दूसरा झगड़े के प्रश्नों पर अपना निर्णय देने के बदले भावी व्यवस्था करने पर ध्यान केन्द्रित किया जाये।

मैकनाटन के प्रस्ताव पर श्री राव की आलोचना

उत्तरी क्षेत्रों का जिक्र करते हुए श्री राव ने बताया कि कमीशन की रिपोर्ट में इस बात पर बहुत संदेह प्रकट किया गया है कि १९४८ की पतझड़ में इन क्षेत्रों पर पाकिस्तानी उच्च सत्ता का प्रभावशाली नियन्त्रण था। किन्तु कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार ही जनवरी १९४९ में निसन्देह रूप से पाकिस्तान का

उत्तरी क्षेत्रों पर फौजी नियन्त्रण स्थापित हो गया और वहां का शासन प्रबन्ध पाकिस्तानी अधिकारियों के सहयोग से स्थानीय अधिकारीवर्ग चलाने लगा।

दूसरे शब्दों में पाकिस्तान ने इन क्षेत्रों पर अगस्त १९४८ और जनवरी १९४९ के बीच में फौजी नियन्त्रण प्राप्त किया और पाकिस्तानी अधिकारियों ने उनके शासन प्रबन्ध में योग दिया।

श्री राव ने कहा, 'मैं एक बार फिर सदस्यों से प्रार्थना करूंगा कि वे इस बात को देखें कि जनमत-संग्रह के लिए यह तीसरी बाधा किसने उपस्थित की। पाकिस्तानी सेना को बहुत पहले पूर्ण रूप से वापस चले जाना चाहिये था और जिस विध्वंसक शक्ति व संगठन की रचना उसने अपनी अवैध उपस्थिति की अवधि में की थी, उसको पूर्णरूप से भंग कर देना चाहिए था। लेकिन ऐसी कोई बात नहीं की गई।'

'यदि १९४८ में काश्मीर कमीशन को जो नये तथ्य मालूम हुए थे उनकी रिपोर्ट वह सुरक्षा-परिषद् को दे देती तो परिषद् ने पाकिस्तानी सेना को वापस हटने का आदेश दे दिया होता जैसे कि कबाइलियों आदि को वापस हटाने का उसने आदेश दिया था। और तब न तो विध्वंसक शक्तियों को और न तथाकथित 'आजाद' शासन को पनपने का अवसर मिलता। लेकिन उस अवसर का लाभ नहीं उठाया गया।'

श्री राव ने कहा कि यदि पाकिस्तान १३ अगस्त के प्रस्ताव को तुरन्त मान लेता तो बाद में जो उपद्रव हुआ वह न हो पाता क्योंकि पाकिस्तानी फौज उस स्थिति में वापस हट गई होती जब कि 'आजाद' सेना बीज रूप में ही थी। भारत ने यह प्रस्ताव

मिलने पर एक सप्ताह में ही स्वीकार कर लिया था लेकिन पाकिस्तान ने अनेक शर्तें लगाईं जिनका अर्थ प्रस्ताव अस्वीकृत करना था।

श्री राव ने कहा कि भारतीय पक्ष यह है कि पाकिस्तानी सेना का काश्मीर में प्रवेश गलत था तथा उसकी यह एक आक्रमण कार्रवाई थी, इसी तरह उसके द्वारा 'आजाद काश्मीर सेना' की रचना तथा रियासत के बहुत बड़े भाग पर अधिकार करना पूर्णतः अनुचित एवं आक्रमण कार्रवाई थी। जनमत-संग्रह तभी हो सकता है जबकि पहले इन सब बातों का निराकरण किया जाय। पाकिस्तानी सेना की यह अवैध कार्रवाइयां कमीशन के सामने ही होती रहीं बावजूद इसके कि कमीशन भारत को इसके विरुद्ध आश्वासन दे चुका था। आक्रामक कार्रवाइयों के फलस्वरूप प्राप्त परिणामों को मान्यता देना सरासर अन्यायपूर्ण है।' श्री राव ने काश्मीर सरकार के 'सम्पूर्ण प्रभुत्व अधिकार' का उल्लेख करते हुए कहा कि ५ जनवरी १९४९ के प्रस्ताव में यह कहा गया है कि जनमत-संग्रह प्रशासक को काश्मीर व जम्मू सरकार से अधिकार प्राप्त होंगे। किन्तु यदि उत्तरी क्षेत्रों पर काश्मीर व जम्मू सरकार का आधिपत्य ही नहीं है तो जनमत संग्रह प्रशासक किस तरह उन अधिकारों का उपभोग कर सकता है? अतः जनमत-संग्रह से पहले रियासत का शासन विशृङ्खलित नहीं होने दिया जा सकता।

पाकिस्तान को रियायत

श्री राव ने बताया कि कमीशन के १३ अगस्त के प्रस्ताव को पाकिस्तान से मनवाने के लिए भारत बहुत रियायत कर चुका

है। अप्रेल १६४८ में जब मामला सुरक्षा-परिषद् के सामने से आया तो केवल २ बातें थी जो काश्मीर के जनमत संग्रह को रोके हुए थी—आक्रमणकारी की वापसी और उसके बाद भारतीय सेना को कम करना। लेकिन मई १६४८ में पाकिस्तान ने अपनी सेना भेजकर नई उलझन पैदा कर दी।

'पाकिस्तानी सेना को पीछे हटाने की शर्त के रूप में जिसे कि वहां कभी भी जाना ही नहीं चाहिए था—पाकिस्तान को यह रियायत मिल गई कि दक्षिण पश्चिम के जिन इलाकों को उसकी सेना खाली करके जायेगी वहां का शासन प्रबन्ध कमीशन की देख-रेख में स्थानीय अधिकारियों के हाथ में होगा। लेकिन पाकिस्तान इससे सन्तुष्ट नहीं हुआ और उसने २५ दिसम्बर १६४८ से पहले यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया।'

'और इसी बीच में उसने आजाद काश्मीर सेना की रचना करके दूसरी उलझन पैदा कर दी। इन सेना को विघटित और निशस्त्र करने के मूल्यस्वरूप उसे ५ जनवरी १६४६ के प्रस्ताव में और रियायतें मिल गई। और अब मैकनाटन प्रस्ताव के अन्तर्गत उसे और भी अधिक रियायतें दी जाने वाली हैं जैसे, उत्तरी क्षेत्रों का शासन प्रबन्ध वर्तमान स्थानीय अधिकारियों के हाथ में रहे। भारत इस तरह रियायतों पर रियायतें, नहीं कर सकता।'

'कहा जाता है कि शान्ति के लिए भारत को झुक जाना चाहिए क्योंकि यह अस्थायी कदम है और जनमत संग्रह के लिए रास्ता साफ करने वाला है। लेकिन हमारी समझ में नहीं

आता कि हमेशा भारत पर ही यह दबाव क्यों डाला जाता है कि वह गलत बात को झुककर मान ले, क्यों नहीं दूसरे पक्ष पर दबाव डाला जाता कि सही बात को वह झुककर मान ले।'

श्री राव ने तब मैकनाटन के प्रस्ताव का विश्लेषण करते हुए उसकी तुलना कमीशन के गत अप्रेल वाले प्रस्ताव से की और कहा कि जो बातें उसमें भारत के पक्ष में की थीं, वे निकाल दी गई हैं और पाकिस्तान के पक्ष में कुछ बातें जोड़ दी गई हैं।

श्री राव ने कहा कि मैकनाटन की रिपोर्ट में से एक और सम्मत बात निकाल दी गई है और वह यह है कि काश्मीर कमीशन ने अपने सन्धि प्रस्तावों में कहा था कि भारत कमीशन के आमन्त्रण पर उत्तरी इलाकों के विशेष-विशेष स्थानों पर अपनी सेनायें तैनात कर सकता है। भारतीय दृष्टिकोण को दी गई यह छोटी सी भी रियायत मैकनाटन प्रस्ताव में निकाल दी गई है।

प्रस्ताव पाकिस्तान के आश्वासन से ही सन्तुष्ट हो जाता है, और उसमें यह नहीं बताया गया, कि अगर संयुक्तराष्ट्रीय प्रेक्षक पाकिस्तान की प्रबन्ध व्यवस्था से सन्तुष्ट न हों तो उस समय क्या किया जायगा।

श्री राव ने कहा कि जब कबाइली काश्मीर में घुसे थे, तब पाकिस्तान ने यह स्थिति अख्तयार की थी कि उसने उन कबाइलियों को हतोत्साह करने का भरपूर प्रयत्न किया किन्तु वे नहीं माने अगर उसी चीज की पुनरावृत्ति हो जाय तब क्या होगा? भारत इस विषय में कोई खतरा मोल नहीं ले सकता।

श्री राव ने कहा कि हमें कबाइलियों के घुस आने के साथ और भी बातों की चिन्ता है। मई १९४८ से गिलगित व बाल्टि-स्तान के स्काउटों तथा स्थानीय सेना का नेतृत्व पाकिस्तानी सेना का एक अफसर कर रहा है।

चितराल से ४०० तथाकथित स्वयंसेवकों की एक टुकड़ी ने जाकर स्कर्दू को घेर लिया और स्कर्दू की सेना ने जाकर लेह को घेर लिया। यह सब कुछ पाकिस्तानी हाई कमाण्डर के आधिपत्य में किया गया। अब कबाइली काश्मीर में नहीं घुस रहे किन्तु तथा कथित स्वयं सेवक घुस रहे हैं, जिनको पाकिस्तान के अधिकारियों ने भर्ती और संगठित किया है।

जब तक इस कार्य को रोका नहीं जाता, यह बराबर जारी रहेगा और रियासत पर उनके हमले का खतरा सदैव बना रहेगा। भारत इस खतरे को मोल नहीं ले सकता।

काश्मीर का युद्ध हिन्दू मुसलमानों का संघर्ष नहीं।

श्री राव ने कहा कि काश्मीर का युद्ध हिन्दू मुसलमानों का संघर्ष नहीं है। सचाई यह है कि काश्मीर के अधिकांश मुसलमान भारत में शामिल होना चाहते हैं।

श्री राव ने कहा कि उनकी इस इच्छा में आर्थिक कारण भी है। काश्मीर का आयात-निर्यात व्यापार अधिकतर भारत से होता है, इसलिये अधिकांश काश्मीरियों का ख्याल है कि उनके देश की आर्थिक उन्नति भारत में रहकर अधिक अच्छी तरह हो सकती है।

श्री राव ने यह भी जता दिया कि काश्मीर में जनमत संग्रह का कर्तव्य भारत ने स्वयं अपने ऊपर लिया है। अगर

भारत जनमत संग्रह न करना चाहता होता तो भारत को इसके लिये कोई बाधित नहीं कर सकता था ।

श्रीराव ने इस बात का भी प्रतिवाद किया कि काश्मीर का झगड़ा राजा के भारत में शामिल हो जाने के कारण खड़ा हुआ है । उन्हों ने नाना उद्धरणों से यह बताया कि काश्मीर को हमले के कारण भारत में शामिल होने के लिये बाधित होना पड़ा ।

विधान परिषद् में काश्मीर का प्रतिनिधित्व ।

श्रीराव ने काश्मीर कमीशन की बहुमत रिपोर्ट में से इस बात का भी जवाब दिया कि भारत की विधान परिषद् में काश्मीर के प्रतिनिधियों का शामिल किया जाना राजनैतिक दृष्टि से वांछनीय है ।

श्रीराव ने कहा कि भारतीय विधान परिषद् के कार्य में किसी राज्य के प्रतिनिधियों के भाग लेने का अभिप्राय अवश्य ही उसका 'भारत में प्रवेश' नहीं होता । काश्मीर ने विधान परिषद् के कार्य में पहले क्यों नहीं भाग लिया, इसका कारण स्पष्ट ही यह है कि विधान परिषद् ने तब तक ऐसे विषयों पर विचार करना प्रारम्भ नहीं किया था, जिनमें काश्मीर को दिलचस्पी थी ।

श्री राव ने कहा कि यह कहना बेहूदा है कि काश्मीर पर कब्जा करने के लिए भारत ने पहले तो जनमत का प्रस्ताव किया जिसके लिये वह बाधित नहीं था, और तब जनमत पर प्रभाव डालने के लिए उसने अपनी सेनायें भेज दीं । भारत के काश्मीर

में अपनी सेनायें भेजने का कारण काश्मीर पर कबाइलियों के अत्याचार तथा काश्मीर के राजा के प्रवेश पत्र में बताई गई बातें हैं।

कबाइलियों के अत्याचार

इसके बाद श्रीराव ने अमरीकी लेखक श्रीमती मारग्रेट बर्क की एक पुस्तक से विस्तृत उद्धरण प्रस्तुत किये, जिसमें उसने लिखा है, कि पाकिस्तान की सीमाओं के अन्दर 'इस्लाम खतरे में' का एक हजार वर्ष पुराना नारा बुलन्द किया गया।

उद्धरण में आगे बताया गया है कि जब दुर्मदान्ध मुस्लिम कबाइलियों ने खुल कर खून की होली खेली, तब ऐसा लगता था—'इस्लाम नहीं किन्तु इन्सानियत खतरे में है।

लेखिका ने तब मठों पर उनके हमले तथा साधुनियों की हत्याओं और उनके साथ की कई विभीपिकाओं का जिक्र किया है। पुस्तक में यह भी लिखा है कि कबाइलियों ने सभी मासूम व्यक्तियों को चाहे वह इसाई हों या मुसलमान। मौत के घाट उतार दिया।

श्रीराव ने कहा कि मेरे यह उद्धरण पेश करने का यह अभिप्राय नहीं, कि पाकिस्तान ने इस कांड का समर्थन किया अपितु यह दिखाना है कि पाकिस्तान ने इसको रोकने का कोई प्रयत्न नहीं किया जबकि भारत ने केवल इस बात पर खेद प्रकट किया अपितु ऐसी घटनायें पुनः न होने देने के लिये वहां अपनी सेनायें भी भेज दीं।

मेरा ख्याल है कि इस परिषद् में कोई ऐसा देश नहीं जिसने यह न चाहा हो, कि भारतीय सेनायें कुछ और पहले

पहुच गई होतीं तो अच्छा होता। यह कहना सचाई को बिल्कुल तोड़ मरोड़ देना है, कि भारतीय सेना हमले के उद्देश्य से भेजी गई थीं, या उसे काश्मीर में दमन के लिए रखा जा रहा है।

जनमत संग्रह का प्रस्ताव

भारत ने जिस आश्वासन पर जनमत संग्रह का प्रस्ताव रक्खा था वह संक्षेप से यह है कि जनमत संग्रह से पहले राज्य में पुनः सामान्य अवस्थायें कायम की जानी चाहियें। भारत इस शर्त पर अपने प्रस्ताव पर कायम है। इसके विरुद्ध पाकिस्तान इसी विक्षुब्ध और अशांत अवस्था में जनमत कराना चाहता है। दोनों की आधारभूत स्थिति बिल्कुल एक दूसरे के विपरीत है। जब दोनों के म ाही एक नहीं, तो समझौता होना असम्भव है।

श्री राव को अपना भाषण समाप्त करने में ८० मिनट लगे।

अब चार दिन के वाक् पराक्रम के बाद, जिस में केवल भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों ने भाग लिया, सुरक्षा परिषद् एक बार फिर काश्मीरकी समस्या पर सुदृढ़ता और पूर्णता के साथ कमर कस तैयार हो गई थी।

जिम्मेदार व्यक्तियों द्वारा स्वीकृत असफलताओं काश्मीर कमीशन की रिपोर्ट और मैकनाटन प्रस्तावों का उल्लेख लिखित प्रमाण देने के अतिरिक्त प्रायः किया ही नहीं गया। एक-एक सदस्य पर दृष्टि डालने से पता चलता है कि अब तक किसी एक के भी मस्तिष्क में कल्पना नहीं है कि काश्मीर की समस्या कैसे

हल की जाये। अब तक किसी सदस्य से ऐसा संकेत नहीं मिला कि वह किसी हल के बारे में विचार कर रहा है या कोई प्रस्ताव पेश करने वाला है।

पाकिस्तान के विदेश मन्त्री श्री मोहम्मद जफरुल्ला खां ने बहस के दौरान में दो सुझाव पेश किये। एक तो यह की भारत और पाकिस्तान के बीच जो बातें मंजूर हुई हैं उनकी स्वयं सुरक्षा परिषद्—यदि वह चाहे तो—व्याख्या कर दे।

दूसरा सुझाव पेश करते हुए उन्होंने मेजर-जनरल मारिस डेल्वोइ का नाम प्रस्तुत किया। मेजर-जनरल डेल्वोइ काश्मीर कमीशन के सैनिक परामर्शदाता थे। उनके विरुद्ध एक बार काश्मीर सरकार ने संयुक्त राष्ट्र संघ से शिकायत की थी। श्री जफरुल्ला ने कहा कि जनरल डेल्वोइ एक प्रतिष्ठित सैनिक हैं—पूर्णतया निष्पक्ष और न्यायप्रिय वह न एक पक्ष के हैं और न दूसरे के। उन्हों ने आगे कहा कि जनरल डेल्वोइ किसी भी शंकास्पद प्रश्न पर परामर्श देने के लिये या समग्र सैनिक स्थिति पर अपना विचार बताने के लिये उपलब्ध हैं। परिषद् उनका विचार पूछ सकती है।

श्री जफरुल्ला की दलीलों का केन्द्रीय लक्ष्य यह था पाकिस्तान-भारत और काश्मीर कमीशन के बीच जो कुछ बातें मंजूर हुई थीं सुरक्षा परिषद् को उनके आधार पर अपनी कारवाई निश्चित करनी चाहिए।

उन्होंने कहा कि पाकिस्तान के काश्मीर में प्रवेश करने के न्याय-अन्याय का और काश्मीर सरकार की स्वतन्त्रता का

प्रश्न काश्मीर कमीशन के १३ अगस्त, १६४८ और ५ जनवरी, १६४६ के प्रस्तावों के फलस्वरूप पुराना पड़ गया है।

श्री जफरुल्ला ने भारतीय प्रतिनिधि श्री बेनेगल नरसिंह राव के इस कथन का कोई उत्तर नहीं दिया कि पाकिस्तान के प्रधान सेनापति सर डगलस ग्रेसी ने पाकिस्तान सरकार को जो 'सैनिक सलाह' दी थी उससे प्रमाणित होता है कि पाकिस्तान ने आरम्भ से ही कबाइलियों को सहायता दी थी। जनरल ग्रेसी ने पाकिस्तान सरकार से कहा था कि उसे आक्रमणकारी 'कबाइलियों को अधिक प्रत्यक्ष सहायता देनी चाहिए।'

जनरल ग्रेसी की सिफारिशों और बाद को पाकिस्तान सेना के काश्मीर में प्रविष्ट होने से श्री बेनेगल नरसिंह राव ने जो अन्य निष्कर्ष निकाले उन्हें श्री जफरुल्ला ने असंबद्ध बताया।

श्री जफरुल्ला ने कहा—यह स्थिति दोनों सरकारों के दोनों प्रस्तावों को स्वीकार करने के बाद उत्पन्न नहीं हुई। इसका औचित्य तथा अनौचित्य कुछ भी हो, यह स्थिति ऐसी है जो उस समय मौजूद थी। कमीशन ने इस स्थिति का जिक्र किया था और उसने इसके बारे में कार्रवाई भी की। इसके बाद दोनों सरकारों ने उसके प्रस्तावों को स्वीकार कर लिया। अब पुरानी स्थिति दोनों प्रस्तावों को कार्यान्वित करने में बाधा-स्वरूप नहीं बताई जा सकती।

श्री बेनेगल नरसिंह राव ने बहस के अन्तिम दिन एक और स्पष्ट भाषण किया, जिसका जवाब देते हुए श्री जफरुल्ला ने कहा कि वह 'अतिशय चातुर्य से परिपूर्ण है।'

पाकिस्तानी प्रतिनिधि के तर्कों के सार पर श्री राव ने कहा, एक प्रसिद्ध उदाहरण के अनुसार पाकिस्तान की आपत्ति यह है कि यही बांड में नहीं लिखा। यदि यह बात है, और पाकिस्तानी प्रतिनिधि १३ अगस्त के प्रस्ताव के शब्दों पर ही दृढ़ रहना चाहते हैं, तो यही सही, हम इसके अनुसार ही काम करें।

संयुक्त राष्ट्रीय क्षेत्रों में यह अनुमान किया जाता है कि रूसी प्रतिनिधि की अनुपस्थिति में सुरक्षा परिषद् कोई आकस्मिक कार्यवाई न करेगी। एक अन्य ख़याल यह भी है कि परिषद् कुछ समय तक काश्मीर के प्रश्न को पूरी तरह न उठायेगी।

इसी बीच में श्री जफरुल्ला ने कहा है कि जब तक सुरक्षा परिषद प्रश्न पर विचार करती है मैं न्यूयार्क में बना रहूँगा।

बहस के समय श्री जफरूल्ला को पाकिस्तान सरकार के सेक्रेटरी जनरल श्री मोहम्मद अली और श्री अय्यूब मदद कर रहे थे।

श्री राव की मदद के लिए काश्मीर सरकार के श्री डी० पी०दर और सुरक्षा परिषद् में भारत के द्वितीय सदस्य श्री गोपाल मेनन उपस्थित थे।

भारत के 'युद्ध बहिष्कार प्रस्ताव पर पाकिस्तान का उत्तर

पाकिस्तान के विदेश मन्त्री सर मुहम्मद जफरुल्ला ने सुरक्षा-परिषद में काश्मीर बहस के दौरान में बताया कि भारत ने पाकिस्तान सरकार को 'युद्ध न करने' का जो प्रस्ताव भेजा था, उसका उत्तर उन्हें अपनी सरकार से प्राप्त हो गया है। उत्तर निम्न है:—

१—भारत व पाकिस्तान दोनों की सरकारें अपने वर्तमान या भावी किसी झगड़े को निबटाने के लिए युद्ध के आश्रय की निन्दा करें। २–दोनों यह मानते हैं कि वे किसी भी प्रश्न का निबटारा मध्यस्थता के शान्तिपूर्ण उपाय द्वारा करेंगे। ३–अगर मध्यस्थता से काम न चले तो वे पंच फैसले का आश्रय लेंगे। ४–वे पंच फैसले के निर्णयों को मानेंगे। ५–१२ अगस्त, १९४८ तथा ५ जनवरी १९४९ के काश्मीर सम्बन्धी प्रस्तावों के बारे में उन में जो मतभेद हैं, उनका निबटारा वे पंच फैसले से कराने को तैयार हैं।

ग्रेसी द्वारा उल्लंघन

संयुक्त राष्ट्रसंघ में भारत के मुख्य प्रतिनिधि बेनेगल श्री नरसिंह राव ने सुरक्षा परिषद् से कहा कि पाकिस्तान के प्रधान सेनापति की अपनी सरकार को कबाइलियों को अधिक साक्षात् सहायता देने की सलाह 'एक अत्यन्त घातक स्वीकारोक्ति है।' श्री राव पाकिस्तान के प्रधान सेनापति द्वारा काश्मीर की सैनिक स्थिति पर पाकिस्तान सरकार को दिये गये उस विवेचन का जिक्र कर रहे थे, जो उन्होंने २० अप्रैल १९४८ को लिखी थी और जिसे पाकिस्तान के विदेश मन्त्री सर मोहम्मद जफरुल्ला ने बुधवार को अपने भाषण के दौरान में सुरक्षा परिषद् के सामने पढ़ कर सुनाया था।

पाकिस्तान के प्रधान सेनापति की विवेचना के उस अंश का हवाला देते हुए, जिसमें आवश्यकता पड़ने पर पाकिस्तान की नियमित सेनाओं को काश्मीर भेजने की सिफारिश की गई थी, श्री राव ने कहा:—'मुझे यह अंगीकार करना चाहिए कि इस रहस्य के खुलने से मुझे बड़ा क्षोभ हुआ है। राष्ट्र मण्डल के एक

डोमीनियन के एक ब्रिटिश सेनापति एक साथी डोमीनियन के खिलाफ एक सैनिक अभियान की सिफारिश कर रहे हैं।'

श्री राव ने कहा:—'ऐसी अवस्था में मैं अपने मित्र से दो प्रश्न पूछना चाहूँगा—एक तो यह कि क्या काश्मीर में पाकिस्तानी सेनाओं के भेजे जाने से पूर्व ब्रिटिश सरकार के साथ विचार-विमर्श किया गया था अथवा उसको इत्तला दी गई थी। मैं यह प्रश्न इस लिए पूछता हूँ कि यह सिफारिश ब्रिटेन के विदेशियों की भर्ती के कानून के विरुद्ध एक गम्भीर अपराध है।

'मुझे विश्वास है कि अगर विचार-विमर्श किया जाता, तो यह कदम कभी न उठाया जाता और हम उन सब कठिनाइयों से बच जाते, जो इससे पैदा हो गई हैं और जो आज हमारी प्रगति को रोके हुए हैं।'

'दूसरा प्रश्न जो मैं पूछना चाहता हूँ यह है कि क्या पाकिस्तान के प्रधान सेनापति ने अपनी विवेचना के किसी हिस्से में पाकिस्तान सरकार को यह चेतावनी दी है, कि जिस कदम की वे सिफारिश कर रहे हैं, वह चाहे उन की राय में कितना भी ठीक क्यों न हो, अन्तर्राष्ट्रीय कानून का उल्लंघन हो सकता है।

'पाकिस्तान का दावा है कि उसे आत्मरक्षा की दृष्टि से अपनी सेनाएं काश्मीर में भेजनी पड़ीं। उनकी यह युक्ति किसी जमाने में तो कुछ वजनदार समझी जाती किन्तु आज के जमाने में संयुक्तराष्ट्र संघके घोषणापत्र की ५१ वीं धारा में आत्मरक्षा के अधिकार की एक सीमा बान्ध दी गई है, जिसमें कहा गया है कि आत्मरक्षा के लिए तत्पर किसी देश पर किसी अन्य देश द्वारा आक्रमण का क्या अर्थ है और आत्मरक्षा के लिए कोई कदम

उठाते ही उसकी सूचना तुरन्त संयुक्तराष्ट्र संघ को दी जानी चाहिये ।

'वर्तमान मामले में पाकिस्तान पर कोई हमला नहीं किया गया' और न ही पाकिस्तान ने काश्मीर में अपनी सेनाएं भेजने की सूचना सुरक्षा परिषद् को दी ।

'अगर पाकिस्तान ने अपनी सेनाओं की गति विधि की सूचना दी होती, तो परिषद् उसे अपनी सेनाएं काश्मीर में भेजने से रोक सकती थी और उसके कारण पैदा हुई कठिनाइयों से बचा जा सकता था ।'

'इस पहली गलती के बाद और गलतियां की गई, अर्थात् आजाद काश्मीर सेनाओं का संगठन और उनका शासन ।

'मेरा अब भी यही कहना है कि जनमत लिये जाने से पहले इन सब गलतियों को सुधारा जा सकता है ।'

संयुक्तराष्ट्र संघ अगर इस विषय को किसी और रूप में ले, तो वह एक खतरनाक परिपाटी कायम करेगा ।

परिषद् जानती है कि भारतीय सेनाएं हमलावरों को भगाने के लिये काश्मीर गईं । पाकिस्तान अब कहता है कि उसने हमलावरों को कोई सहायता नहीं दी ।

किन्तु पाकिस्तान ने जब यह देखा कि अब भारतीय सेनायें हमलावरों को निकाल चुकने वाली हैं, तो काश्मीर के कुछ स्थानों पर अपना कब्जा बनाये रखने के लिये पाकिस्तान ने अपनी सेनायें भी झोंक दी ।

संयुक्त राष्ट्रीय काश्मीर कमीशन की बहुमत और अल्पमत रिपोर्टों से यह स्पष्ट है कि पाकिस्तान ने न केवल बचे हुए स्थानों

पर अपना कब्जा बनाये रखा, किन्तु अगस्त १९४८ और जनवरी १९४९ के बीच में उसने उत्तरी इलाकों पर भी अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया, यह केवल भारतीय सेनाओं को रोक रखना नहीं था किन्तु अपनी सैनिक शक्ति के अनुसार काश्मीर के अधिक से अधिक इलाकों पर अपना कब्जा कर लेना था।

आजाद काश्मीर सेनाओं का विघटन

इसके बाद श्री राव ने आजाद काश्मीर सेनाओं को कब निर्धारित किया जाये, इस विवादास्पद प्रश्न को लिया।

श्री राव ने कहा कि भारत के मत में इस समस्या की मुख्य बात यह है कि क्या आजाद काश्मीर सेनाओं का विघटन अधिकांश भारतीय सेनाओं को काश्मीर से हटाने के पूर्व नहीं किया जा सकता।

'कमीशन ने स्वयं कहा है कि अगर उन्होंने यह भांप लिया होता कि पाकिस्तान आजाद काश्मीर जितनी बड़ी सेना खड़ी कर लेगा, तो कमीशन उस प्रश्न का १३ अगस्त के प्रस्ताव के ११वें हिस्से में समाधान करने का प्रयत्न करता।

'अगर हम प्रस्ताव के आशय को समझने का यत्न करें, तो हम इस परिणाम पर पहुँचेंगे कि आजाद काश्मीर सेनाओं के विघटन और निश्शस्त्रीकरण के प्रश्न की वही स्थिति है, जो पाकिस्तानी सेनाओं की वापसी की है।'

'भारत का यह कहना है, कि वह अपनी अधिकांश सेनाएं तब तक नहीं हटा सकता, जब तक आजाद सेनाएं भंग और निहत्थी नहीं की जाती। वास्तविक समस्या यह है कि आजाद

काश्मीर सेनाएं पहले भंग की जायें, या पहले भारत की अधिकांश सेनाएं काश्मीर से हटाई जायें।'

उत्तरी क्षेत्र

उत्तरी क्षेत्रों के विषय में ५ जनवरी के प्रस्ताव के तीसरे बी० पैराग्राफ में काश्मीर राज्य के निर्विवाद प्रभुत्व का भारत को आश्वासन दिया गया है। भारत इस पैराग्राफ को अत्यधिक महत्व देता है। जनवरी प्रस्ताव के मसविदे को भारत ने २३ दिसम्बर को स्वीकार कर लिया था, जबकि पाकिस्तान ने उसे २५ दिसम्बर को स्वीकार किया। अगर काश्मीर कमीशन के अध्यक्ष ने २५ दिसम्बर को अर्थात् भारत द्वारा कमीशन के प्रस्तावों को स्वीकार किये जाने के दो दिन के बाद पाकिस्तान को कोई और व्याख्या की तो उस व्याख्या को मानने के लिये भारत सरकार बाध्य नहीं है।

पाकिस्तान को स्पष्टतः काश्मीर के प्रवेश के सम्बन्ध में कोई विवाद नहीं है, किन्तु वह उसे हथियाना चाहता है, क्योंकि सर मोहम्मद जफरुल्ला खां ने कहा है कि 'काश्मीर पर कब्जे से भारत को न कोई आर्थिक न कोई सामरिक लाभ है, जबकि पाकिस्तान के लिये काश्मीर का प्रश्न जीवन मरण का प्रश्न है।'

श्री जफरुल्ला यह भूल गये प्रतीत होते हैं कि इस प्रश्न का निर्णय भारत और पाकिस्तान की तुलनात्मक आवश्यकताओं के अनुसार नहीं, किन्तु काश्मीर के लोगों की इच्छा से होना है।

भेड़िये को भेड़ की सख्त जरूरत हो, सकती है, किन्तु भेड़ की इच्छा कुछ और हो सकती है।

चूंकि भारत को काश्मीर का शोषण करने की आवश्यकता नहीं और वह उसे पूरी राजनैतिक और आर्थिक स्वाधीनता दे सकता है, इसलिये काश्मीर के अधिकांश मुसलमान भारत के साथ रहना चाहते हैं।

अत्याचार की कहानी

श्री जफरुल्ला ने काश्मीर से अनेक शरणार्थियों के पाकिस्तान में आगमन को भारत के अत्याचारों और हमले का प्रमाण बताया है।

शरणार्थियों का एक तरफ से दूसरी तरफ जाना विभाजन और उसके साथ आये हुए साम्प्रदायिक पागलपन का परिणाम था। यह कोई काश्मीर के लिए ही विशेष बात नहीं थी। युद्ध-बंदी की रेखा के पार के पाकिस्तानी हिस्से से भी लोग भारत की तरफ आना चाहते थे, मैं इस बात के प्रमाण दे सकता हूँ।

श्री राव ने यह दिखाने के लिए आंकड़े प्रस्तुत किये कि काश्मीर का अधिक व्यापार भारत के साथ होता है और उसकी इमारती लकड़ी अधिकतर भारतीय रेलों में खपती है।

जफरुल्ला का जवाब

श्री राव द्वारा अपना भाषण समाप्त करने पर जफरुल्ला ने उसका उत्तर दिया।

उन्होंने जूनागढ़ का हवाला देते हुए कहा कि अगर किसी ने अपने साथी डोमीनियम पर हमला बोला है, तो वह भारत है और भेड़िये और मेमने की कहावत अगर किसी पर चरितार्थ होती है तो भारत पर।

पिछले सालों से मध्यस्थता ही होती रही है। इस मध्यस्थता की बदौलत कुछ समझौते हुए हैं। अब सवाल इन समझौतों को क्रियान्वित करने का है। मुख्य बाधा जनमत की तैयारी कराने से पूर्व काश्मीर के विसैनिकीकरण की है। भारत और पाकिस्तान ने अगस्त, १९४८ तथा जनवरी, १९४९ के प्रस्ताव स्वीकार कर लिये हैं, अब जिस प्रश्न का निर्णय करना है वह यह नहीं कि उन्हें किस बात पर समझौता करना चाहिये, अपितु उन्होंने क्या समझौते किये हैं।

श्री जफरुल्ला ने अन्त में कहा कि पाकिस्तान सरकार मेकनाटन प्रस्तावों को स्वीकार करने के लिये उद्यत है।

परिषद् आगामी बैठक के लिए कोई तिथि निश्चित किये बिना स्थगित करदी गई।

पाकिस्तान के प्रधान सेनापति का विवेचन

पाकिस्तान के प्रधान सेनापति ने अपनी विवेचना में कहा है, कि भारतीय सेनाओंने काश्मीर पर सर्वतोमुखी हमला करने के लिए फरवरी १९४८ में जोरशोर से तैयारियां शुरू कर दी थीं। भारत निश्चय ही उत्तर-दक्षिण में एक साथ हमला करना चाहता है। उस हमले के सम्भवतः दो उद्देश्य होंगे—१. भीम्बर मीरपुर, २. पुंछ, उत्तर में मुजफ्फराबाद, कोहाला।

इस विवेचना में कहा गया है, मुजफ्फराबाद और कोहाला के हाथ से निकल जाने पर पाकिस्तान की सुरक्षा पर गहरा प्रभाव पड़ेगा। इससे भारतीय सेनायें पाकिस्तान की पीठ के ऐसे स्थान पर पहुँच जायेंगी, जहां से वे किसी भी क्षण पाकिस्तान पर हमला कर सकें। इससे खान अब्दुल गफ्फार खां, उनके

दल, इपी के फकीर तथा अफगानिस्तान जैसे विरोधी तत्वों को बल मिलेगा और उससे सीमाप्रान्त और पंजाब के इलाकों में त्रास फैल जायेगा, और शरणार्थियों की ऐसी विषम समस्या खड़ी हो जायगी, जिसे वह सम्भाल नहीं सकेगा।

उपरोक्त इलाकों में भारतीय सेनाओं की विजय से कबाइली पाकिस्तान पर कुपित हो जायेंगे, कि उसने उनको पर्याप्त सहायता नही दी। और हो सकता है कि वे पाकिस्तान के खिलाफ भी हो जायें।

सिफारिशें:—'अगर पाकिस्तान २७-२८ लाख शरणार्थियों की एक और गंभीर समस्याका सामना नहीं करना चाहता, अगर भारत को पाकिस्तान के आगे-पीछे, दायें-बायें किलेबन्दी नहीं करने देनी है, अगर शहरियों और सेनाओं के नैतिक साहस को बहुत नीचे नहीं गिरने देना है, और अगर पाकिस्तान के अन्दर के ही विध्वंसक तत्वों को प्रोत्साहन नही देना है, तो यह आवश्यक है, कि भारतीय सेनाओं को उड़ी पुंछ नौशेरा पंक्ति से आगे न बढ़ने दिया जाये।

—✶—

संयुक्त राष्ट्र संघ क्या है

प्रत्येक २४ अक्तूबर का दिन संयुक्तराष्ट्र संघ की वर्षगांठ का दिन होता है जो सारे संसार में उत्साह और आशा से मनाया जाता है।

संसार के कोटि कोटि मानवों ने सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में संयुक्तराष्ट्र की ठोस सफलताओं का अनुभव किया है।

बहुत कम लोग यह जानते हैं कि राजनीतिक कठिनाइयों के बावजूद संयुक्तराष्ट्र ने संसार के ५० करोड़ लोगों के खूनी युद्ध को रोका है।

संयुक्तराष्ट्र के पास कोई अपनी अन्तर्राष्ट्रीय सेना नहीं है इसलिये इसके सैनिक प्रेक्षक, पंच तथा मध्यस्थ ही संयुक्तराष्ट्रों में युद्ध रोकने का काम करते हैं। इनमें से १३ आज तक अपना कर्तव्य पालन करते हुए अपने प्राणों की बलि दे चुके हैं किन्तु शेष अपना कर्तव्य पालन कर रहे हैं।

संयुक्तराष्ट्र संघ की स्थापना २४ अक्तूबर १९४५ में हुई थी और उसी दिन संयुक्तराष्ट्रीय घोषणापत्र को सब देशों की ओर से स्वीकृति मिली थी।

संयुक्तराष्ट्र ही ऐसी शक्ति है जो कि तृतीय महायुद्ध के महाविनाश से संसार को बचाने के लिये संसार के बड़े २ देशों को एकत्रित किये रखने का एकमात्र साधन है। इसी में संसार के जीवन की आशा केन्द्रीभूत है।

संसारके पांच क्षेत्र इस वर्ष तक लगातार संयुक्तराष्ट्र संघ के प्रेक्षकों की निगरानी में रहे (१) बल्कान देश (२) फिलस्तीन (३) काश्मीर (४) हिन्देशिया (५) कोरिया!

विश्व शांति का उपाय।

मानवजाति युद्धों से जर्जरित हो चुकी है। थक भी चुकी है। वह शान्ति पूर्वक जीवन यापन करना चाहती है। किन्तु उसे युद्ध के भय से मुक्ति नहीं मिल रही है। जिनको शान्ति के शत्रु समझा जाता था-हिटलर, मुसोलिनी और तोजो, इस

संसार से परमधाम को भेजे जा चुके हैं। उन्होंने दुनियां को आतंकित करने के लिये जो फौजी मशीन खड़ी की थी, उसे चकनाचूर किया जा चुका है। यह सब हो जाने के बाद भी नई दलबन्दियां उठ खड़ी हुई हैं। युद्ध के समय जो एक कैम्प में थे, साथी थे, वही विरोधी दलों में बंट गये हैं। एक दूसरे के प्रति शत्रुता का भाव रखते हैं, एक दूसरे को अविश्वास की नजर से देखते हैं और उनका यह आपसी विरोध ऐसी अनेक समस्याओं को हल नहीं होने दे रहा है, जिनके हल होने पर भावी युद्ध की आशंका दूर हो सकती है और मानव जाति मानव कल्याण के पथ पर अग्रसर हो सकती है।

महायुद्ध के बाद दुनियां के राष्ट्रों ने विश्व शान्ति की रक्षा के लिए जिस तन्त्र की रचना की है वह संयुक्तराष्ट्र संघ के नाम से प्रख्यात है विश्व शांति की यह संस्था बहुत प्रभाव-शाली सिद्ध होती, यदि सारे राष्ट्र उसकी सर्वोपरिसत्ता को स्वीकार करते और दुनिया के प्रधान राष्ट्रों के बीच अविश्वास और मतभेद के बजाय विश्वास और मतैक्य होता। प्रधान राष्ट्रों के मतैक्य पर ही उनकी नीव डाली गई थी, यदि वे एक मत नहीं होते तो संयुक्तराष्ट्र संघ कोई भी निर्णायक कदम नहीं उठा सकता। एक बड़ा राष्ट्र अपने विशेषाधिकार का उपयोग करके बहुमत के निर्णय को रद्द कर सकता है। सभी विश्व शांति की दुहाई देते हैं, किन्तु संयुक्तराष्ट्र संघ की कार्रवाई पर दृष्टिपात करने से यह पता चले बिना नहीं रहता कि बड़े राष्ट्रों के निर्णय न्याय और औचित्य पर उतने आधारित नहीं होते जितने व्यक्तिगत राष्ट्रीय हितों पर। उदाहरण के लिये संयुक्त

राष्ट्र संघ में नये राष्ट्रों को सदस्य बनाने का प्रश्न ही ले लीजिये। अनेक राष्ट्र इस अन्तर्राष्ट्रीय संस्था के सदस्य बनने को उम्मीदवार हैं कुछ की उम्मीदवारी का रूस और उनके सहयोगी राष्ट्र समर्थन करते हैं और कुछ का अमेरिका, ब्रिटेन आदि बड़े राष्ट्रों की पारस्परिक जिद और विरोध के कारण किसी भी राष्ट्र का आवेदन स्वीकार नहीं हो रहा है। इसी का यह नतीजा है कि जर्मनी दो हिस्सों में विभक्त होगया है और दोनों हिस्सों में अलग-अलग और विरोधी नीति बरती जा रही है आस्ट्रिया की संधि घपले में पड़ी हुई है जापान की सन्धि की शर्तें तय करने का मामला भी खटाई में है और परमाणु बम तथा अन्य विनाशक हथियारों के निर्माण और संग्रह पर कोई नियंत्रण लागू नहीं हो रहा है।

भारत का रुख

संयुक्त राष्ट्र संघ की जनरल असेम्बली में पिछले अधिवेशन के समय बर्लिन की नाकेबन्दी के प्रश्न को लेकर वातावरण काफी अशांत और क्षुब्ध था। बर्लिन की समस्या का हल निकल आने के कारण रूस तथा अमेरिका, ब्रिटेन और फ्रांस के बीच तनाव कम हो गया है। किन्तु उनके बीच सन्देह और मतभेद तो बना ही हुआ है। संयुक्त राष्ट्र संघ की जनरल असेम्बली के सामने अनेक प्रश्न विचारार्थ प्रस्तुत होंगे। यूनान की अपने पड़ोसी राष्ट्रों बलगारिया और अलबानिया के खिलाफ शिकायत है कि वे यूनानी विद्रोहियों को नैतिक और भौतिक मदद देरहे हैं। इटली के पुराने उपनिवेशों के भविष्य के सम्बन्ध में भी असेम्बली को कुछ तय करना पड़ेगा। चीन की उखड़ती जाने वाली राष्ट्रीय

सरकार ने अपना मामला पेश किया है। कोरिया की स्थिति पर भी विचार होना है। शायद रूस और यूगोस्लाविया का झगड़ा सामने आये। बलगारिया, रूमानिया और हंगरी के खिलाफ पश्चिमी राष्ट्रों की शिकायत है कि उनमें मानवी अधिकारों का अपहरण किया जा रहा है। परमाणु शक्ति के नियंत्रण और बिनाशक हथियारों की कमी पर भी चर्चा होगी। जनरल असेम्बली इन सब प्रश्नों का कहां तक समाधान निकाल पायेगी, इस बारे में कोई भी बहुत अधिक आशावादी नहीं हो सकता। भारतीय प्रतिनिधि मंडल के नेता ने जनरल असेम्बलीको बता दिया है कि भारतीय प्रतिनिधि मंडल बिना किसी पूर्वाग्रह या पक्षपात के प्रत्येक प्रश्न पर खुले दिल से विचार करेगा और न्याय औचित्य और विश्व शांति के लक्ष्य को ध्यान में रख कर अपना मत देगा। यही नीति उसके लिए सर्व श्रेष्ठ होगी। यदि दुनियां के दूसरे राष्ट्र भी इसी तरह की नीति का अवलम्बन करें तो अनेक जटिल समस्याओं के आसान हल निकल सकते हैं।

भारत का सुझाव

हम अपने पाठकों का ध्यान उस अपील की ओर भी आकृष्ट करना चाहते हैं जो राधाकृष्णन ने संयुक्त राष्ट्र संघ की ही एक दूसरी संस्था के अधिवेशन में की है। यह संस्था शैक्षणिक सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए काम कर रही है। डा० राधाकृष्णन ने विश्व शांति की समस्या की जड़ को पकड़ा है! उनका कहना है और वह ठीक ही है कि पूर्व और पश्चिम के राष्ट्रों में सब से पहले पारस्परिक अविश्वास दूर होना चाहिए। उसके बिना दुनियां को भावी युद्ध के भय से मुक्ति नहीं मिलेगी। उनका सुझाव है कि छः राष्ट्रों के प्रमुख एक

जगह मिलें और आपसी अविश्वास को दूर करें। इन में दो पूर्व के दो यूरोप के और शेष दो में एक मार्शल स्टालिन और दूसरे प्रेसीडेण्ट टरूमैन हों। एक ओर यह भय है कि सारे विश्व पर साम्यवादी छाजायेंगे। दूसरी ओर यह डर है कि पूंजीवादी राष्ट्र साम्यवादी राष्ट्रों को खत्म करने का षडयन्त्र रच रहे हैं। मार्शल स्टालिन ने अपना यह विश्वास प्रकट किया है कि साम्यवादी और पूजीवादी प्रणालियां एक साथ जीवित रह सकती हैं और दोनों में मेल कायम हो सकता है। डा० राधाकृष्णन की अपील का पेरिस सम्मेलन के प्रतिनिधियों ने स्वागत किया, क्योंकि उसमें विश्व शांति को सुरक्षित करने का व्यवहारिक उपाय सुझाया गया है उस पर अमल होगा या नहीं यह कौन जाने शायद इसे भावुकता की अपील कह कर ठुकरा दिया जाय। किन्तु जब तक ऐसे किसी उपाय द्वारा जमीन को पहले साफ नहीं किया जायगा, विश्व शांति की अभिलाषा एक स्वप्न ही रहेगी।

'संसार का भविष्य संयुक्त राष्ट्रों की सफलता पर निर्भर है। कहा जाता है कि संयुक्त राष्ट्रों के कार्य का कुछ परिणाम नहीं निकलता। लेकिन संयुक्त राष्ट्रों के हाथ में जादू का भण्डा तो है नहीं जो तुरन्त ही सब कार्य सफल हो जायें। संयुक्त राष्ट्रों की इस प्रकार की आलोचना आधार भूतरूप में गलत है।' —नेहरूजी

एक राष्ट्र की समस्याएं सुलझाने में दस बीस वर्ष लग जाने मामूली सी बात हैं। फिर केवल चार वर्ष में विश्व भर की सब समस्याएं सुलझ जाने की आशा किस प्रकारकी जासकती हैं। संयुक्तराष्ट्रों ने विभिन्न क्षेत्रों में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग पैदा करने में एक बड़ी सीमा तक सफलता प्राप्त की है लेकिन अभी तक उसके सामने ऐसी अनेक समस्याएं उपस्थित हैं जिन से विश्व की

शांति को भारी खतरा है। संयुक्तराष्ट्रों को उन्हें सुलझाना है लेकिन श्री ट्रिग्वेली के शब्दों में संयुक्त राष्ट्रों का मार्ग धीमा और प्रायः हतोत्साह करने वाला है, लेकिन शान्तिपूर्ण विश्व के निर्माण का यही रास्ता है, उसका और कोई सरल मार्ग नहीं।

पूर्व और पश्चिम के शस्त्रहीन संयुक्त राष्ट्रों का मंच ही एक सामान्य मन्च है। शस्त्रहीन युद्ध में भारत तटस्थ है। वह किसी गुट में शामिल होना नहीं चाहता। वह चाहता है कि शान्ति को खतरा पैदा करने वाली समस्या का निबटाना संयुक्त राष्ट्रों की सहायता से किया जाय। संयुक्त राष्ट्रों के विकास में भारत ने एक महत्वपूर्ण भाग लिया है।

प्रारम्भ

'संयुक्त राष्ट्र नाम का प्रयोग सबसे पहले पर्लहारबर की घटना के बाद राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने किया। उस समय इसका अर्थ युद्धकालीन मित्रता के अलावा और कुछ नहीं था। लेकिन शुरू से ही युद्ध के उपरान्त विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की आवश्यकता महसूस की गई।

'संयुक्त राष्ट्र नाम का अधिकृत रूप से प्रयोग सबसे पहले १ जनवरी, १६४२ को वाशिंगटन में एक अन्तर्राष्ट्रीय समझौते में किया गया। उस दिन २६ राष्ट्रों ने संयुक्त राष्ट्रों की घोषणा' पर हस्ताक्षर किये। भारत भी उनमें एक था। इस घोषणा में धुरी राष्ट्रों के विरुद्ध लड़ाई में आपस में सहयोग करने की घोषणा की गई थी। इस घोषणा में एटलांटिक घोषणा के सिद्धान्तों को स्वीकार किया गया था।

एटलांटिक घोषणा में अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना के सम्बन्ध में कुछ भी निश्चित रूप से नहीं कहा गया था, लेकिन उसमें उसके बीज मौजूद थे।

सन् १९४३ के १९ से ३० अक्तूबर तक रूस, अमेरीका, ब्रिटेन और चीन के विदेश मन्त्रियों का मास्को में एक सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन के उपरान्त एक घोषणा की गयी जिसमें यथाशीघ्र एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था के निर्माण करने का जिक्र किया गया। घोषणा में कहा गया कि इस संस्था का उद्देश्य विश्व में शान्ति और सुरक्षा कायम करना होगा।

मास्को के निर्णय को व्यावहारिक रूप देने के लिये सन् १९४४ की गर्मियों में चार बड़े देशों का एक सम्मेलन डम्बरटन ओक्स में हुआ। इस सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्रों की स्थापना का प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

याल्टा समझौता

फरवरी १९४५ में स्टालिन, रूजवेल्ट व चर्चिल याल्टा में मिले और उन्होंने डम्बरटन ओक सम्मेलन के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। सुरक्षा परिषद् में पांच बड़ों के विशेषाधिकार के सिद्धान्त को भी इस ही सम्मेलन में स्वीकार किया गया याल्टा में ही डम्बरटन ओक योजना पर विचार करने के लिए २५ अप्रैल, १९४५ को सानफ्रांसिस्को में एक सम्मेलन बुलाने का निश्चय किया गया था।

सानफ्रांसिस्को सम्मेलन

सानफ्रांसिस्को सम्मेलन में उन सब देशों को निमन्त्रित किया गया जो कि किसी न किसी समय धुरी राष्ट्रों के विरुद्ध

युद्ध में संलग्न थे। सम्मेलन के उद्घाटन के समय ४६ राष्ट्रों के शिष्ट मण्डल उपस्थित थे। सम्मेलन में पांच और देशों के प्रतिनिधि शामिल कर लिये गये। इस प्रकार संयुक्त राष्ट्रों के घोषणा पत्र पर विश्व की ८० प्रतिशत जनसंख्या के प्रतिनिधियों ने हस्ताक्षर किये। यह मानव इतिहास की असाधारण घटना है।

उद्देश्य और सिद्धान्त

संयुक्त राष्ट्रों का उद्देश्य शांति और सुरक्षा को कायम रखना, झगड़ों को शांतिपूर्ण तरीकों से सुलझाना, राष्ट्रों के स्वभाग्य निर्णय के आधार पर राष्ट्रों में सहयोग पैदा करना, आर्थिक और सामाजिक समस्याओं को सुलझाने में सहयोग करना और मानव अधिकारों और आधारभूत स्वतन्त्रताओं के लिए सम्मान पैदा करना है। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए यह संगठन और इसके सदस्य इन सिद्धान्तों पर चलेंगे, सब सदस्यों की सार्वभौम एकता झगड़ों को शांतिपूर्ण तरीकों से निबटाना, किसी देश की स्वतन्त्रता या प्रादेशिक अखण्डता के विरुद्ध शक्ति का प्रयोग न करना, संगठन द्वारा किसी राज्यके आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना था।

संयुक्त राष्ट्रों के अन्तर्गत साधारण असेम्बली, सुरक्षा परिषद, अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय, सेक्रिटेरियल आर्थिक और सामाजिक समिति, और संरक्षण समिति महत्व पूर्ण संगठन हैं। इन संगठनों का उद्देश्य संयुक्त राष्ट्रों के विभिन्न उद्देश्यों को पूरा करना है।

साधारण असेम्बली

साधारण असेम्बली में संयुक्त राष्ट्रों का प्रत्येक सदस्य देश पांच तक प्रतिनिधि भेज सकता है। लेकिन प्रत्येक देश को केवल

एक मत देने का अधिकार होगा। प्रत्येक महत्वपूर्ण प्रश्न पर निर्णय करने के लिए उपस्थित सदस्यों के दो तिहाई बहुमत की आवश्यकता होती है।

असेम्बली में ऐसे किसी भी प्रश्न पर विचार हो सकता है जिसका सम्बन्ध सुरक्षा और शांति से है। इस प्रश्न को कोई सदस्य राज्य या सुरक्षा परिषद् पेश कर सकती है। असेम्बली अन्तर्राष्ट्रीय कानून और राजनीतिक और आर्थिक, सामाजिक सांस्कृतिक-शैक्षणिक और स्वास्थ्य सम्बन्धी मामलों के सम्बन्ध में सिफारिश कर सकती है। इसके सामने सुरक्षा परिषद् तथा संयुक्त राष्ट्रों के विभिन्न अंगों की रिपोर्ट पेश की जाती है।

सुरक्षा परिषद

सुरक्षा परिषद संयुक्त राष्ट्रों का सब से महत्वपूर्ण अंग है। परिषद् में ११ सदस्य राष्ट्र होंगे। चीन, फ्रांस, रूस ब्रिटेन, और अमेरीका इसके स्थायी सदस्य हैं। अन्य छः सदस्य दो वर्ष के लिए साधारण असेम्बली द्वारा निर्वाचित होते हैं। तीन सदस्य प्रतिवर्ष अवकाश ग्रहण करते हैं। अवकाश ग्रहण करने वाले सदस्य तुरन्त ही चुनाव के लिए उम्मीदवार नहीं हो सकते प्रत्येक सदस्य राज्य का एक ही प्रतिनिधि और एक मत होता है।

एक निर्णय करने के लिए ११ में से ७ सदस्यों के पक्ष में मत होना आवश्यक है लेकिन इन सात सदस्यों में पांच स्थायी सदस्य के भी मत पक्ष में होने चाहिए। यदि कोई सदस्य

परिषद् के सामने उपस्थित झगड़े में शामिल हो तो उसे मतदेने का अधिकार नहीं है !

सुरक्षा परिषद् का प्रमुख कार्य शान्ति और सुरक्षा को कायम रखना है ।

आर्थिक व सामाजिक समिति

इस समिति में संयुक्त राष्ट्रों के १८ सदस्य होते हैं । जिनका निर्वाचन साधारण असेम्बली करती है । प्रति वर्ष छः सदस्य तीन वर्ष के लिए निर्वाचित होते हैं । इस समिति में उपस्थित सदस्यों के साधारण बहुमत से निर्णय किया जाता है । यह समिति संयुक्त राष्ट्रों के अन्तर्गत काम करती है । और साधारण असेम्बली के आदेशों को मानती है यह समिति आर्थिक सामाजिक सांस्कृतिक, शैक्षणिक तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी मामलों में जनरल असेम्बली या सदस्य राष्ट्रों या विशेष अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं को सिफारिश भेज सकती है । मानव अधिकारों और आधारभूत स्वतंत्रताओंके सम्बन्ध में सिफारिश करना भी इसके कार्य क्षेत्र में है । इन सब विषयों के सम्बन्ध में असेम्बली के सामने नियमों के मसविदे तैयार करके रखना इसका कार्य है ।

इस समिति के अन्तर्गत संयुक्त राष्ट्रीय खाद्य और कृषि संगठन संयुक्त राष्ट्रीय सहायता पुनर्वास संगठन, संयुक्त राष्ट्रीय शैक्षणिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निमार्ण तथा विकास बैंक काम करते हैं अन्तर्राष्ट्रीय नागरिक उड्डयन संगठन और अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का भी इस ही समिति से सम्बन्ध है

आर्थिक और सामाजिक समिती में पहले प्रधान भारतीय प्रतिनिधि श्री रामास्वामी मुदालियर चुने गए थे ।

संयुक्त राष्ट्र और राष्ट्र लीग

कुछ लोग संयुक्तराष्ट्र की सफलता में शंका प्रकट करते हैं । उनके विचार में जिस प्रकार राष्ट्र लीग असफल रही वही संयुक्तराष्ट्रों का हाल होगा । इसमें कोई सन्देह नहीं कि संयुक्त राष्ट्रों में अनेक कमियां हैं । फिर भी राष्ट्र लीग के मुकाबले इसकी स्थिति कहीं अधिक सुदृढ़ है । राष्ट्र लीग में अमेरीका और रूस दोनों ही शामिल नहीं थे संयुक्त राष्ट्र के दोनों ही सबसे बड़े स्तम्भ हैं ।

आज आम जनता में जितना समर्थन संयुक्तराष्ट्रों का प्राप्त है उतना समर्थन उन दिनों में राष्ट्र लीग को नहीं था । यही कारण था कि अमरीकी सीनेट ने राष्ट्र लीग के समझौते को स्वीकार नहीं किया था ।

विभिन्न समस्याएँ

संयुक्त राष्ट्रों के सामने शान्ति सन्धियों, अणु-शक्ति और उपनिवेशों की समस्याएं एक बड़ी बाधा बनी हुई हैं । लेकिन हिन्देशिया, काश्मीर, फिलस्तीन, लेबनान आदि की समस्या को सुलझाने में संयुक्त राष्ट्रों ने एक बड़ी सहायता की है । इसे कौन इन्कार कर सकता है । राजनीतिक प्रश्नों को शीघ्रता से न सुलझा सकने का बड़ा कारण यह है कि संयुक्त राष्ट्रों के पास कोई सेना या शक्ति नहीं है । यही उसकी सबसे बड़ी कमजोरी है । लेकिन वह एक लोकमत तैयार कर सकता है और लोकमत

एक महान शक्ति है। आज संयुक्त राष्ट्रों का मंच लोकमत तैयार करने का एक बड़ा साधन बनगया है। डचों ने हिन्देशिया पर हमला किया। उसके विरुद्ध संयुक्तराष्ट्रों में शिकायत की गई। आखिर विश्व के लोकमत के सामने डचों को झुकना पड़ा और उसके परिणामस्वरूप आज हेग में डचों और हिन्देशियावियों में समझौता हो गया है। लेकसक्सेस या किसी और स्थान पर जब संयुक्त राष्ट्रों का अधिवेशन हो रहा हो उस समय कोई बड़ी लड़ाई कभी नही छिड़ेगी क्योंकि आक्रमणकारी के विरुद्ध विश्व लोकमत तैयार हो जाने में जरा भी देर न लगेगी।

संयुक्त राष्ट्रों ने आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र में महान सफलताऐं प्राप्तकी हैं। उसके खाद्य और कृषि संगठन ने खुराक के उत्पादन और विभाजन में उन्नति की है। उसने अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष द्वारा आर्थिक प्रगति के लिए ऋण देने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार बढ़ाने और राष्ट्रों को विदेशी मुद्रा प्राप्त करनेमें सहायता देने का कार्य किया है। अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर संगठन द्वारा मजदूर और मजदूरी के नियम कायम किये।

संयुक्त राष्ट्रों ने अपने विभिन्न संगठनों द्वारा विभिन्न विषयों के आंकड़े एकत्र करके महत्त्व पूर्ण सिफारिशें की हैं आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रिय सहयोग पैदा करने के लिए संयुक्त राष्ट्रों ने जो कुछ किया वह एक छोटी सफलता नहीं है।

आवश्यकताएं

संयुक्त राष्ट्र संघ की सफलता के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता विश्व नागरिकता की भावना पैदा करना है। जब तक सारे

देश वासी उग्रराष्ट्रीयता और अपनी जातिकी उच्चता में विश्वास करते रहेंगे तब तक हमारे मस्तिस्कों में विश्व नागरिकता की भावना को स्थान नहीं मिल सकता।

संयुक्तराष्ट्रों का शैक्षणिक सांस्कृतिक और वैज्ञानिक संगठन अन्तर्राष्ट्रिय सहयोग की भावना पैदा करने का प्रयत्न कर रहा है उसके कार्यों के विस्तार की सब से अधिक आवश्यकता है भारतने संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना से अब तक इसमें बड़ा महत्वपूर्ण भाग लिया है। और आशा है कि वह इसी प्रकार आगे लेता रहेगा।

हमें यह स्वीकार करना पड़ता है कि संयुक्त राष्ट्रीयसंघ का का वह विशाल भवन ईमानदारी और नेक नियती का एक २ पत्थर रखकर उसे सद्भावना के पक्के मसाले से चुना जायगा। तभी कहीं उसकी सफलता की आशा हम कर सकेंगे उसके लिए त्याग और कठोर श्रम अनिवार्य रूप से करना पड़ेगा। जैसा कि गत चार वर्षों के इतिहास से विदित भी है। भारत संयुक्त राष्ट्रसंघ के प्रत्येक कार्य में सहयोग देता रहेगा। ऐसी हमें पूर्ण आशा है।

मनोहर काश्मीर

२३ वर्ष बाद, १६४० में जब पंडित जवाहरलाल नेहरू फिर काश्मीर गये तो वहां की रमणीक घाटी में उन्होंने इस प्रकार चकित भाव से भ्रमण किया मानों नदियों, घाटियों, झीलों और हिममंडित गिरि-शृंगोंके अनिवर्चनीय सौन्दर्य से आत्म-विस्मित-से हो गए हों, और उनके मुंह से ये उद्गार निकल पड़े: काश्मीर

उस प्रियतमा के मुखचन्द्र के समान है, जो स्वप्न में ही दिखाई पड़ती है, और जागने पर अदृश्य हो जाती है। अब से १० वर्ष पूर्व पंडित नेहरू ने काश्मीर के सम्बन्ध में जो भाव व्यक्त किये थे, उनकी हल्की-सी झांकी इस लेख में दिखाई गई है।

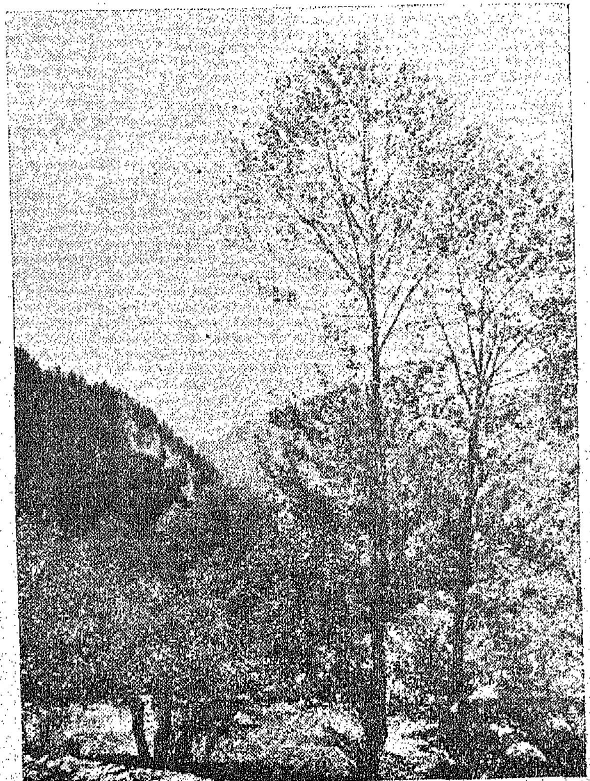
'काश्मीर की भूमि पर पदार्पण करते ही वहां के अपूर्व सौन्दर्य ने मेरे ऊपर जादू का-सा प्रभाव किया। सौन्दर्य-पान से मत्त होकर मेरा शरीर झूमने लगा। मैं आनन्द-विभोर हो गया और प्रमत्त भाव से इधर-उधर घूमने लगा।'

अपने नदियों, झीलों, घाटियों और' वृक्षों की कमनीय सुन्दरता के कारण काश्मीर की भूमि उस दिव्य रूपवती स्त्री के समान दिखाई पड़ती थी, जिसे सांसारिक जन प्राप्त नहीं कर सकते। इस कमनीयता से जब ध्यान हटता था तो कठोर पर्वतों, चट्टानों, गगनचुम्बी हिमाच्छादित गिरिश्रृंगों, हिमनदी और झर्झर ध्वनि करते हुए घाटियों से गिरनेवाले रोमांचकारी निर्झरों का पुरुषोचित सौन्दर्य सामने आजाता था। मेरे सामने जो दृश्य था, वह क्षण-क्षण में परिवर्तित हो रहा था ऐसा मालूम पड़ता था कि प्रकृति कभी मुसकराती है, कभी दुःखी होती है, कभी हंसती है, तो कभी रोती है डल--सरोवर को आच्छादित कर ऊपर उठता हुआ कुहरा ऐसा झिलमिल घूंघट बन जाता था, जिसके भीतर से दूसरी ओर का सौन्दर्य दिखाई दे जाता था। मेघमाला पर्वत-श्रृंग का आलिंगन करने के लिए अपनी भुजाएं बढ़ाती थी, और क्रीड़ारत बालकों की भांति धीरे से नीचे उत्तर आती थी। इस नित्य परिवर्तनशील दृश्य की सुन्दरता को देखकर मैं अपने आपको भूल जाता था और मुझे ऐसा लगता था कि मैं

संज्ञाहीन हो गया हूँ। मुझे अपनी आंखों पर विश्वास न होता था ऐसा प्रतीत होता था कि मैं एक स्वप्न देख रहा हूँ, जो उन आशाओं और अभिलाषाओं की भांति कल्पित था जो हमको जीवित रखती हैं, पर कभी पूरी नहीं होतीं यह दृश्य उस प्रियतमा के मुखचन्द्र के समान था जो स्वप्न में ही दिखाई पड़ती है और जागने पर अदृष्ट हो जाती है।

काश्मीर का जलवायु अनुपम है एक ओर हिमपात होने पर कड़कड़ाती सर्दी दूसरी ओर श्रीनगर जैसे स्थानों में हल्की २ गरमी काश्मीर में बहुत से ऐसे स्वास्थ्य वर्धक स्थान हैं, जहां यात्रियों के लिए विभिन्न प्रकार के आकर्ष है। यहां ऐसे भी बहुत से स्थान हैं जहां साधारण यात्री नहीं पहुँच पाते। ऐसे स्थानों पर प्राय अभीतक मोटर के चलने के लिए सड़कें भी नहीं बनी हैं। किन्तु आशा है काश्मीर घाटी की उन्नति के साथ २ हिम तथा घने बनों से अच्छादित इन दूर दूर के ग्राम्य प्रदेशों में यात्री निकट भविष्य में आसानी से पहुँच सकेंगे। लीदर घाटी हृदय और लीदर और तानिन नदी के संगम पर पहल गांव स्थित है यह एक प्रसिद्ध स्वास्थ्य वर्धक स्थान है। श्रीनगर से इसकी दूरी ५८ मील और समुद्रतल से इसकी ऊंचाई ७०६० फुट जलवायु बड़ा उत्तम तथा मौसम सुहावना रहता है ग्रीष्म काल में विशेष रूप से जून तथा सितम्बर के मध्य में लोग अपने २ डेरे तम्बू लगाकर यहां पर स्वास्थ्य लाभ करते हैं। राज्यक्ष्मा-खांसी तथा आम शारीरिक दुर्बलता के लिए यहां का जलवायु विशेष रूपसे उपयोगी सिद्ध हो चुका है। गुलमर्ग श्रीनगर से २८ मील पश्चिम की ओर तथा समुद्रतल से ८७०० फीट ऊंचाई पर स्थित है। प्राचीन काल में इसको लोग गौरी मार्ग अर्थात्-

महादेव की पत्नी पार्वती का मार्ग कहते थे। १६ वीं शताब्दी में शाहयुसुफ ने इसका नाम बदलकर गुलमर्ग रखदिया था। यह पुष्प वाटिका विशाल संख्या में विशेष रूप से बाहर के आने वाले



गुलमर्ग

यात्रियों को आकर्षित करती है। गुलमर्ग की एक ओर नागापर्वत और दूसरी ओर सम्पूर्ण घाटी का अपूर्व दृश्य है। चारों ओर

परिक्रमा करती हुई सात मील लम्बी सड़क अनुपम प्राकृतिक सौंदर्य की छटा बखेरती है। गुलमर्ग की तलहटी में टनमर्ग स्थित है यहां का जलवायु फेफड़ों के रोगग्रस्त रोगियों के लिए अत्यन्त लाभदायक है यहां यक्ष्मा के रोगियों के लिए एक स्वास्थ्य गृह भी बनाया गया है। सोनमर्ग (शागिल मर्ग) यह श्रीनगर से उत्तर पूर्व की ओर ५२ मील दूर है तथा समुद्र तल से ८७५० फीट ऊंचा है। सिन्ध घाटी में सब से अच्छा स्वास्थ्यप्रद स्थान है जगह रमणीक एवं कैम्पिंग के लिए उपयुक्त है। गन्दरबल सिंध नाले के तट पर स्थित एक छोटासा ग्राम है श्रीनगर से उत्तर की ओर यह १३ मील दूर है। तथा यहां की ५२२० फुट की ऊंचाई है है प्राय: बहुत से यात्री अपने हाउसबोट (घर पानी पर चलने वाले) यहां लाकर रहते हैं।

व्यूह—सन नामका एक झरना है जो कि औषधि का प्रभाव रखने के कारण अपने जल की प्रसिद्धी रखता है। श्रीनगर के दक्षिण में १०० मील की दूरी पर बनिहाल मोटर रोड पर स्थित है यहां का जलवायु अच्छा है पंजाबी लोग प्राय: अपना ग्रीष्मावकाश बिताने यहां आते हैं इसके समीप एक स्वास्थ्य गृह भी है। मानसबल झील के किनारे पर स्थित मानसबल एक छुटियां बिताने का रम्य स्थान है। झील चारों तरफ पर्वतों से घिरी हुई है जलसे भरे प्याले की तरह दिखाई देती है। झील के शान्तजल में पर्वतों का प्रतिबिम्ब पड़ता रहता है। संसारकी सुन्दर तम झीलों और झरनों में से कुछ काश्मीर में हैं। यहां की वूलर-डल अंचार की झीलें विश्व विख्यात हैं। वूलर झील एशिया की सबसे बड़ी झीलों में से एक है। यहां के झरने भी अपने औषधीय गुणों के लिए विख्यात है—चश्माशाही श्रीनगर

से ६ मील दूर है इसका जल अत्यन्त ठन्डा है और इसमें खनिजों के मिश्रण होने से बड़ा पाचक पाया गया है। सन् १६३२ में मु. बाद. शाहजहां ने एक अत्यन्त सुन्दर उद्यान बनवा दिया था। कुक्कर नाग गन्ध युक्त जल के झरनों के लिए प्रसिद्ध है। यह स्थान श्रीनगर से दक्षिण में ४८ मील दूर है। झरनों का जल बड़ी तेजी से पर्वत में से निकलता है। जोकि प्लूरसी-फेफड़ों की झिल्ली में पानी आना दमा के लिए बड़ा प्रसिद्ध है। श्रीनगर ३६ मील की दूरी पर अच्छाबल झरने का जल विशेष रूप में मूत्राशय, गुर्दा, तथा पेट के रोगों के लिए विशेष लाभदायक है। जहांगीर ने इस स्थान पर एक उद्यान भी बनवा दिया था। इसी प्रकार एक सुन्दर तथा विशालकाय स्रोत वेरी नाग है जो कि श्रीनगर से ५० मील की दूरी पर पीर पंजाल पर्वत के ठीक नीचे श्रीनगर जम्मू रोड के जम्मू से जाते हुए बांये हाथ को



झेलम नदी (वितस्ता) का उद्गम स्थान वेरी नाग।

पड़ता है स्थित है। यही स्रोत प्रसिद्ध नदी झेलम का उद्गम स्थान भी है यहीं से काश्मीर की तराई शुरू होती है।

कला कौशल

जब मैं चीन गया था तो वहां के कला-कौशल को देखकर चकित रह गया था भारत चिरकाल से अपने कला-कौशल के लिए विख्यात है। परन्तु चीन का कला-कौशल मुझे भारत के कला-कौशल से अधिक अच्छा लगा। भारत में केवल काश्मीर ही ऐसा देश है, जो कला-कौशल में चीन की बराबरी कर सकता है। काश्मीरी कलाकारों द्वारा निर्मित वस्तुओं को देख कर आनन्द मिलता था और छूकर चित्त प्रसन्न हो जाता था।

काश्मीर सैकड़ों वर्षों से अपने शाल-दुशालों के लिए मशहूर है। परन्तु दुर्भाग्य से विदेशी प्रभुत्व के कारण यह कला शिथिल हो गई और सुन्दर काश्मीरी शाल-दुशालों का स्थान पश्चिम की बनी असुन्दर वस्तुओं ने ले लिया। काश्मीर की अन्य कलाओं का भी यही हाल हुआ। धीरे धीरे शाल-दुशालों का व्यापार चौपट हो गया, केवल इने-गिने व्यापारी रह गये, जो देश में इधर-उधर घूम फिरकर अपना माल बेच लेते थे। भारत के धनी-मानी प्रायः विदेशी माल ही खरीदना पसन्द करते थे।

राष्ट्रीय आंदोलन का प्रभाव

भारत के राष्ट्रीय आदोलन का कई क्षेत्रों में बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। केवल हाथ की बनी वस्तुओं के प्रयोग पर हमारे द्वारा जोर दिए जाने के कारण कला-कौशल की बहुत उन्नति हुई, और अनेक नष्टप्राय हस्त-उद्योग पुनर्जीवित हो गये, इस नई

लहर का प्रभाव काश्मीर पर भी पड़ा और धीरे-धीरे भारत में उसकी वस्तुओं के लिए मंडी तैयार हो गई। अखिल भारतीय कताई-संघ की काश्मीर शाखा ने भारत भर के सैकड़ों 'विक्रय-केन्द्रों को माल भेजना आरम्भ कर दिया। परन्तु उन्नति की गति बहुत धीमी रही। फिर भी इससे अनेक कुशल बेकारों को काम मिल गया।

दयनीय दरिद्रता

जब-जब मैं काश्मीर की सुषमा का चिन्तन करते-करते आनन्द-विभोर हो जाता था, तब-तब वहां के निवासियों की दयनीय दरिद्रता को देखकर मेरा स्वप्न अचानक भंग हो जाता था, और मेरे हृदय धक-धक करने लगता था। मुझे यह सोच-कर आश्चर्य होता था कि जब प्रकृति ने इन्हें इतना कुछ दे रक्खा है, तब ये इतने निर्धन क्यों हैं। मुझे यह तो पता नहीं कि काश्मीर में अन्य प्राकृतिक साधन क्या-क्या हैं, परन्तु सम्भावना यह है कि यह उसकी कमी नहीं और उसके लिए तुरन्त पूर्ण पर्यवेक्षण की आवश्यकता है।

पर्याप्त साधन

परन्तु यदि अन्य किसी प्राकृतिक साधन का पता न भी लगे, तब भी काश्मीर के वर्तमान साधन, इतने पर्याप्त हैं कि यदि इनकी योजना और नियम के अनुसार एकी करण एवं सदुपयोग किया जाय तो लोगों का जीवन-मान सरलता से ऊंचा उठाया जा सकता है। यहां बिजली इतनी सस्ती है कि छोटे बड़े सभी प्रकार के उद्योग आरम्भ किये जा सकते हैं। घरेलू उद्योगों और दस्तकारी की उन्नति के लिए यहां बहुत बड़ा क्षेत्र है।

मैंने काश्मीर को जाग्रत और उसके निवासियों को चैतन्य पाया। पिछले बीस वर्षों में भारत के अनेक भागों में ऐसी जागृति देख चुका था, परन्तु एक देशी रियासत में यह एक असाधारण घटना थी। आत्म-निर्भरता और आत्म-शक्ति की भावना काश्मीर में बहुत आगे बढ़ी हुई थी और मेरा विश्वास है कि इस नवोपार्जित शक्ति के पीछे अनुशासन की भावना भी थी। सौभाग्य से इस आन्दोलन के कर्णधार शेखअब्दुला थे जो एक अत्यन्त लोकप्रिय और दूरदर्शी नेता थे।

यही नहीं, काश्मीर सैलानियों के लिए एक आदर्श प्रदेश है। यह भारत का ही नहीं, समस्त एशिया महाद्वीप का क्रीड़ास्थल बन सकता है।

जिस प्रकार यूरोप और अमरीका में सर्वत्र युवक—वासालय खुल गये हैं, उसी प्रकार काश्मीर में भी खोले जा सकते हैं। इनके लिए काश्मीर आदर्श स्थान है। राज्य भर में युवक—वासालय बन जाने चाहिये, और नवयुवकों एवं नवयुवतियों को वहां का पूरा ज्ञान प्राप्त कराने की दृष्टि से पर्वतों और घाटियों में पैदल चलने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

श्रीनगर-सड़क

दूसरे दिन प्रातःकाल हमने श्रीनगर से जम्मू की ओर प्रस्थान किया। सड़क घाटी को छोड़कर पीर पंजाल पर चढ़ने लगी। हम ज्यों-ज्यों ऊपर चढ़ते जाते थे, हमारे चारों ओर का दृश्य विस्तृत होता जाता था। हम पहाड़ी सुरंग के मुख के समीप खड़े हो गये और एक बार फिर नीचे तराई पर दृष्टि डाली। इतिहास और गीतों में प्रसिद्ध वही अपूर्व सौन्दर्यमयी काश्मीर

की तराई हमारे सामने थी। इसका एक भाग कुहरे से ढंका हुआ था।

हिमाच्छादित गिर-शिखरों पर हल्की रोशनी पड़ रही थी और नीचे तराई में दूर पर बहते हुए झरनों के पानी की मन्द-ध्वनि सुनाई पड़ रही थी। हम मूकभाव से विदाई ली और और अनमने—से आगे बढ़े। अन्धेरी सुरंग में प्रवेश करने के बाद हम ऐसे प्रदेश में पहुँचे जो प्रकृति का इतना दुलारा न था।

काश्मीर की भाषा

काश्मीर के ८० मील लम्बे और ४० मील चोड़े इलाके और कुछ थोड़े से उसी के एक दम समीप के पहाड़ी भाग में बाली जाने वाली भाषा (काश्मीरी) दारद समूह की एक अत्यन्त दूर दक्षिणी भाषा है। इसी दारद समूह की एक भाषा (शिना) है जो कि गिलगित के आसपास, औ दूसरी कोहिस्तानी है जोकि गिलगित नदी के संगम से लेकर सिन्ध नदी के हिन्दुस्तान के मैदान में पहुँचने से पहिले सिन्ध के दोनों किनारों पर बोली जाती है। इसी प्रकार खोवार भाषा जो कि चित्राल में बोली जाती है इसी काश्मीरी भाषा की सहोदरा है इसी के साथ काफिरीस्तान की बशगाली भी समझनी चाहिए। इन उपर्युक्त सब भाषाओं में केवल काश्मीरी ही एक ऐसी है जिसमें कुछ थोड़ा बहुत साहित्य प्राप्त है इसी की अपनी वर्णमाला भी है। इन समान कुटुम्बीय भाषाओं से सारा उत्तर पश्चिमी, हिन्दुकुश और कराकोरम के बीच का भारत घिरा हुआ है। प्राय सभी दारदिक भाषाएं आर्यजाति की है न तो वे इरानी जाति की हो सकती हैं

और नहीं इन्डो आर्यन जाति की क्योंकि उन्होंने यद्यपि अपना एक अलग ही ध्वनि प्रकार उन्नत किया है तथापि वह एक अत्यन्त प्राचीन अवस्था में आज भी विद्यमान है जिनका कि भारत और मध्य पूर्व में एक प्रकार से बहुत काल पूर्व ही अन्त हो चुका है। इस तरह ये भाषाएं संस्कृत के पश्चात् की भाषा की उत्तरोत्तर उन्नति की परिचायक होते हुए भी इरानी भाषा समूह से पूर्व की जान पड़ती हैं। इस समय तो लगभग सारा ही स्वरूप दारदिक भाषा का न रहकर एक सम्मिलित सा रूप बन गया है क्योंकि संस्कृत भाषा कई सौ वर्षों तक काश्मीर की प्रधान भाषा रही है अतः काश्मीर की शब्दावली और उसका व्याकरण प्राय भारतीय ही बन गया है। काश्मीरी के बोलने के प्रकार भी एक दो ही हैं जिनमें किस्टवारी दक्षिण पश्चिम में किस्टवार में और पोगुल या रामबानी बनिहाल से दक्षिण में प्रयोग में लाये जाते हैं

काश्मीर का यातायात

काश्मीर की प्राकृतिक बनावट यहां के यातायात की एक बड़ी कठिन समस्या है। स्वयं काश्मीर तराई में तो सड़कों के अलावा झेलम नदी पर्याप्त रूप से यात्री एवं माल असबाब इधर उधर ले जाने में सहायक होती है परन्तु काश्मीर से भारत को मिलाने वाले और काश्मीर रियासत के अन्यदूर प्रदेशों में आने जाने के मुख्य मार्ग बहुत थोड़े से हैं। एक सड़क श्रीनगर से बारह मूला होती हुई झेलम नदी के किनारे २ रावल पिण्डी जिले के मरी पर्वत पर और दूसरी इसी में से मुजफराबाद के पास से एवटाबाद जिला हजारा सीमाप्रान्त में मिल गई है। तीसरी मुख्य सड़क श्रीनगर से अनन्तनाग (इस्लामाबाद) होती हुई पीर पञ्जाल से ६२०० फुट पर होती हुई

जम्मूको २०-२५ वर्ष हुए बनाई गई है। केवल यही दोनों सड़कें ऐसी हैं जहां मोटर इत्यादि सुविधा के साथ चल सकते हैं इनके अतिरिक्त गिलगित को राजदिगन दर्रे ११७०० फुट और बुर्जिल दर्रे ११५०० फुट पार करके जाना पड़ता है। लद्दाख में लेह जाने के लिए जोजिला दर्रे १०००को पार करना पड़ता है। इसी प्रकार एकमार्ग श्रीनगर से सोपियान और वहां से राजोरी भिम्बर होकर गुजरात को भी आता है मगर बाद के सब मार्ग पैदल और घुड़सवारके लिए ही उपयुक्त हैं। जम्मू से कुछ वर्षों से एक सड़क पुञ्छ को जिसे काश्मीर की सड़क से उड़ी पर मिलादिया गया है बन गई थी। और अबतो मुख्य २ सड़कों का निर्माण बड़ी तेजी से हो रहा है। एक सड़क जम्मू से साम्बा होकर कठुवे को पठान कोट से मिलाती थी जिसको भारत सरकार ने ३ करोड़ रुपया खर्च करके अभी दो वर्ष में बनाया है। इसी तरह एक मोटर की कच्ची सड़क गटोत के स्थान से भद्रवाह जो कि ऊधमपुर जिले की तहसील है बनाई गई है दूसरी ऊधमपुर से रामनगर को बनाई गई थी। यह सब अभी तक सब मौसमों में प्रयोग आ सकने के लायक नहीं हैं।

डाकखानों का प्रबन्ध सारी रियासत में पहिले तो अपना ही था परन्तु बाद में सारे भारत की तरह यहां भी भारतीय डाकखाने बना दिये गए थे। इस समय लगभग सारी रियासत में डाकखानों का जाल सा बिछ गया है। परन्तु पाकिस्तान बनने के बाद काश्मीर पर हमला होजाने से उत्तर पश्चिमी इलाके में काफी व्यवस्था बिगड़ गई है।

काश्मीरी भाषा का साहित्य

काश्मीरी भाषा में बहुत ही कम साहित्य पाया जाता है

जैसा कि अन्यत्र बताया गया है काश्मीर की प्राचीन भाषा संस्कृत ही थी अतः प्राचीन विद्वानों की लिखी हुई सारी पुस्तकें संस्कृत में मिलती हैं। उदाहरण के लिए श्रीअभिनवगुप्त पादाचार्य का ध्वन्यालोक, कैयट की महाभाष्य पर प्रदीप व्याख्या मम्मट का काव्यप्रकाश कल्हणकी, राजतरङ्गिणी, श्रीजैनराज का राजावली पटक इत्यादि सभी पुस्तकें संस्कृत भाषा में हैं। काश्मीरी भाषा की सब से प्राचीन प्रसिद्ध पुस्तक लल्ला देवी एक स्त्री लेखिका द्वारा लिखित मिलती है जिसमें शिवमत से सम्बन्ध रखने वाली कविताओं का संग्रह है। इसके अतिरिक्त एक और भी शिवपरिणय नाम की पुस्तक कृष्ण राजानक ने लिखी है जिसमें कि शिव पार्वती का विवाहोत्सव वर्णित है। काश्मीरी लोग प्राचीन काल से शिव के उपासक रहे हैं। बीच में बुद्ध और फिर हिन्दू एवं मुसलमानी सभ्यता का प्रभाव उनके साहित्य, भाषा एवं बोलने की ध्वनि तक पर स्पष्ट दिखाई देता है। मुसलमानों के शासन काल में परसियन भाषा का प्रभाव बढ़ा और आज तक वह सारे ही हिन्दू एव मुसलमानों पर प्रभुत्व स्थापित किये हुए हैं। मगर क्योंकि उर्दू लिपी कहिए या परसियन लिपी में ऊर्दू भाषा कहिए समानता रखने के कारण काश्मीर के लोग हिन्दुस्तानी से परिचित हैं। अब तो वर्त्तमान सभ्यता के आधीन बहुत से काश्मीरी अंग्रेजी भाषा के अच्छे विद्वान बन गये हैं। बहुत सी पुस्तकें अंग्रेजी में काश्मीरी विद्वानों द्वारा लिखी गई है।

काश्मीर का कला व कौशल

प्राचीन काल से काश्मीर अपने प्राकृतिक सौन्दर्य और नाना प्रकार की कलाओं के लिए प्रसिद्ध रहा है। यह स्वाभाविक

भी है कि ऐसी सुन्दर और सुविधा सम्पन्न भूमि ने अवश्य उन कलाकारों और विद्वानों को जन्म दिया होगा जिनका नाम हमें आज भी काश्मीर के प्राचीन गौरव की याद दिला देता है। काश्मीर की कला के उदाहरण वहां की जनता की आन्तरिक कलात्मक प्रवृत्तियों तथा भावनाओं के ही प्रतीक हैं केवल इतना ही नहीं वह कृतियां काश्मीर निवासियों की पारस्परिक स्नेह और ऐक्य की भावना की भी अभिव्यक्ति कराती हैं काश्मीर की घाटी में ऐतिहासिक भवन निर्माण कला के अनेकों अवशेष यत्र तत्र बिखरे हुए पड़े हैं। काश्मीर के रहने वाले ही नहीं वहां पर जो भी शासक जिस काल में गया उसने वहां कोई न कोई अपनी नवीन कला का प्रदर्शन किया। अशोक के काल से अब तक के शासकों के प्राय: सभी के कुछ न कुछ चिन्ह काश्मीर में मिलते हैं। अशोक के कालका श्रीनगर से ३-४ मील एक स्थान खण्डहररूप में पड़ा है जहां से काश्मीर के बहुत सुन्दर दृश्यों को देखा जा सकता है इसका नाम पान्डरथन है। इसी से तीन मील आगे काश्मीर की तरफ को एक बहुत सुन्दर मन्दिर है इसी प्रकार वनियार पटन में विशालकाय मन्दिरों के खंडहर पड़े हैं। न केवल मन्दिर, सिन्ध और झेलम नदी के संगम पर एक विशाल नगर के खण्डहर शादीपुर के पास पड़े हैं। कनिष्क के समय का कलात्मक दिग्द-दर्शन हारवान के पास किया जा सकता है। यहीं पर प्रसिद्ध बौद्ध नागार्जुन रहा करता था।

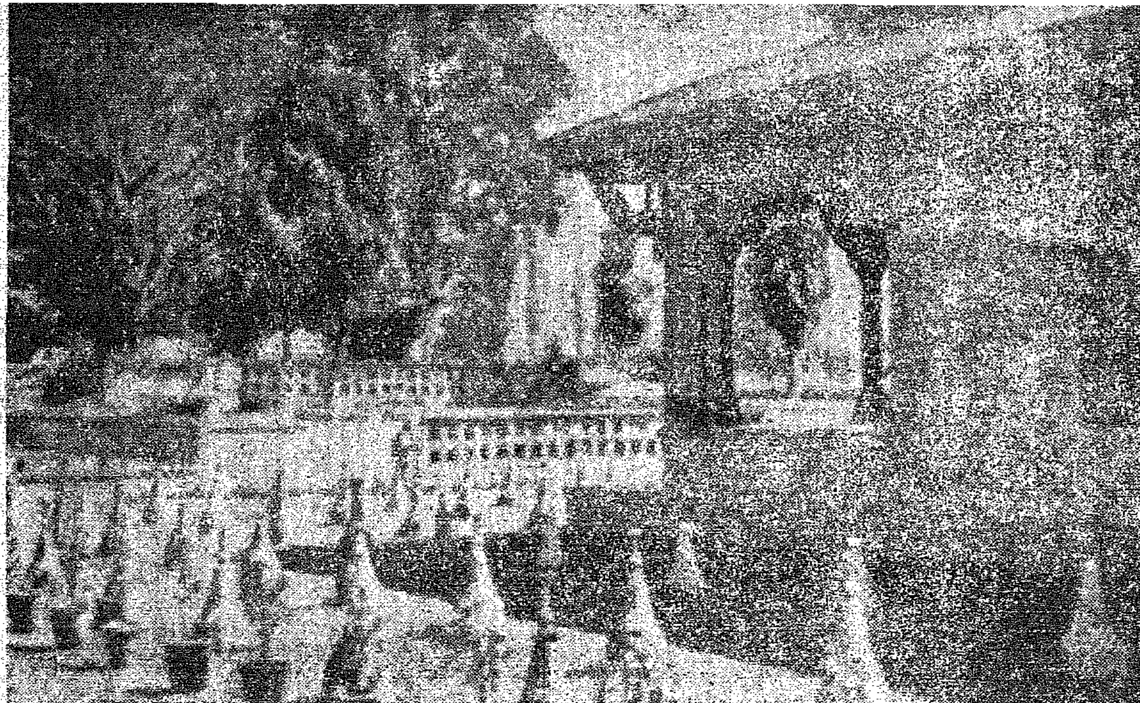
ललितादित्य के समय का मार्त्तण्ड में सूर्य का मन्दिर संसार के सारे प्रसिद्ध भवनों से भी कहीं अच्छे स्थान पर बनाया गया था आज भी सिकन्दर के उस मन्दिर को लगा तार महीनों में आग लगा कर नष्ट कर देने पर भी उसके पत्थरों से उस मन्दिर

की गुरुता का पता लग सकता है। महाराज अवन्तिवर्मा के काल के भवन पामपुर और अवन्तिपुर में देखे जा सकते हैं। मुगल काल से पूर्व काश्मीर की कलात्मक कृतियों में ग्रीक और बुद्ध सभ्यता का बहुत अधिक प्रभाव देखने को मिलता है। मुसलमानों के काल में भी पर्याप्त रूप से स्थापत्य कला ने उन्नति की परन्तु बहुत से स्थान ऐसे भी हैं जो कि परिवर्तन करके इस्लाम धर्म के अनुकूल बनाये गये हैं। इनमें से शाह हमदान की शाही मस्जिद भी एक ऐसा ही स्थान है। यह केवल मुसलमानों के लिए एक धार्मिक पूजा के स्थान के रूप में मस्जिद बना दी गई थी, किन्तु यह मस्जिद बौद्ध भवन जैसी प्रतीत होती है। शाहहमदान की इसी मस्जिद के सामने झेलम नदी के तट पर साम्राज्ञी नूरजहां ने पत्थर की मस्जिद बनवाई थी। जिसकी पत्थर की बनी हुई महराबों पर भी यूनानी और बौद्ध भवन निर्माण कला का प्रभाव स्पष्ट दिखायी देता है। इसी तरह १४ वीं शताब्दी में सिकन्दर मूर्ति भञ्जक द्वारा निर्मित जामा मस्जिद तक में मस्जिद की मीनारों और स्तम्भों पर भारतीय भवन निर्माणकला की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। पूर्वोक्त वक्तव्य की पुष्टि में अनेकों मकबरे और भवन उद्धृत किये जा सकते हैं। झेलम नदी पर स्थित १५ वीं शताब्दी के जनप्रिय शासक जैनुल अबादीन की माता का मकबरा हिन्दुओं और मुसलमानों के लिए समान रूपसे महत्व रखता है। यदि किसी हिन्दू के घर में चेचक का प्रकोप हो तो इसी मकबरे की ईंटें घरमें लाकर रक्खी जाती हैं। हिन्दू लोग इन ईंटों में व्याधि निवारण की शक्ति मानते हैं। मुसलमानों के लिए भी इस मकबरे का बड़ा धार्मिक महत्व है। आज भी हिन्दू और मुसलमानों के चुने हुए गीतों में जैनुल अबादीन की राजा के रूप

में बड़ी प्रसंसा वर्णन की जाती है काश्मीर के बहुत से लोग तो इस को किसी हिन्दू तपस्वी का अवतार तक मानते हैं। इस मक़बरे के निर्माण में मिश्र कला का विशेष रूप से आश्रय लिया गया है। किन्तु बहुत से स्थानों पर भारतीय प्रभाव भी स्पष्ट झलकता है। इस प्रकार काश्मीर की सभी धार्मिक अथवा सामाजिक भवन कृतियों में न केवल हिन्दू व मुसलमान कलात्मक विशेषताओं का बल्कि यूनानी, बौद्ध और इरानी इत्यादी परम्परागत सभ्यताओंका भी सम्मिश्रण प्रतीत होता है। झेलम नदी के दक्षिण की तरफ एक भवन परीमहल नाम से प्रसिद्ध है जिसमें उदारचेता शाहज़ादा दाराशिकोह ने ज्योतिष का विद्यालय दोनों ही हिन्दू व मुसलमान के ज्ञान संचय के लिये समान रूप से यह संस्था खोली थी।

काश्मीर भूमि में अनेकों उद्यान भी इसी पूर्वोक्त बात की पुष्टि करते हैं। यह उद्यान विशेष रूप से प्रकृतिप्रिय मुगल शासकों की कृतियां हैं। अकबर के शासनकाल में काश्मीर ज्यों ही भारतीय शासन का अंग बना उसने एक किला हरि पर्वत पर ठीक डल झील के किनारे पर बनवाया था। जो कि अन्य मुगल कालीन भारतीय किलों से बनावट में कुछ भिन्नता रखता है।

श्रीनगर से ६ मील दूर डल झील के तट पर विशाल प्रिय जहांगीर शालीमार बाग और उसके प्रधान मन्त्री आसफखां ने उससे २ मील हटकर निशात बाग बनवाये थे। यह दोनों ही उद्यान सुन्दरता के सर्वोत्कृष्ट उदाहरण बन सकते हैं इन उद्यानों में बौद्ध हिन्दू व मुस्लिम परम्पराओं का अद्भुत सम्मिश्रण दिखाई देता है। इन्हीं बागों की पानी की पक्की नालियों की बनावट में यह विशेषता पाई जाती है कि प्राकृतिक स्रोतों से इनका सम्बन्ध इस प्रकार किया गया है कि यह नालियां कभी



शालीमार गार्डन

तीव्र और कभी मन्थर गति से निरन्तर बहती रहती हैं। फिर यही नालियां अपना प्रवाहित जल बड़े २ पक्के जलाशयों में पहुंचा देती है जिनमें से आधुनिक प्रकार के नलों के द्वारा बहुत से फौव्वारे बनाये गये हैं। यही नहीं इन बागों की फूलों की क्यारियां और उनके बीच २ के घास के स्थानों में भी मुगल बादशाहों ने बौद्ध और जैन परम्पराओं का अनुसरण करते हुए निर्माण कराया है। इन नालियों के किनारे पर पंक्ति में लगे हुए गुलाब पुष्पों के झुरमुट नार्गिश हिना खशखाश और बहुत सी चुनी हुई किस्मों के फूलों के पौधे लगाये गये हैं। बागों की बाहरी चार दीवारी के समीप और बीच में रिक्त स्थानों पर भी किनारे किनारे छायादार और शीतलता व शान्ति प्रदान करने वाले चिनार के वृक्ष लगाये गये हैं। यहां के चिनार भारत में काश्मीर के अतिरिक्त किसी भी अन्य पहाड़ी प्रदेश तक में नहीं पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त इन वर्गाकार बैठने के उपयोग में आने वाले घास के मैदानों में पुष्पों के पौधों के साथ २ सेब, आड़ू, खुरमानी बग्गूगोशा ग्लाश इत्यादिक फलों के वृक्ष भी लगाये हुए हैं। एक साथ फूलों और फलों के बाग लगाने की प्रथा में निश्चय ही हिन्दू और इस्लामी प्रभाव की झलक प्रतीत होती है। समस्त एशिया निवासियों में फलों के बाग लगाना एक जीवन की व्यावहारिक आवश्यकता समझी जाती थी। और प्राचीन काल के भारतीयों को पुष्पों का बड़ा महत्व था निशात बाग में एक दूसरे के ऊपर बने हुए १२ चबूतरे सम्भव हैं कि हिन्दुओं की १२ राशियों के प्रतीक हों यदि यह वस्तु स्थिति है तो निशात के यह बारह चबूतरे हिन्दू प्रभाव के स्पष्ट उदाहरण हैं। इसी तरह वेरीनाग बाग में बने हुए मेहराब के अन्दर के

मन्दिर से यह प्रतीत होता है कि यह बाग भी हिन्दू एवं मुसलमान दोनों ही की कलाओं का दिग्दर्शन है। मानसबल उद्यान में भी अनेकों हिन्दू काल के अवशेष प्राप्त हुए हैं जो कि भवन निर्माण कला और व्यवहारिक जीवन सम्बन्धी हिन्दुओं तथा मुसलमानों के समन्वयात्मक दृष्टिकोण के द्योतक ही नहीं अपितु प्रति पादक भी हैं।

केवल यहीं नहीं काश्मीर भूमि प्रत्येक ही दिशा में नाना-प्रकार की कला, और कौशलों को जीवन व प्रोत्साहन देती रही है। जिस प्रकार किसी समय यह विद्वानों का प्रधान केन्द्र था उसी भांति बहुत काल से नवीन २ कलाओं के आविर्भाव का भी यही प्रधान केन्द्र रहता रहा है यहां कागज की भिन्न भिन्न प्रकार की रंग बिरंगी वस्तुएं जिन्हें (पेपर मसी) कहते हैं बनती हैं। इनसे प्राय भवनों के अन्तरिम भाग को सजाने का काम लिया जाता है और इसी कारण यह वस्तुएं अपनी सुन्दरता के लिये विदेशों तक में प्रसिद्ध हैं। काश्मीर कला कार को उसके चारों ओर बिखरी हुई प्रकृति की अनुपम शोभाश्री प्रेरणा देती रहती है। इसी कारण काश्मीरी कला हर दिशा में सजीव होउठी है। काश्मीर में पैदा हुई भिन्न भिन्न प्रकार की कीमती लकड़ियों पर किया हुआ हाथी दांत का काम और तांबा चांदी इत्यादि धातुओं पर की हुई रंग बिरंगी नक्काशी भी विशेष रूप से सुन्दर होती है।

इस प्रकार काश्मीरी कला सभी क्षेत्रों में अनेक परम्पराओं का समन्वय होने के साथ २ एक विशेष नवीनता भी रखती है वह है यह कि युगों से चले आने वाले इस कला सम्बन्धी साम-

जस्य और ऐक्य से वहां के हिन्दुओं और मुसलमानों के जीवन भी उसी प्रकार ओत प्रोत हैं। जिसप्रकार उनकी कला प्रकृति के सौन्दर्य से ओत प्रोत है। उदाहरण के लिए आप किसी भी काश्मीरी कारीगर के कोई भी कलात्मक कार्य को देखें वह आपके बिना बताए ही उसकी सुन्दरता को द्विगुणित करने वाले सुझाव आपके सामने पेश करेगा। वह नहीं चाहता कि बनकर समाप्त होने पर कोई व्यक्ति उसकी बनाई वस्तु पर टीका करके यह कह सके कि इसमें यह जरासा काम बाकी रहगया और यह जरासा और हो सकता था। काश्मीर की सरकारी प्रदर्शनालय में एक कारीगर के हाथका बना हुआ पश्मीने का शाल जिसमें कि काश्मीर की तराई का सारा नक्शा नदी, नालों, पहाड़ों और जङ्गलों वह बस्तियों के सहित बुनाई में दिया गया है एक प्रकार से वहां की कला का प्रतिनिधी कहा जा सकता है। यही नहीं अनेकों प्रकार के ऐसे कालीन और शाल बनाए जाते हैं जहां आपका फोटो उसकी बुनाई के द्वारा प्रदर्शित हो सकता है। वस्त्रों पर कढ़ाई का काम जैसा सुन्दर काश्मीरी पुरुष करते हैं शायद ही हाथों के द्वारा संसार के किसी कोने के आदमी करते हों। भारत से भी बहुत सी वस्तुएं सिर्फ काम करने के लिये काश्मीर भेजी जाती हैं। मिट्टी के भिन्न आकारों के पशु पक्षि और आदमियों तक को एक सजीव बनाकर दिखाया जा सकता है परन्तु यह भी विशेषरूप में काश्मीर के कारीगर द्वारा।

★ समाप्तम् ★